॥ श्रीहरिः ॥

1183

संक्षिप्त

नारदपुराण

(सचित्र, मोटा टाइप) केवल हिन्दी

गीताप्रेस गोरखपुर

GITA PRESS, GORAKHPUR [SINCE 1923]

गीताप्रेस, गोरखपुर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

॥ श्रीहरिः ॥

1183

संक्षिप्त

नारदपुराण

सचित्र, मोटा टाइप

गीताप्रेस, गोरखपुर

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

॥ श्रीहरिः ॥

1183

संक्षिप्त

नारदपुराण

(सचित्र, मोटा टाइप, केवल हिन्दी)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

1183 Naradpuran_Section_1_1_Front In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सं० २०७६ अठारहवाँ पुनर्मुद्रण ४,०००
कुल मुद्रण ८२,५००

❖ मूल्य—₹ २२०
(दो सौ बीस रुपये)

प्रकाशक एवं मुद्रक—
गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५
(गोबिन्दभवन-कार्यालय, कोलकाता का संस्थान)
फोन : (०५५१) २३३४७२१, २३३१२५०, २३३१२५१
web : gitapress.org e-mail : booksales@gitapress.org
गीताप्रेस प्रकाशन gitapressbookshop.in से online खरीदें।

1183 Naradpuran_Section_1_1_Back
In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

॥ श्रीहरिः ॥

निवेदन

भारतीय संस्कृत-साहित्य अनन्त ज्ञान-गरिमासे परिपूर्ण है। उसके असीम ज्ञान-सिन्धुसे उपलब्ध हुए पुराणोंको अमूल्य रत्नराशिके रूपमें अत्यन्त सम्मान और गौरवशाली स्थान प्राप्त है। इसीलिये पुराणोंके सेवन (श्रवण, अनुशीलन)-को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है।

गीताप्रेसने 'कल्याण' के माध्यमसे विशेषाङ्कोंके रूपमें समय-समयपर अनेक पुराणोंको जनहितमें प्रकाशित किया है। इन्हें सर्वजन-सुलभ करानेके उद्देश्यसे लागतसे भी कम मूल्यमें इनका केवल सरल हिन्दी-अनुवाद उपलब्ध किया गया। पश्चात् श्रद्धालु पाठकोंकी माँगपर इधरमें कुछ वर्षोंसे इनका पुनर्मुद्रण भी हुआ है और आगे भी इस क्रमको बनाये रखनेका विचार है।

'कल्याण'-वर्ष २८वेंके विशेषाङ्कके रूपमें 'नारद-विष्णुपुराणाङ्क' (सन् १९५४ ई० में) प्रकाशित हुआ था। बादमें यह पुनर्मुद्रित भी किया गया। 'नारदपुराण' तथा 'विष्णुपुराण' एकहीमें संयुक्त होनेसे इसका कलेवर पर्याप्त बड़ा (लगभग आठ सौ पृष्ठोंका) था। फलस्वरूप इसका अध्ययन समयसाध्य और पाठकोंके लिये असुविधाजनक था। अतः इसे ध्यानमें रखते हुए प्रेमी पाठकोंके सुविधार्थ इसे अब अलग-अलग दो भागोंमें प्रकाशित करनेका विचार किया गया है। तदनुसार यह केवल 'नारदपुराण' आप सबकी सेवामें प्रस्तुत है।

'नारदपुराण' में कल्याणकारी श्रेष्ठ विषयोंका उल्लेख है। इसमें वेदोंके छहों अङ्गों—(शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छन्द-शास्त्रों)-का विशद वर्णन तथा भगवान्‌की सकाम उपासनाका भी विस्तृत विवेचन है। भगवान्‌की सकाम आराधना भी उत्तम है। सकाम उपासक धीरे-धीरे निष्काम

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

भाव बननेपर भगवद्भक्तिके उत्कर्षके बाद अन्तमें भगवत्प्राप्ति कर लेनेमें समर्थ हो जाता है। आशा है आत्म-कल्याणकामी पाठकों और सभी श्रद्धालु, जिज्ञासुजनोंके लिये प्रस्तुत इस 'नारदपुराण' का अध्ययन विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

अतः सभी भगवत्प्रेमी महानुभावों और श्रद्धालु पाठकोंसे हमारा विनम्र निवेदन है कि इसके अधिकाधिक अध्ययनसे विशेष पारमार्थिक लाभ उठाना चाहिये।

—प्रकाशक

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

श्रीहरिः

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
पूर्वभाग	
प्रथम पाद	
१- सिद्धाश्रममें शौनकादि महर्षियोंका सूतजीसे प्रश्न तथा सूतजीके द्वारा नारदपुराणकी महिमा और विष्णुभक्तिके माहात्म्यका वर्णन	१७
२- नारदजीद्वारा भगवान् विष्णुकी स्तुति	२१
३- सृष्टिक्रमका संक्षिप्त वर्णन; द्वीप, समुद्र और भारतवर्षका वर्णन, भारतमें सत्कर्मानुष्ठानकी महत्ता तथा भगवदर्पणपूर्वक कर्म करनेकी आज्ञा	२४
४- श्रद्धा-भक्ति, वर्णाश्रमोचित आचार तथा सत्सङ्गकी महिमा, मृकण्डु मुनिकी तपस्यासे संतुष्ट होकर भगवान्‌का मुनिको दर्शन तथा वरदान देना	२९
५- मार्कण्डेयजीको पिताका उपदेश, समय-निरूपण, मार्कण्डेयद्वारा भगवान्‌की स्तुति और भगवान्‌का मार्कण्डेयजीको भगवद्भक्तोंके लक्षण बताकर वरदान देना	३४
६- गङ्गा-यमुना-संगम, प्रयाग, काशी तथा गङ्गा एवं गायत्रीकी महिमा	३८
७- असूया-दोषके कारण राजा बाहुकी अवनति और पराजय तथा उनकी मृत्युके बाद रानीका और्व मुनिके आश्रममें रहना	४१
८- सगरका जन्म तथा शत्रुविजय, कपिलके क्रोधसे सगर-पुत्रोंका विनाश तथा भगीरथ-द्वारा लायी हुई गङ्गाजीके स्पर्शसे उन सबका उद्धार	४४
९- बलिके द्वारा देवताओंकी पराजय तथा अदितिकी तपस्या	५०
१०- अदितिको भगवद्दर्शन और वरप्राप्ति, वामनजीका अवतार, बलि-वामन-संवाद, भगवान्‌का तीन पैरसे समस्त ब्रह्माण्डको लेकर बलिको रसातल भेजना	५२
११- दानका पात्र, निष्फल दान, उत्तम-मध्यम-अधम दान, धर्मराज-भगीरथ-संवाद, ब्राह्मणको जीविकादानका माहात्म्य तथा तडाग-निर्माणजनित पुण्यके विषयमें राजा वीरभद्रकी कथा	५९
१२- तडाग और तुलसी आदिकी महिमा, भगवान् विष्णु और शिवके स्नान-पूजनका महत्त्व एवं विविध दानों तथा देवमन्दिरमें सेवा करनेका माहात्म्य	६४
१३- विविध प्रायश्चित्तका वर्णन, इष्टापूर्तका फल और सूतक, श्राद्ध तथा तर्पणका विवेचन	६८
१४- पापियोंको प्राप्त होनेवाली नरकोंकी यातनाओंका वर्णन, भगवद्भक्तिका निरूपण तथा धर्मराजके उपदेशसे भगीरथका गङ्गाजीको लानेके लिये उद्योग	७३
१५- राजा भगीरथका भृगुजीके आश्रमपर जाकर सत्सङ्ग-लाभ करना तथा हिमालयपर घोर तपस्या करके भगवान् विष्णु और शिवकी कृपासे गङ्गाजीको लाकर पितरोंका उद्धार करना	८१
१६- मार्गशीर्ष माससे लेकर कार्तिक मासपर्यन्त उद्यापनसहित शुक्लपक्षके द्वादशी-व्रतका	

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
वर्णन	८७
१७- मार्गशीर्ष-पूर्णिमासे आरम्भ होनेवाले लक्ष्मीनारायण-व्रतकी उद्यापनसहित विधि और महिमा	९३
१८- श्रीविष्णुमन्दिरमें ध्वजारोपणकी विधि और महिमा	९५
१९- हरिपञ्चक-व्रतकी विधि और माहात्म्य	९७
२०- मासोपवास-व्रतकी विधि और महिमा	९९
२१- एकादशी-व्रतकी विधि और महिमा— भद्रशीलकी कथा	१००
२२- चारों वर्णों और द्विजका परिचय तथा विभिन्न वर्णोंके विशेष और सामान्य धर्मका वर्णन	१०४
२३- संस्कारोंके नियत काल, ब्रह्मचारीके धर्म, अनध्याय तथा वेदाध्ययनकी आवश्यकताका वर्णन	१०६
२४- विवाहके योग्य कन्या, विवाहके आठ भेद तथा गृहस्थोचित शिष्टाचारका वर्णन	१०९
२५- गृहस्थ-सम्बन्धी शौचाचार, स्नान, संध्योपासन आदि तथा वानप्रस्थ और संन्यास-आश्रमके धर्म	११०
२६- श्राद्धकी विधि तथा उसके विषयमें अनेक ज्ञातव्य विषयोंका वर्णन	११७
२७- व्रत, दान और श्राद्ध आदिके लिये तिथियोंका निर्णय	१२२
२८- विविध पापोंके प्रायश्चित्तका विधान तथा भगवान् विष्णुके आराधनकी महिमा	१२५
२९- यमलोकके मार्गमें पापियोंके कष्ट तथा पुण्यात्माओंके सुखका वर्णन एवं कल्पान्तरमें भी कर्मोंके भोगका प्रतिपादन	१३०
३०- पापी जीवोंके स्थावर आदि योनियोंमें जन्म लेने और दुःख भोगनेकी अवस्थाका वर्णन	१३४
३१- मोक्षप्राप्तिका उपाय, भगवान् विष्णु ही मोक्षदाता हैं—इसका प्रतिपादन, योग तथा उसके अङ्गोंका निरूपण	१३७
३२- भवबन्धनसे मुक्तिके लिये भगवान् विष्णुके भजनका उपदेश	१४५
३३- वेदमालिको जानन्ति मुनिका उपदेश तथा वेदमालिकी मुक्ति	१४८
३४- भगवान् विष्णुके भजनकी महिमा— सत्सङ्ग तथा भगवान्के चरणोदकसे एक व्याधका उद्धार	१५१
३५- उत्तङ्कके द्वारा भगवान् विष्णुकी स्तुति और भगवान्की आज्ञासे उनका नारायणाश्रममें जाकर मुक्त होना	१५४
३६- भगवान् विष्णुके भजन-पूजनकी महिमा	१५९
३७- इन्द्र और सुधर्मका संवाद, विभिन्न मन्वन्तरोंके इन्द्र और देवताओंका वर्णन तथा भगवद्भजनका माहात्म्य	१६१
३८- चारों युगोंकी स्थितिका संक्षेपसे तथा कलिधर्मका विस्तारसे वर्णन एवं भगवन्नामकी अद्भुत महिमाका प्रतिपादन	१६३
द्वितीय पाद	
३९- सृष्टितत्त्वका वर्णन, जीवकी सत्ताका प्रतिपादन और आश्रमोंके आचारका निरूपण	१६९
४०- उत्तम लोक, अध्यात्मतत्त्व तथा ध्यानयोगका वर्णन	१७३
४१- पञ्चशिखका राजा जनकको उपदेश	१७७
४२- त्रिविध तापोंसे छूटनेका उपाय, भगवान् तथा वासुदेव आदि शब्दोंकी व्याख्या, परा और अपरा विद्याका निरूपण, खाण्डिक्य और केशिध्वजकी कथा, केशिध्वजद्वारा अविद्याके बीजका प्रतिपादन	१८२

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
४३- मुक्तिप्रद योगका वर्णन	१८७
४४- राजा भरतका मृगशरीरमें आसक्तिके कारण मृग होना, फिर ज्ञानसम्पन्न ब्राह्मण होकर जड-वृत्तिसे रहना, जडभरत और सौवीरनरेशका संवाद	१९२
४५- जडभरत और सौवीरनरेशका संवाद—परमार्थका निरूपण तथा ऋभुका निदाघको अद्वैतज्ञानका उपदेश	१९७
४६- शिक्षा-निरूपण	२०१
४७- वेदके द्वितीय अङ्ग कल्पका वर्णन—गणेश-पूजन, ग्रहशान्ति तथा श्राद्धका निरूपण	२१६
४८- व्याकरण-शास्त्रका वर्ण	२२५
४९- निरुक्त-वर्णन	२५५
५०- त्रिस्कन्ध ज्यौतिषके वर्णन-प्रसङ्गमें गणित-विषयका प्रतिपादन	२६२
५१- त्रिस्कन्ध ज्यौतिषका जातकस्कन्ध	३०१
५२- त्रिस्कन्ध ज्यौतिषका संहिताप्रकरण (विविध उपयोगी विषयोंका वर्णन)	३३९
५३- छन्दःशास्त्रका संक्षिप्त परिचय	३९४
५४- शुकदेवजीका मिथिलागमन, राजभवनमें युवतियोंद्वारा उनकी सेवा, राजा जनकके द्वारा शुकदेवजीका सत्कार और शुकदेवजीके साथ उनका मोक्षविषयक संवाद	४०७
५५- व्यासजीका शुकदेवको अनध्यायका कारण बताते हुए 'प्रवह' आदि सात वायुओंका परिचय देना तथा सनत्कुमारका शुकको ज्ञानोपदेश	४११
५६- शुकदेवजीको सनत्कुमारका उपदेश	४१५
५७- श्रीशुकदेवजीकी ऊर्ध्वगति, श्वेतद्वीप तथा वैकुण्ठधाममें जाकर शुकदेवजीके द्वारा भगवान् विष्णुकी स्तुति और भगवान्‌की आज्ञासे शुकदेवजीका व्यासजीके पास आकर भागवतशास्त्र पढ़ना	४१७

तृतीय पाद

विषय	पृष्ठ-संख्या
५८- शैवदर्शनके अनुसार पति, पशु एवं पाश आदिका वर्णन तथा दीक्षाकी महत्ता	४२१
५९- मन्त्रके सम्बन्धमें अनेक ज्ञातव्य बातें, मन्त्रके विविध दोष तथा उत्तम आचार्य एवं शिष्यके लक्षण	४२९
६०- मन्त्र-शोधन, दीक्षाविधि, पञ्चदेवपूजा तथा जपपूर्वक इष्टदेव और आत्मचिन्तनका विधान	४३२
६१- शौचाचार, स्नान, संध्या-तर्पण, पूजागृहमें देवताओंका पूजन, केशव-कीर्त्यादि मातृका-न्यास, श्रीकण्ठमातृका, गणेशमातृका, कला-मातृका आदि न्यासोंका वर्णन	४३६
६२- देवपूजनकी विधि	४४३
६३- श्रीमहाविष्णु-सम्बन्धी अष्टाक्षर, द्वादशाक्षर आदि विविध मन्त्रोंके अनुष्ठानकी विधि	४५२
६४- भगवान् श्रीराम, सीता, लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न-सम्बन्धी विविध मन्त्रोंके अनुष्ठानकी संक्षिप्त विधि	४५६
६५- विविध मन्त्रोंद्वारा श्रीहनुमान्‌जीकी उपासना, दीपदानविधि और कामनाशक भूतविद्रावण-मन्त्रोंका वर्णन	४६४
६६- भगवान् श्रीकृष्ण-सम्बन्धी मन्त्रोंकी अनुष्ठान-विधि तथा विविध प्रयोग	४७४
६७- श्रीकृष्ण-सम्बन्धी विविध मन्त्रों तथा व्यास-सम्बन्धी मन्त्रकी अनुष्ठानविधि	४९०
६८- श्रीनारदजीको भगवान् शङ्करसे प्राप्त हुए युगल-शरणागति-मन्त्र तथा राधाकृष्ण-युगलसहस्र-नाम-स्तोत्रका वर्णन	५०१

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

विषय	पृष्ठ-संख्या
चतुर्थ पाद	
६९- नारद-सनातन-संवाद, ब्रह्माजीका मरीचिको ब्रह्मपुराणकी अनुक्रमणिका तथा उसके पाठ-श्रवण एवं दानका फल बताना	५२१
७०- पद्मपुराणका लक्षण तथा उसमें वर्णित विषयोंकी अनुक्रमणिका	५२३
७१- विष्णुपुराणका स्वरूप और विषयानुक्रमणिका	५२४
७२- वायुपुराणका परिचय तथा उसके दान एवं श्रवण आदिका फल	५२५
७३- श्रीमद्भागवतका परिचय, माहात्म्य तथा दान-जनित फल	५२६
७४- नारदपुराणकी विषय-सूची, इसके पाठ, श्रवण और दानका फल	५२८
७५- मार्कण्डेयपुराणका परिचय तथा उसके श्रवण एवं दानका माहात्म्य	५२९
७६- अग्निपुराणकी अनुक्रमणिका तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दानका फल	५३०
७७- भविष्यपुराणका परिचय तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दानका माहात्म्य	५३१
७८- ब्रह्मवैवर्तपुराणका परिचय तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दान आदिकी महिमा	५३२
७९- लिङ्गपुराणका परिचय तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दानका फल	५३३
८०- वाराहपुराणका लक्षण तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दानका माहात्म्य	५३४
८१- स्कन्दपुराणकी विषयानुक्रमणिका, इस पुराणके पाठ, श्रवण एवं दानका माहात्म्य	५३५
८२- वामनपुराणकी विषय-सूची और उस पुराणके श्रवण, पठन एवं दानका माहात्म्य	५४२
८३- कूर्मपुराणकी संक्षिप्त विषय-सूची और उसके पाठ, श्रवण तथा दानका माहात्म्य	५४३
८४- मत्स्यपुराणकी विषय-सूची तथा इस पुराणके पाठ, श्रवण और दानका माहात्म्य	५४४
८५- गरुडपुराणकी विषय-सूची और पुराणके पाठ, श्रवण और दानकी महिमा	५४५
८६- ब्रह्माण्डपुराणका परिचय, संक्षिप्त विषय-सूची, पुराण-परम्परा, उसके पाठ, श्रवण एवं दानका फल	५४६
८७- बारह मासोंकी प्रतिपदाके व्रत एवं आवश्यक कृत्योंका वर्णन	५४८
८८- बारह मासोंके द्वितीया-सम्बन्धी व्रतों और आवश्यक कृत्योंका निरूपण	५५१
८९- बारह महीनोंके तृतीया-सम्बन्धी व्रतोंका परिचय	५५२
९०- बारह महीनोंके चतुर्थी-व्रतोंकी विधि और उनका माहात्म्य	५५३
९१- सभी मासोंकी पञ्चमी तिथियोंमें करनेयोग्य व्रत-पूजन आदिका वर्णन	५५७
९२- वर्षभरकी षष्ठी तिथियोंमें पालनीय व्रत एवं देवपूजन आदिकी विधि और महिमा	५५९
९३- बारह मासोंके सप्तमी-सम्बन्धी व्रत और उनके माहात्म्य	५६१
९४- बारह महीनोंकी अष्टमी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा	५६४
९५- नवमी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा	५६८
९६- बारह महीनोंके दशमी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा	५७०
९७- द्वादश मासके एकादशी-व्रतोंकी विधि और महिमा तथा दशमी आदि तीन दिनोंके पालनीय विशेष नियम	५७२

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
९८- बारह महीनोंके द्वादशी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा तथा आठ महाद्वादशियोंका निरूपण	५७६
९९- त्रयोदशी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा	५८१
१००- वर्षभरके चतुर्दशी-व्रतोंकी विधि और महिमा	५८४
१०१- बारह महीनोंकी पूर्णिमा तथा अमावास्यासे सम्बन्ध रखनेवाले व्रतों तथा सत्कर्मोंकी विधि और महिमा	५८७
१०२- सनकादि और नारदजीका प्रस्थान, नारदपुराणके माहात्म्यका वर्णन और पूर्वभागकी समाप्ति	५९२
उत्तरभाग	
१०३- महर्षि वसिष्ठका मान्धाताको एकादशी-व्रतकी महिमा सुनाना	५९५
१०४- तिथिके विषयमें अनेक ज्ञातव्य बातें तथा विद्धा तिथिका निषेध	५९६
१०५- रुक्माङ्गदके राज्यमें एकादशी-व्रतके प्रभावसे सबका वैकुण्ठ-गमन, यमराज आदिका चिन्तित होना, नारदजीसे उनका वार्तालाप तथा ब्रह्म-लोक-गमन	५९८
१०६- यमराजके द्वारा ब्रह्माजीसे अपने कष्टका निवेदन और रुक्माङ्गदके प्रभावका वर्णन	६००
१०७- ब्रह्माजीके द्वारा यमराजको भगवान् तथा उनके भक्तोंकी श्रेष्ठता बताना	६०२
१०८- यमराजकी इच्छा-पूर्ति और भक्त रुक्माङ्गदका गौरव बढ़ानेके लिये ब्रह्माजीका अपने मनसे एक सुन्दरी नारीको प्रकट करना, नारीके प्रति वैराग्यकी भावना तथा उस सुन्दरी 'मोहिनी'का मन्दराचलपर जाकर मोहक संगीत गाना	६०२
१०९- रुक्माङ्गद-धर्माङ्गद-संवाद, धर्माङ्गदका प्रजाजनोंको उपदेश और प्रजापालन तथा रुक्माङ्गदका रानी संध्यावलीसे वार्तालाप	६०५
११०- रानी संध्यावलीका पतिको मृगोंकी हिंसासे रोकना, राजाका वामदेवके आश्रमपर जाना तथा उनसे अपने पारिवारिक सुख आदिका कारण पूछना	६०८
१११- वामदेवजीका पूर्वजन्ममें किये हुए 'अशून्य शयन व्रत'को राजाके वर्तमान सुखका कारण बताना, राजाका मन्दराचलपर जाकर मोहिनीके गीत तथा रूप-दर्शनसे मोहित होकर गिरना और मोहिनीद्वारा उन्हें आश्वासन प्राप्त होना	६१०
११२- राजाकी मोहिनीसे प्रणय-याचना, मोहिनीकी शर्त तथा राजाद्वारा उसकी स्वीकृति एवं विवाह तथा दोनोंका राजधानीकी ओर प्रस्थान	६१२
११३- घोड़ेकी टापसे कुचली हुई छिपकलीकी राजाद्वारा सेवा, छिपकलीकी आत्मकथा, पतिपर वशीकरणका दुष्परिणाम, राजाके पुण्यदानसे उसका उद्धार	६१४
११४- मोहिनीके साथ राजा रुक्माङ्गदका वैदिश नगरको प्रस्थान, राजकुमार धर्माङ्गदका स्वागतके लिये मार्गमें आगमन तथा पिता-पुत्र-संवाद	६१७
११५- धर्माङ्गदद्वारा मोहिनीका सत्कार तथा अपनी माताको मोहिनीकी सेवाके लिये एक पतिव्रता नारीका उपाख्यान सुनाना	६१९
११६- संध्यावलीका मोहिनीको भोजन कराना और धर्माङ्गदके मातृभक्ति-पूर्णवचन	६२३
११७- धर्माङ्गदका माताओंसे पिता और	

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
मोहिनीके प्रति उदार होनेका अनुरोध तथा पुत्रद्वारा माताओंका धन-वस्त्र आदिसे समादर	६२४
११८- राजाका अपने पुत्रको राज्य सौंपकर नीतिका उपदेश देना और धर्माङ्गदके सुराज्यकी स्थिति	६२६
११९- धर्माङ्गदका दिग्विजय, उसका विवाह तथा उसकी शासन-व्यवस्था	६२७
१२०- राजा रुक्माङ्गदका मोहिनीसे कार्तिकमासकी महिमा तथा चातुर्मास्यके नियम, व्रत एवं उद्यापन बताना	६२९
१२१- राजा रुक्माङ्गदकी आज्ञासे रानी संध्यावलीका कार्तिकमासमें कृच्छ्रव्रत प्रारम्भ करना, धर्माङ्गदकी एकादशीके लिये घोषणा, मोहिनीका राजासे एकादशीको भोजन करनेका आग्रह और राजाकी अस्वीकृति	६३२
१२२- राजा रुक्माङ्गदद्वारा मोहिनीके आक्षेपोंका खण्डन, एकादशी-व्रतकी वैदिकता, मोहिनी-द्वारा गौतम आदि ब्राह्मणोंके समक्ष अपने पक्षकी स्थापना	६३५
१२३- राजाके द्वारा एकादशीके दिन भोजनविषयक मोहिनी तथा ब्राह्मणोंके वचनका खण्डन, मोहिनीका रुष्ट होकर राजाको त्यागकर जाना और धर्माङ्गदका उसे लौटाकर लाना एवं पितासे मोहिनीको दी हुई वस्तु देनेका अनुरोध करना	६३७
१२४- राजा रुक्माङ्गदका एकादशीको भोजन न करनेका ही निश्चय	६३९
१२५- संध्यावली-मोहिनी-संवाद, रानी संध्यावलीका मोहिनीको पतिकी इच्छाके विपरीत चलनेमें दोष बताना	६४०
१२६- मोहिनीका संध्यावलीसे उसके पुत्रका मस्तक माँगना और संध्यावलीका उसे स्वीकार करते हुए विरोचनकी कथा सुनाना	६४१
१२७- रानी संध्यावलीका राजाको पुत्रवधके लिये उद्यत करना, राजाका मोहिनीसे अनुनय-विनय, मोहिनीका दुराग्रह तथा धर्माङ्गदका राजाको अपने वधके लिये प्रेरित करना	६४५
१२८- राजाको पुत्रवधके लिये उद्यत देख मोहिनीका मूर्छित होना और पत्नी, पुत्रसहित राजा रुक्माङ्गदका भगवान्‌के शरीरमें प्रवेश करना	६४७
१२९- यमराजका ब्रह्माजीसे कष्ट-निवेदन, वर देनेके लिये उद्यत देवताओंको रुक्माङ्गदके पुरोहितकी फटकार तथा मोहिनीका ब्राह्मणके शापसे भस्म होना	६४८
१३०- मोहिनीकी दुर्दशा, ब्रह्माजीका राजपुरोहितके समीप जाकर उनको प्रसन्न करना, मोहिनीकी याचना	६५०
१३१- मोहिनीको दशमीके अन्तभागमें स्थानकी प्राप्ति तथा उसे पुनः शरीरकी प्राप्ति	६५३
१३२- मोहिनी-वसु-संवाद—गङ्गाजीके माहात्म्यका वर्णन	६५५
१३३- गङ्गाजीके दर्शन, स्मरण तथा उनके जलमें स्नान करनेका महत्त्व	६५८
१३४- कालविशेष और स्थलविशेषमें गङ्गास्नानकी महिमा	६६०
१३५- गङ्गाजीके तटपर किये जानेवाले स्नान, तर्पण, पूजन तथा विविध प्रकारके दानोंकी महिमा	६६२
१३६- एक वर्षतक गङ्गार्चन-व्रतका विधान और माहात्म्य, गङ्गातटपर नक्त-व्रत	

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
करके भगवान् शिवका पूजन, प्रत्येक मासकी पूर्णिमा और अमावास्याको शिवाराधन तथा गङ्गा-दशहराके पुण्य-कृत्य एवं उनका माहात्म्य	६६४
१३७- गयातीर्थकी महिमा	६७१
१३८- गयामें प्रथम और द्वितीय दिनके कृत्यका वर्णन, प्रेतशिला आदि तीर्थोंमें पिण्डदान आदिकी विधि और उन तीर्थोंकी महिमा	६७४
१३९- गयामें तीसरे और चौथे दिनका कृत्य, ब्रह्मतीर्थ तथा विष्णुपद आदिकी महिमा	६७९
१४०- गयामें पाँचवें दिनका कृत्य, गयाके विभिन्न तीर्थोंकी पृथक्-पृथक् महिमा	६८२
१४१- अविमुक्त क्षेत्र—काशीपुरीकी महिमा	६८६
१४२- काशीके तीर्थ एवं शिवलिङ्गोंके दर्शन-पूजन आदिकी महिमा	६८९
१४३- काशी-यात्राका काल, यात्राकालमें यात्रियोंके लिये आवश्यक कृत्य, अवान्तर तीर्थ और शिवलिङ्गोंका वर्णन	६९१
१४४- काशीकी गङ्गाके वरणा-सङ्गम, असी-सङ्गम तथा पञ्चगङ्गा आदि तीर्थोंका माहात्म्य	६९४
१४५- उत्कलदेशके पुरुषोत्तम-क्षेत्रकी महिमा, राजा इन्द्रद्युम्नका वहाँ जाकर मोक्ष प्राप्त करना	६९५
१४६- राजा इन्द्रद्युम्नके द्वारा भगवान् श्रीकृष्णकी स्तुति	६९६
१४७- राजाको स्वप्नमें और प्रत्यक्ष भी भगवान्के दर्शन तथा भगवत्प्रतिमाओंका निर्माण, वर-प्राप्ति और प्रतिष्ठा	६९८
१४८- पुरुषोत्तमक्षेत्रकी यात्राका समय, मार्कण्डेयेश्वर शिव, वट-वृक्ष, श्रीकृष्ण, बलभद्र तथा सुभद्राके और भगवान् नृसिंहके दर्शन-पूजन आदिका माहात्म्य	७०३
१४९- श्वेतमाधव, मत्स्यमाधव, कल्पवृक्ष और अष्टाक्षर-मन्त्र, स्नान, तर्पण आदिकी महिमा	७०७
१५०- भगवान् नारायणके पूजनकी विधि	७१०
१५१- समुद्र-स्नानकी महिमा और श्रीकृष्ण-बलराम आदिके दर्शन आदिकी महिमा तथा श्रीकृष्णसे जगत्-सृष्टिका कथन एवं श्रीराधा-कृष्णके उत्कृष्ट स्वरूपका प्रतिपादन	७१३
१५२- इन्द्रद्युम्न-सरोवरमें स्नानकी विधि, ज्येष्ठ मासकी पूर्णिमाको श्रीकृष्ण, बलराम तथा सुभद्राके अभिषेकका उत्सव	७१५
१५३- अभिषेक-कालमें देवताओंद्वारा जगन्नाथजीकी स्तुति, गुण्डिचा-यात्राका माहात्म्य तथा द्वादश यात्राकी प्रतिष्ठा-विधि	७१७
१५४- प्रयाग-माहात्म्यके प्रसङ्गमें तीर्थयात्राकी सामान्य विधिका वर्णन	७२०
१५५- प्रयागमें माघ-मकरके स्नानकी महिमा तथा वहाँके भिन्न-भिन्न तीर्थोंका माहात्म्य	७२२
१५६- कुरुक्षेत्र-माहात्म्य	७२६
१५७- कुरुक्षेत्रके वन, नदी और भिन्न-भिन्न तीर्थोंका माहात्म्य तथा यात्राविधिका क्रमिक वर्णन	७२७
१५८- गङ्गाद्वार (हरिद्वार) और वहाँके विभिन्न तीर्थोंका माहात्म्य	७३२
१५९- बदरिकाश्रमके विभिन्न तीर्थोंकी महिमा	७३३
१६०- सिद्धनाथ-चरित्रसहित कामाक्षा-माहात्म्य	७३६
१६१- प्रभासक्षेत्रका माहात्म्य तथा उसके अवान्तर तीर्थोंकी महिमा	७३७

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

विषय	पृष्ठ-संख्या
१६२- पुष्कर-माहात्म्य	७४०
१६३- गौतमाश्रम-माहात्म्यमें गोदावरीके प्राकट्यका तथा पञ्चवटीके माहात्म्यका वर्णन	७४२
१६४- पुण्डरीकपुरका माहात्म्य, जैमिनिद्वारा भगवान् शङ्करकी स्तुति	७४३
१६५- परशुरामजीके द्वारा गोकर्णक्षेत्रका उद्धार तथा उसका माहात्म्य	७४९
१६६- श्रीराम-लक्ष्मणका संक्षिप्त चरित्र तथा लक्ष्मणाचलका माहात्म्य	७५१
१६७- सेतु-क्षेत्रके विभिन्न तीर्थोंकी महिमा	७५५
१६८- नर्मदाके तीर्थोंका दिग्दर्शन तथा उनका माहात्म्य	७५६
१६९- अवन्ती—महाकालवनके तीर्थोंकी महिमा	७५७
१७०- मथुराके भिन्न-भिन्न तीर्थोंका माहात्म्य	७५८
१७१- वृन्दावन-क्षेत्रके विभिन्न तीर्थोंके सेवनका माहात्म्य	७६०
१७२- पुरोहित वसुका भगवत्कृपासे वृन्दावन-वास, देवर्षि नारदके द्वारा शिव-सुरभि-संवादके रूपमें भावी श्रीकृष्णचरितका वर्णन	७६३
१७३- मोहिनीका सब तीर्थोंमें घूमकर यमुनामें प्रवेशपूर्वक दशमीके अन्तभागमें स्थित होना तथा नारदपुराणके पाठ एवं श्रवणकी महिमा	७६५

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

चित्र-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
इकरंगे (लाइन)	
१- नैमिषारण्यमें सूतजी महर्षियोंको कथा सुना रहे हैं	१९
२- नारदजी और सनकादि कुमार प्रार्थना कर रहे हैं	२२
३- श्रीनारायणके अङ्गोंसे त्रिदेवोंका प्रादुर्भाव	२५
४- मृकण्डु ऋषिको भगवद्दर्शन	३३
५- मार्कण्डेयका भगवान्‌को प्रणाम	३५
६- गङ्गा और गायत्री	४१
७- राजा बाहुकी पत्नीको और्व मुनिका सती होनेसे रोकना	४३
८- कपिलके नेत्रानलसे सगरपुत्र भस्म हो गये	४९
९- दैत्योंकी लगायी आगसे सुदर्शनचक्रद्वारा अदितिकी रक्षा	५१
१०- अदितिको भगवान्‌के द्वारा माला-दान	५५
११- वामनजीका बलिसे भूमि माँगना	५७
१२- धर्मराज और भगीरथ	६१
१३- विष्णु, शिव आदिकी सेवासे भगवत्प्राप्ति	६२
१४- नरक-यन्त्रणा	७६
१५- पापनाशक उपाय	८१
१६- महर्षि भृगुके आश्रममें भगीरथ	८६
१७- भगीरथको शिव-दर्शन	८८
१८- पूजन, ब्राह्मण-भोजन, फलादि-दान	९३
१९- श्रीलक्ष्मी-नारायण-पूजन, हवन	९३
२०- ध्वजारोपण	९५
२१- दीपदान	९९
२२- भद्रशीलके द्वारा खेलमें भगवत्पूजन	१०१
२३- ब्राह्मणके कर्म	१०५
२४- गुरुके चरणोंमें नमस्कार	१०८
२५- किस-किस समय शिखा खुली न रहे	११०
२६- त्रिकाल गायत्रीका ध्यान	११४
२७- अतिथि-सत्कार	११६
२८- श्राद्धमें निमन्त्रित ब्राह्मणका पूजन	११९
२९- ग्रहणके समय जप करना चाहिये	१२३
३०- प्रायश्चित्त	१२७
३१- विष्णु-पूजनसे सर्वपाप-नाशपूर्वक भगवत्प्राप्ति	१२९
३२- पापियोंके नरकका मार्ग	१३१
३३- पुण्यात्माओंका मार्ग	१३२
३४- सभी अवस्थाओंमें दुःख	१३६
३५- सबमें भगवान्	१३९
३६- प्रणवमें भगवान्	१४४
३७- हाथ, पैर, नेत्र आदिकी सफलता	१४५
३८- जानन्ति और वेदमाली	१५०
३९- महर्षि उत्तङ्क और गुलिक	१५३
४०- उत्तङ्कको भगवद्दर्शन	१५८
४१- परिक्रमा	१६०
४२- इन्द्र और सुधर्म	१६१
४३- चारों युगोंके साधन	१६७
४४- चारों आश्रम	१७१
४५- शरीरादिकी रथरूपमें कल्पना	१७५
४६- मुनि पञ्चशिख और राजा जनक	१७८
४७- केशिध्वज और खाण्डिक्य	१८५
४८- भगवान् विष्णु	१९१
४९- राजा भरत और मृग-शिशु	१९३
५०- जडभरत और राजा रहूगण	१९७
५१- निदाघ और ऋभु	२००
५२- सर्वग्रास चन्द्रग्रहणका दृश्य	२९२
५३- खण्ड सूर्यग्रहणका दृश्य	२९३
५४- सूर्यग्रहण	२९३
५५- पञ्चशलाकाचक्र	३७०
५६- शुकदेवजी राजा जनकके द्वारपर	४०८
५७- शुकदेवजी जनकके प्रमोदवनमें	४०८

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
५८- शुकदेवजी और राजा जनक	४०८
५९- शुकदेवजी और व्यासजी	४१२
६०- शुकदेवजीको भगवद्दर्शन	४१८
६१- श्रीदेवी और भूदेवीके साथ भगवान् नारायणका ध्यान	४५४
६२- श्रीसीतारामका ध्यान	४५६
६३- कल्पवृक्षके नीचे श्रीसीता-लक्ष्मणसहित श्रीरामका ध्यान	४५८
६४- सिंहासनासीन सीता-लक्ष्मणसहित श्रीरामका ध्यान	४५९
६५- पुष्पकविमानपर श्रीसीतारामका ध्यान	४६०
६६- कल्पवृक्षके नीचे श्रीसीतारामका ध्यान	४६१
६७- श्रीरामका ध्यान करते हनुमान्‌जीका ध्यान	४६६
६८- वीर हनुमान्‌का ध्यान	४६७
६९- कपीश्वर हनुमान्‌का ध्यान	४७३
७०- श्रीकृष्णका प्रातःकालीन ध्यान	४७८
७१- श्रीकृष्णका मध्याह्नकालीन ध्यान	४७९
७२- श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान	४८०
७३- मुरारिभगवान्‌का ध्यान	४८४
७४- गोपालयन्त्र	४८५
७५- अष्टभुज महाकृष्णका ध्यान	४९२
७६- नन्दनन्दन श्रीकृष्णका ध्यान	४९३
७७- गोपालकृष्णका ध्यान	४९३
७८- श्रीकृष्णाभिषेकका ध्यान	४९४
७९- बाल-गोपालका ध्यान	४९५
८०- श्रीकृष्ण-बलरामका ध्यान	४९६
८१- व्रजराज-कुमारका ध्यान	४९७
८२- गुरुपुत्र प्रदान करते श्रीकृष्णका ध्यान	४९८
८३- श्रीदेवी, भूदेवीके साथ गरुड़पर बैठे भगवान् विष्णुका ध्यान	४९९
८४- भगवान् व्यासका ध्यान	५००
८५- ब्रह्माजी और मरीचि	५२१
८६- पुराण-दान	५२४
८७- पुराण-श्रवण	५२६
८८- भागवत-दान	५२७
८९- गायोंके साथ पुराण-दान	५२८
९०- मार्कण्डेयपुराण-दान	५२९
९१- अग्निपुराण-दान	५३०
९२- भविष्यपुराण-दान	५३१
९३- वाराहपुराण-दान	५३४
९४- राजा अम्बरीष और दुर्वासा मुनि	५३६
९५- स्कन्दपुराण-दान	५४२
९६- कूर्मपुराण-दान	५४४
९७- समुद्र-मन्थन	५४५
९८- गरुडपुराण-दान	५४६
९९- देवी-पूजन	५५०
१००- शिव-पूजन	५५२
१०१- गणेश-पूजन	५५४
१०२- मत्स्यभगवान्‌की पूजा	५५७
१०३- कपिला गौका पूजन	५६०
१०४- सूर्य-पूजन	५६२
१०५- श्रीराधाका पूजन और उसका फल	५६६
१०६- श्रीरामका पूजन, ब्राह्मण-भोजन और उसका फल	५६९
१०७- गङ्गादशहरा-स्नान	५७०
१०८- विष्णु-पूजन	५७३
१०९- द्वादश ब्राह्मण-भोजन	५७७
११०- शिव-पार्वती-पूजन	५८१
१११- नृसिंह-पूजन	५८४
११२- वट-प्रदक्षिणा	५८८
११३- दीपदान	५९१
११४- राजा मान्धाता और महर्षि वसिष्ठ	५९५
११५- ब्रह्माकी सभामें चित्रगुप्त, यम और नारदजी	५९९
११६- ब्रह्माकी सभामें नारीकी उत्पत्ति	६०३

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
११७- राजा रुक्माङ्गदकी घोषणा	६०७
११८- रुक्माङ्गद और महर्षि वामदेव	६०९
११९- रुक्माङ्गदका पर्वतके पास पहुँचना	६१२
१२०- रुक्माङ्गदका छिपकलीके शरीरपर पानी डालना	६१५
१२१- छिपकलीका दिव्य शरीर-धारण	६१७
१२२- मोहिनीको पीठपर पैर रखकर धर्माङ्गदने घोड़ेपर चढ़ाया	६२०
१२३- पतिव्रताका पतिसहित देवलोक-गमन	६२२
१२४- धर्माङ्गदका माताओंको समझाना	६२५
१२५- धर्माङ्गदका पिताके सामने मणि रखना	६२७
१२६- गाय एक घड़ा दूध देती	६२९
१२७- त्रिरात्र-व्रतमें दान	६३१
१२८- मोहिनीकी ब्राह्मणोंसे बात	६३६
१२९- देवताओंको विष्णु-दर्शन	६४३
१३०- राजाको पुत्र-हत्यासे भगवान्‌का रोकना	६४७
१३१- ब्राह्मणके पास मोहिनीको लेकर देवताओंका जाना	६५२
१३२- गङ्गा-स्नानसे शिवधामकी प्राप्ति	६५८
१३३- गङ्गाजी	६६३
१३४- गङ्गामें प्राण-त्याग करनेवालोंको देवताओंका नमस्कार	६७०
१३५- फल्गु नदीके तटपर श्राद्ध	६७६
१३६- श्रीरामद्वारा दशरथजीको पिण्डदान	६८१
१३७- काशी-मुक्ति	६८७
१३८- कालिका-पूजन	६९२
१३९- इन्द्रद्युम्नको स्वप्नमें भगवद्दर्शन	६९९
१४०- बलराम, श्रीकृष्ण और सुभद्रा	७०४
१४१- वट-पूजन	७०८
१४२- वे ही श्रीराम हैं, वे ही श्रीकृष्ण हैं	७१४
१४३- रथ-यात्रा	७१९
१४४- प्रयाग-सङ्गम-स्नान	७२४
१४५- कुरुक्षेत्र	७३१
१४६- गरुडको भगवद्दर्शन	७३४
१४७- रुक्मिणी-पूजन	७३९
१४८- गौतमपर शिव-कृपा	७४२
१४९- जैमिनि ऋषिपर शिव-कृपा	७४४
१५०- ऋषियोंको परशुरामजीके दर्शन	७५०
१५१- विश्वामित्रकी यज्ञ-रक्षा	७५१
१५२- श्रीरामजी धनुष तोड़ रहे हैं	७५२
१५३- वानरोंकी सम्पातीसे भेंट	७५३
१५४- सीताजीकी अग्नि-परीक्षा	७५३
१५५- श्रीराम-दरबारमें लव-कुशका रामायण-गान	७५४
१५६- लक्ष्मणजी दुर्वासा मुनिको रोक रहे हैं	७५५
१५७- विश्रामघाटमें स्नान करनेसे विष्णुलोककी प्राप्ति	७५९
१५८- गोवर्धन ब्राह्मणको भगवद्दर्शन	७६२
१५९- वसुको श्यामसुन्दरके दर्शन	७६४
१६०- मोहिनीका यमुनामें प्रवेश	७६६

In Public Domain. Digitzed by Sarayu Trust
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ॐ

श्रीपरमात्मने नमः

श्रीगणेशाय नमः

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

श्रीनारदमहापुराण

पूर्वभाग

प्रथम पाद

सिद्धाश्रममें शौनकादि महर्षियोंका सूतजीसे प्रश्न तथा सूतजीके द्वारा नारदपुराणकी महिमा और विष्णुभक्तिके माहात्म्यका वर्णन

ॐ वेदव्यासाय नमः

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्॥ १॥

भगवान् नारायण, नरश्रेष्ठ नर तथा सरस्वतीदेवीको नमस्कार करके भगवदीय उत्कर्षका प्रतिपादन करनेवाले इतिहास-पुराणका पाठ करे।

वन्दे वृन्दावनासीनमिन्दिरानन्दमन्दिरम्।
उपेन्द्रं सान्द्रकारुण्यं परानन्दं परात्परम्॥ २॥

जो लक्ष्मीके आनन्द-निकेतन भगवान् विष्णुके अवतार-स्वरूप है, उस स्नेहयुक्त करुणाकी निधि परात्पर परमानन्दस्वरूप पुरुषोत्तम वृन्दावनवासी श्रीकृष्णको मैं प्रणाम करता हूँ।

ब्रह्मविष्णुमहेशाख्यं यस्यांशा लोकसाधकाः।
तमादिदेवं चिद्रूपं विशुद्धं परमं भजे॥ ३॥

ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जिसके स्वरूप हैं तथा लोकपाल जिसके अंश हैं, उस विशुद्ध ज्ञानस्वरूप आदिदेव परमात्माकी मैं आराधना करता हूँ।

नैमिषारण्य नामक विशाल वनमें महात्मा शौनक आदि ब्रह्मवादी मुनि मुक्तिकी इच्छासे तपस्यामें संलग्न थे। उन्होंने इन्द्रियोंको वशमें कर लिया था। उनका भोजन नियमित था। वे सच्चे संत थे और सत्यस्वरूप परमात्माकी प्राप्तिके लिये पुरुषार्थ करते थे। आदिपुरुष सनातन भगवान् विष्णुका वे बड़ी भक्तिसे यजन-पूजन करते रहते थे। उनमें ईर्ष्याका नाम नहीं था। वे सम्पूर्ण धर्मोंके ज्ञाता और समस्त लोकोंपर अनुग्रह करनेवाले थे। ममता और अहङ्कार उन्हें छू भी नहीं सके थे। उनका चित्त निरन्तर परमात्माके चिन्तनमें तत्पर रहता था। वे समस्त कामनाओंका त्याग करके सर्वथा निष्पाप हो गये थे। उनमें शम, दम आदि सद्गुणोंका सहज विकास था। काले मृगचर्मकी चादर ओढ़े, सिरपर जटा बढ़ाये तथा निरन्तर ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए वे महर्षिगण सदा परब्रह्म परमात्माका जप एवं कीर्तन करते थे। सूर्यके समान प्रतापी, धर्मशास्त्रोंका यथार्थ तत्त्व जाननेवाले वे महात्मा नैमिषारण्यमें तप करते थे। उनमेंसे कुछ लोग यज्ञोंद्वारा यज्ञपति भगवान् विष्णुका यजन करते थे। कुछ लोग ज्ञानयोगके साधनोंद्वारा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ज्ञानस्वरूप श्रीहरिकी उपासना करते थे और कुछ लोग भक्तिके मार्गपर चलते हुए परा-भक्तिके द्वारा भगवान् नारायणकी पूजा करते थे।

एक समय धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका उपाय जाननेकी इच्छासे उन श्रेष्ठ महात्माओंने एक बड़ी भारी सभा की। उसमें छब्बीस हजार ऊर्ध्वरेता (नैष्ठिक ब्रह्मचर्यका पालन करनेवाले) मुनि सम्मिलित हुए थे। उनके शिष्य-प्रशिष्योंकी संख्या तो बतायी ही नहीं जा सकती। पवित्र अन्तःकरणवाले वे महातेजस्वी महर्षि लोकोंपर अनुग्रह करनेके लिये ही एकत्र हुए थे। उनमें राग और मात्सर्यका सर्वथा अभाव था। वे शौनकजीसे यह पूछना चाहते थे कि इस पृथ्वीपर कौन-कौन-से पुण्यक्षेत्र एवं पवित्र तीर्थ हैं। त्रिविध तापसे पीड़ित चित्तवाले मनुष्योंको मुक्ति कैसे प्राप्त हो सकती है। लोगोंको भगवान् विष्णुकी अविचल भक्ति कैसे प्राप्त होगी तथा सात्त्विक, राजस और तामस—भेदसे तीन प्रकारके कर्मोंका फल किसके द्वारा प्राप्त होता है। उन मुनियोंको अपनेसे इस प्रकार प्रश्न करनेके लिये उद्यत देखकर उत्तम बुद्धिवाले शौनकजी विनयसे झुक गये और हाथ जोड़कर बोले।

शौनकजीने कहा—महर्षियो! पवित्र सिद्धाश्रम-तीर्थमें पौराणिकोंमें श्रेष्ठ सूतजी रहते हैं। वे वहाँ अनेक प्रकारके यज्ञोंद्वारा विश्वरूप भगवान् विष्णुका यजन किया करते हैं। महामुनि सूतजी व्यासजीके शिष्य हैं। वे यह सब विषय अच्छी तरह जानते हैं। उनका नाम रोमहर्षण है। वे बड़े शान्त स्वभावके हैं और पुराणसंहिताके वक्ता हैं। भगवान् मधुसूदन प्रत्येक युगमें धर्मोंका ह्रास देखकर वेदव्यास-रूपसे प्रकट होते और एक ही वेदके अनेक विभाग करते हैं। विप्रगण! हमने सब शास्त्रोंमें यह सुना है कि वेदव्यास मुनि साक्षात् भगवान् नारायण ही हैं। उन्हीं भगवान् व्यासने सूतजीको पुराणोंका उपदेश दिया है। परम बुद्धिमान् वेदव्यासजीके द्वारा भलीभाँति उपदेश पाकर सूतजी सब धर्मोंके ज्ञाता हो गये हैं। संसारमें उनसे बढ़कर दूसरा कोई पुराणोंका ज्ञाता नहीं है; क्योंकि इस लोकमें सूतजी ही पुराणोंके तात्त्विक अर्थको जाननेवाले, सर्वज्ञ और बुद्धिमान् हैं। उनका स्वभाव शान्त है। वे मोक्षधर्मके ज्ञाता तो हैं ही, कर्म और भक्तिके विविध साधनोंको भी जानते हैं। मुनीश्वरो! वेद, वेदाङ्ग और शास्त्रोंका जो सारभूत तत्त्व है, वह सब मुनिवर व्यासने जगत्के हितके लिये पुराणोंमें बता दिया है और ज्ञानसागर सूतजी उन सबका यथार्थ तत्त्व जाननेमें कुशल हैं, इसलिये हमलोग उन्हींसे सब बातें पूछें।

इस प्रकार शौनकजीने मुनियोंसे जब अपना अभिप्राय निवेदन किया, तब वे सब महर्षि विद्वानोंमें श्रेष्ठ शौनकजीको आलिङ्गन करके बहुत प्रसन्न हुए और उन्हें साधुवाद देने लगे। तदनन्तर सब मुनि वनके भीतर पवित्र सिद्धाश्रमतीर्थमें गये और वहाँ उन्होंने देखा कि सूतजी अग्निष्टोम यज्ञके द्वारा अनन्त अपराजित भगवान् नारायणका यजन कर रहे हैं। सूतजीने उन विख्यात तेजस्वी महात्माओंका यथोचित स्वागत-सत्कार किया। तत्पश्चात् उनसे नैमिषारण्यनिवासी मुनियोंने इस प्रकार पूछा—

ऋषि बोले—उत्तम व्रतका पालन करनेवाले सूतजी! हम आपके यहाँ अतिथिरूपमें आये हैं, अतः आपसे आतिथ्य-सत्कार पानेके अधिकारी हैं। आप ज्ञान-दानरूपी पूजन-सामग्रीके द्वारा हमारा पूजन कीजिये। मुने! देवतालोग चन्द्रमाकी किरणोंसे निकला हुआ अमृत पीकर जीवन धारण करते हैं; परंतु इस पृथ्वीके देवता ब्राह्मण

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

आपके मुखसे निकले हुए ज्ञानरूपी अमृतको पीकर तृप्त होते हैं। तात! हम यह जानना चाहते हैं कि यह सम्पूर्ण जगत् किससे उत्पन्न हुआ? इसका आधार और स्वरूप क्या है? यह किसमें स्थित है और किसमें इसका लय होगा? भगवान् विष्णु किस साधनसे प्रसन्न होते हैं? मनुष्योंद्वारा उनकी पूजा कैसे की जाती है? भिन्न-भिन्न वर्णों और आश्रमोंका आचार क्या है! अतिथिकी पूजा कैसे की जाती है, जिससे सब कर्म सफल हो जाते हैं? वह मोक्षका उपाय मनुष्योंको कैसे सुलभ है, पुरुषोंको भक्तिसे कौन-सा फल प्राप्त होता है और भक्तिका स्वरूप क्या है? मुनिश्रेष्ठ सूतजी! ये सब बातें आप हमें इस प्रकार समझाकर बतावें कि फिर इनके विषयमें कोई संदेह न रह जाय, आपके अमृतके समान वचनोंको सुननेके लिये किसके मनमें श्रद्धा नहीं होगी?

सूतजीने कहा—महर्षियो! आप सब लोग

सुनें। आपलोगोंको जो अभीष्ट है, वह मैं बतलाता हूँ। सनकादि मुनीश्वरोंने महात्मा नारदजीसे जिसका वर्णन किया था, वह नारदपुराण आप सुनें। यह वेदार्थसे परिपूर्ण है—इसमें वेदके सिद्धान्तोंका ही प्रतिपादन किया गया है। यह समस्त पापोंकी शान्ति तथा दुष्ट ग्रहोंकी बाधाका निवारण करनेवाला है। दुःस्वप्नोंका नाश करनेवाला, धर्मसम्मत तथा भोग एवं मोक्षको देनेवाला है। इसमें भगवान् नारायणकी पवित्र कथाका वर्णन है। यह नारदपुराण सब प्रकारके कल्याणकी प्राप्तिका हेतु है। धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षका भी कारण है। इसके द्वारा महान् फलोंकी भी प्राप्ति होती है, यह अपूर्व पुण्यफल प्रदान करनेवाला है। आप सब लोग एकाग्रचित्त होकर इस महापुराणको सुनें। महापातकों तथा उपपातकोंसे युक्त मनुष्य भी महर्षि व्यासप्रोक्त इस दिव्य पुराणका श्रवण करके शुद्धिको प्राप्त होते हैं। इसके एक अध्यायका पाठ करनेसे अश्वमेध यज्ञका और दो अध्यायोंके पाठसे राजसूय यज्ञका फल मिलता है। ब्राह्मणो! ज्येष्ठके महीनेमें पूर्णिमा तिथिको मूल नक्षत्रका योग होनेपर मनुष्य इन्द्रिय-संयमपूर्वक मथुरापुरीकी यमुनाके जलमें स्नान करके निराहार व्रत रहे और विधिपूर्वक भगवान् श्रीकृष्णका पूजन करे तो इससे उसे जिस फलकी प्राप्ति होती है, उसीको वह इस पुराणके तीन अध्यायोंका पाठ करके प्राप्त कर लेता है। इसके दस अध्यायोंका भक्तिभावसे श्रवण करके मनुष्य निर्वाण मोक्ष प्राप्त कर लेता है। यह पुराण कल्याण-प्राप्तिके साधनोंमें सबसे श्रेष्ठ है। पवित्र ग्रन्थोंमें इसका स्थान सर्वोत्तम है। यह बुरे स्वप्नोंका नाशक और परम पवित्र है। ब्रह्मर्षियो! इसका यत्नपूर्वक श्रवण करना चाहिये। यदि मनुष्य श्रद्धापूर्वक इसके एक श्लोक या आधे श्लोकका भी पाठ कर ले तो वह महापातकोंके

In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

समूहसे तत्काल मुक्त हो जाता है।

साधु पुरुषोंके समक्ष ही इस पुराणका वर्णन करना चाहिये; क्योंकि यह गोपनीयसे भी अत्यन्त गोपनीय है। भगवान् विष्णुके समक्ष, किसी पुण्य क्षेत्रमें तथा ब्राह्मण आदि द्विजातियोंके निकट इस पुराणकी कथा बाँचनी चाहिये। जिन्होंने काम-क्रोध आदि दोषोंको त्याग दिया है, जिनका मन भगवान् विष्णुकी भक्तिमें लगा है तथा जो सदाचारपरायण हैं, उन्हींको यह मोक्षसाधक पुराण सुनाना चाहिये। भगवान् विष्णु सर्वदेवमय हैं। वे अपना स्मरण करनेवाले भक्तोंकी समस्त पीड़ाओंका नाश कर देते हैं। श्रेष्ठ भक्तोंपर उनकी स्नेह-धारा सदा प्रवाहित होती रहती है। ब्राह्मणो! भगवान् विष्णु केवल भक्तिसे ही संतुष्ट होते हैं, दूसरे किसी उपायसे नहीं। उनके नामका बिना श्रद्धाके भी कीर्तन अथवा श्रवण कर लेनेपर मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो अविनाशी वैकुण्ठ धामको प्राप्त कर लेता है। भगवान् मधुसूदन संसाररूपी भयङ्कर एवं दुर्गम वनको दग्ध करनेके लिये दावानलरूप हैं। महर्षियो! भगवान् श्रीहरि अपना स्मरण करनेवाले पुरुषोंके सब पापोंका उसी क्षण नाश कर देते हैं। उनके तत्त्वका प्रकाश करनेवाले इस उत्तम पुराणका श्रवण अवश्य करना चाहिये। सुनने अथवा पाठ करनेसे भी यह पुराण सब पापोंका नाश करनेवाला है। ब्राह्मणो! जिसकी बुद्धि भक्तिपूर्वक इस पुराणके सुननेमें लग जाती है, वही कृतकृत्य है। वही सम्पूर्ण शास्त्रोंका मर्मज्ञ पण्डित है तथा उसीके द्वारा किये हुए तप और पुण्यको मैं सफल मानता हूँ; क्योंकि बिना तप और पुण्यके इस पुराणको सुननेमें प्रेम नहीं हो सकता। जो संसारका हित करनेवाले साधु पुरुष हैं, वे ही उत्तम कथाओंके कहने-सुननेमें प्रवृत्त होते हैं। पापपरायण दुष्ट पुरुष तो सदा दूसरोंकी निन्दा और दूसरोंके साथ कलह करनेमें ही लगे रहते हैं। द्विजवरो! जो नराधम पुराणोंमें अर्थवाद होनेकी शङ्का करते हैं, उनके किये हुए समस्त पुण्य नष्ट हो जाते हैं। विप्रवरो! मोहग्रस्त मानव दूसरे-दूसरे कार्योंके साधनमें लगे रहते हैं, परंतु पुराणश्रवणरूप पुण्यकर्मका अनुष्ठान नहीं करते हैं। श्रेष्ठ ब्राह्मणो! जो मनुष्य बिना किसी परिश्रमके यहाँ अनन्त पुण्य प्राप्त करना चाहता हो, उसको भक्तिभावसे निश्चय ही पुराणोंका श्रवण करना चाहिये। जिस पुरुषकी चित्तवृत्ति पुराण सुननेमें लग जाती है, उसके पूर्वजन्मोपार्जित समस्त पाप निस्संदेह नष्ट हो जाते हैं। जो मानव सत्सङ्ग, देवपूजा, पुराणकथा और हितकारी उपदेशमें तत्पर रहता है, वह इस देहका नाश होनेपर भगवान् विष्णुके समान तेजस्वी स्वरूप धारण करके उन्हींके परम धाममें चला जाता है। अतः विप्रवरो! आपलोग इस परम पवित्र नारदपुराणका श्रवण करें। इसके श्रवण करनेसे मनुष्यका मन भगवान् विष्णुमें संलग्न होता है और वह जन्म-मृत्यु तथा जरा आदिके बन्धनसे छूट जाता है।

आदिदेव भगवान् नारायण श्रेष्ठ, वरणीय, वरदाता तथा पुराणपुरुष हैं। उन्होंने अपने प्रभावसे सम्पूर्ण लोकोंको व्याप्त कर रखा है। वे भक्तजनोंके मनोवाञ्छित पदार्थको देनेवाले हैं। उनका स्मरण करके मनुष्य मोक्षपदको प्राप्त कर लेता है। ब्राह्मणो! जो ब्रह्मा, शिव तथा विष्णु आदि भिन्न-भिन्न रूप धारण करके इस जगत्की सृष्टि, संहार और पालन करते हैं, उन आदिदेव परम पुरुष परमेश्वरको अपने हृदयमें स्थापित करके मनुष्य मुक्ति पा लेता है। जो नाम और जाति आदिकी कल्पनाओंसे रहित हैं, सर्वश्रेष्ठ तत्त्वोंसे भी परम उत्कृष्ट हैं, परात्पर पुरुष हैं, उपनिषदोंके द्वारा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जिनके तत्त्वका ज्ञान होता है तथा जो अपने प्रेमी भक्तोंके समक्ष ही सगुण-साकार रूपमें प्रकट होते हैं, उन्हीं परमेश्वरकी समस्त पुराणों और वेदोंके द्वारा स्तुति की जाती है। अतः जो सम्पूर्ण जगत्के ईश्वर, मोक्षस्वरूप, उपासनाके योग्य, अजन्मा, परम रहस्यरूप तथा समस्त पुरुषार्थोंके हेतु हैं, उन भगवान् विष्णुका स्मरण करके मनुष्य भवसागरसे पार हो जाता है। धर्मात्मा, श्रद्धालु, मुमुक्षु, यति तथा वीतराग पुरुष ही यह पुराण सुननेके अधिकारी हैं। उन्हींको इसका उपदेश करना चाहिये। पवित्र देशमें, देवमन्दिरके सभामण्डपमें, पुण्यक्षेत्रमें, पुण्यतीर्थमें तथा देवताओं और ब्राह्मणोंके समीप पुराणका प्रवचन करना चाहिये। जो मनुष्य पुराण-कथाके बीचमें दूसरेसे बातचीत करता है, वह भयङ्कर नरकमें पड़ता है। जिसका चित्त एकाग्र नहीं है, वह सुनकर भी कुछ नहीं समझता। अतः एकचित्त होकर भगवत्कथामृतका पान करना चाहिये। जिसका मन इधर-उधर भटक रहा हो, उसे कथा-रसका आस्वादन कैसे हो सकता है? संसारमें चञ्चल चित्तवाले मनुष्यको क्या सुख मिलता है? अतः दुःखकी साधनभूत समस्त कामनाओंका त्याग करके एकाग्रचित्त हो भगवान् विष्णुका चिन्तन करना चाहिये। जिस किसी उपायसे भी यदि अविनाशी भगवान् नारायणका स्मरण किया जाय तो वे पातकी मनुष्यपर भी निस्संदेह प्रसन्न हो जाते हैं। सम्पूर्ण जगत्के स्वामी तथा सर्वत्र व्यापक अविनाशी भगवान् विष्णुमें जिसकी भक्ति है, उसका जन्म सफल हो गया और मुक्ति उसके हाथमें है। विप्रवरो! भगवान् विष्णुके भजनमें संलग्न रहनेवाले पुरुषोंको धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थ प्राप्त होते हैं।

नारदजीद्वारा भगवान् विष्णुकी स्तुति

ऋषियोंने पूछा—सूतजी! सनत्कुमारजीने महात्मा नारदको किस प्रकार सम्पूर्ण धर्मोंका उपदेश किया तथा उन दोनोंका समागम किस तरह हुआ? वे दोनों ब्रह्मवादी महात्मा किस स्थानमें स्थित होकर भगवान्की महिमाका गान करते थे? यह हमें बताइये।

सूतजी बोले—महात्मा सनक आदि ब्रह्माजीके मानस पुत्र हैं। उनमें न ममता है और न अहङ्कार। वे सभी नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं। उनके नाम बतलाता हूँ, सुनिये। सनक, सनन्दन, सनत्कुमार और सनातन—इन्हीं नामोंसे उनकी ख्याति है। वे चारों महात्मा भगवान् विष्णुके भक्त हैं तथा निरन्तर परब्रह्म परमात्माके चिन्तनमें तत्पर रहते हैं। उनका प्रभाव सहस्र सूर्योंके समान है। वे सत्यव्रती तथा मुमुक्षु हैं। एक दिनकी बात है, वे मेरुगिरिके शिखरपर ब्रह्माजीकी सभामें जा रहे थे। मार्गमें उन्हें भगवान् विष्णुके चरणोंसे प्रकट हुई गङ्गाजीका दर्शन हुआ। यह उन्हें अभीष्ट था। गङ्गाजीका दर्शन करके वे चारों महात्मा उनकी सीता नामवाली धाराके जलमें स्नान करनेको उद्यत हुए। द्विजवरो! इसी समय देवर्षि नारदमुनि भी वहाँ आ पहुँचे और अपने बड़े भाइयोंको वहाँ स्नानके लिये उद्यत देख उन्हें हाथ जोड़कर नमस्कार किया। उस समय वे प्रेम-भक्तिके साथ भगवान् मधुसूदनके नामोंका कीर्तन करने लगे—'नारायण! अच्युत! अनन्त! वासुदेव! जनार्दन! यज्ञेश! यज्ञपुरुष! कृष्ण! विष्णु! आपको नमस्कार है। कमलनयन! कमलाकान्त! गङ्गाजनक! केशव! क्षीरसमुद्रमें शयन करनेवाले देवेश्वर! दामोदर! आपको नमस्कार है। श्रीराम! विष्णो! नृसिंह! वामन! प्रद्युम्न! संकर्षण! वासुदेव! अज! अनिरुद्ध! निर्मल

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्रकाशस्वरूप! मुरारे! आप सब प्रकारके भयसे निरन्तर हमारी रक्षा कीजिये।' इस प्रकार उच्च स्वरसे हरिनामका उच्चारण करते हुए उन अग्रज मुनियोंको प्रणाम करके वे उनके पास बैठे और उन्हींके साथ प्रसन्नतापूर्वक वहाँ स्नान भी किया। सम्पूर्ण लोकोंका पाप दूर करनेवाली गङ्गाकी धारा सीताके जलमें स्नान करके उन निष्पाप मुनियोंने देवताओं, ऋषियों तथा पितरोंका तर्पण किया। फिर जलसे बाहर आकर संध्योपासन आदि अपने नित्य-नियमका पालन किया। तत्पश्चात् वे भगवान् नारायणके गुणोंसे सम्बन्ध रखनेवाली नाना प्रकारकी कथा-वार्ता करने लगे। उस मनोरम गङ्गातटपर सनकादि मुनियोंने जब अपना नित्यकर्म समाप्त कर लिया, तब देवर्षि नारदने अनेक प्रकारकी कथा-वार्ताके बीच उनसे इस प्रकार प्रश्न किया।

नारदजी बोले—मुनिवरो! आपलोग सर्वज्ञ हैं। सदा भगवान्‌के भजनमें तत्पर रहते हैं। आप सब-के-सब सनातन भगवान् जगदीश्वर हैं और जगत्‌के उद्धारमें तत्पर रहते हैं। दीन-दुःखियोंके प्रति मैत्रीभाव रखनेवाले आप महानुभावोंसे मैं कुछ प्रश्न पूछता हूँ, उसे बतायें। विद्वानो! मुझे भगवान्‌का लक्षण बताइये। यह सम्पूर्ण स्थावर-जङ्गम जिनसे उत्पन्न हुआ है, भगवती गङ्गा जिनके चरणोंका धोवन हैं, वे भगवान् श्रीहरि कैसे जाने जाते हैं? मनुष्योंके मन, वाणी, शरीरसे किये हुए कर्म कैसे सफल होते हैं? सबको मान देनेवाले महात्माओ! ज्ञान और तपस्याका भी लक्षण बतलाइये। साथ ही अतिथि-पूजाका भी महत्त्व समझाइये, जिससे भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं। हे नाथ! इस प्रकारके और भी जो गुह्य सत्कर्म भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाले हैं, उन सबका मुझपर अनुग्रह करके यथार्थ रूपसे वर्णन कीजिये।

तदनन्तर नारदजी भगवान्‌की स्तुति करने लगे—'जो परसे भी परे परम प्रकाशस्वरूप परमात्मा सम्पूर्ण कार्य-कारणरूप जगत्‌में अन्तर्यामी-रूपसे निवास करते हैं तथा जो सगुण और निर्गुणरूप हैं, उनको नमस्कार है। जो मायासे रहित हैं, परमात्मा जिनका नाम है, माया जिनकी शक्ति है, यह सम्पूर्ण विश्व जिनका स्वरूप है, जो योगियोंके ईश्वर, योगस्वरूप तथा योगगम्य हैं, उन सर्वव्यापी भगवान् विष्णुको नमस्कार है। जो ज्ञानस्वरूप, ज्ञानगम्य तथा सम्पूर्ण ज्ञानके एकमात्र हेतु हैं, ज्ञानेश्वर, ज्ञेय, ज्ञाता तथा विज्ञानसम्पत्तिरूप हैं, उन परमात्माको नमस्कार है। जो ध्यानस्वरूप, ध्यानगम्य तथा ध्यान करनेवाले साधकोंके पापका नाश करनेवाले हैं; जो ध्यानके ईश्वर श्रेष्ठ बुद्धिसे युक्त तथा ध्याता, ध्येयस्वरूप हैं; उन परमेश्वरको नमस्कार है। सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि तथा ब्रह्मा आदि देवता, सिद्ध, यक्ष, असुर और नागगण जिनकी शक्तिसे संयुक्त होकर ही कुछ करनेमें समर्थ होते हैं, जो अजन्मा, पुराणपुरुष, सत्यस्वरूप तथा स्तुतिके अधीश्वर हैं, उन परमात्माको मैं सर्वदा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नमस्कार करता हूँ। ब्रह्मन्! जो ब्रह्माजीका रूप धारण करके संसारकी सृष्टि और विष्णुरूपसे जगत्का पालन करते हैं तथा कल्पका अन्त होनेपर जो रुद्ररूप धारण करके संहारमें प्रवृत्त होते हैं और एकार्णवके जलमें अक्षयवटके पत्रपर शिशुरूपसे अपने चरणारविन्दका रसपान करते हुए शयन करते हैं, उन अजन्मा परमेश्वरका मैं भजन करता हूँ। जिनके नामका संकीर्तन करनेसे गजराज ग्राहके भयानक बन्धनसे मुक्त हो गया, जो प्रकाशस्वरूप देवता अपने परम पदमें नित्य विराजमान रहते हैं, उन आदिपुरुष भगवान् विष्णुकी मैं शरण लेता हूँ। जो शिवकी भक्ति करनेवाले पुरुषोंके लिये शिवस्वरूप और विष्णुका ध्यान करनेवाले भक्तोंके लिये विष्णुस्वरूप हैं, जो संकल्पपूर्वक अपने देहधारणमें स्वयं ही हेतु हैं, उन नित्य परमात्माकी मैं शरण लेता हूँ। जो केशी तथा नरकासुरका नाश करनेवाले हैं, जिन्होंने बाल्यावस्थामें अपने हाथके अग्रभागसे गिरिराज गोवर्धनको धारण किया था, पृथ्वीके भारका अपहरण जिनका स्वाभाविक विनोद है, उन दिव्य शक्तिसम्पन्न भगवान् वासुदेवको मैं सदा प्रणाम करता हूँ। जिन्होंने खम्भमें भयङ्कर नृसिंहरूपसे अवतीर्ण हो पर्वतकी चट्टानके समान कठोर दैत्य हिरण्यकशिपुके वक्षःस्थलको विदीर्ण करके अपने भक्त प्रह्लादकी रक्षा की; उन अजन्मा परमेश्वरको मैं नमस्कार करता हूँ। जो आकाश आदि तत्त्वोंसे विभूषित, परमात्मा नामसे प्रसिद्ध, निरञ्जन, नित्य, अमेयतत्त्व तथा कर्मरहित हैं, उन विश्वविधाता पुराणपुरुष परमात्माको मैं नमस्कार करता हूँ। जो ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, अग्नि, वायु, मनुष्य, यक्ष, गन्धर्व, असुर तथा देवता आदि अपने विभिन्न स्वरूपोंके साथ स्थित हैं, जो एक अद्वितीय परमेश्वर हैं, उन आदिपुरुष परमात्माका मैं भजन करता हूँ। यह भेदयुक्त सम्पूर्ण जगत् जिनसे उत्पन्न हुआ है, जिनमें स्थित है और संहारकालमें जिनमें लीन हो जायगा, उन परमात्माकी मैं शरण लेता हूँ। जो विश्वरूपमें स्थित होकर यहाँ आसक्त-से प्रतीत होते हैं, परंतु वास्तवमें जो असङ्ग और परिपूर्ण हैं, उन परमेश्वरकी मैं शरण लेता हूँ। जो भगवान् सबके हृदयमें स्थिर होकर भी मायासे मोहित चित्तवालोंके अनुभवमें नहीं आते तथा जो परम शुद्धस्वरूप हैं, उनकी मैं शरण लेता हूँ। जो लोग सब प्रकारकी आसक्तियोंसे दूर रहकर ध्यानयोगमें अपने मनको लगाये हुए हैं, उन्हें जो सर्वत्र ज्ञानस्वरूप प्रतीत होते हैं, उन परमात्माकी मैं शरण लेता हूँ। क्षीरसागरमें अमृतमन्थनके समय जिन्होंने देवताओंके हितके लिये मन्दराचलको अपनी पीठपर धारण किया था, उन कूर्म-रूपधारी भगवान् विष्णुकी मैं शरण लेता हूँ। जिन अनन्त परमात्माने अपनी दाढ़ोंके अग्रभागद्वारा एकार्णवके जलसे इस पृथ्वीका उद्धार करके सम्पूर्ण जगत्को स्थापित किया, उन वाराह-रूपधारी भगवान् विष्णुको मैं नमस्कार करता हूँ। अपने भक्त प्रह्लादकी रक्षा करते हुए जिन्होंने पर्वतकी शिलाके समान अत्यन्त कठोर वक्षवाले हिरण्यकशिपु दैत्यको विदीर्ण करके मार डाला था, उन भगवान् नृसिंहको मैं नमस्कार करता हूँ। विरोचनकुमार बलिसे तीन पग भूमि पाकर जिन्होंने दो ही पगोंसे ब्रह्मलोकपर्यन्त सम्पूर्ण विश्वको माप लिया और उसे पुनः देवताओंको समर्पित कर दिया, उन अपराजित भगवान् वामनको मैं नमस्कार करता हूँ। हैहयराज सहस्रबाहु अर्जुनके अपराधसे जिन्होंने समस्त क्षत्रियकुलका इक्कीस बार संहार किया, उन जमदग्निनन्दन भगवान् परशुरामको नमस्कार है। जिन्होंने राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न—इन चार रूपोंमें प्रकट हो वानरोंकी सेनासे घिरकर राक्षसदलका संहार किया था, उन भगवान्

In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust. Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

श्रीरामचन्द्रको मैं नमस्कार करता हूँ। जिन्होंने श्रीबलराम और श्रीकृष्ण—इन दो स्वरूपोंको धारण करके पृथ्वीका भार उतारा और अपने यादवकुलका संहार कर दिया, उन भगवान् श्रीकृष्णका मैं भजन करता हूँ। भूः, भुवः, स्वः—तीनों लोकोंमें व्याप्त अपने हृदयमें साक्षात्कार करनेवाले निर्मल बुद्धरूप परमेश्वरका मैं भजन करता हूँ। कलियुगके अन्तमें अशुद्ध चित्तवाले पापियोंको तलवारकी तीखी धारसे मारकर जिन्होंने सत्ययुगके आदिमें धर्मकी स्थापना की है, उन कल्किस्वरूप भगवान् विष्णुको मैं प्रणाम करता हूँ। इस प्रकार जिनके अनेक स्वरूपोंकी गणना बड़े-बड़े विद्वान् करोड़ों वर्षोंमें भी नहीं कर सकते, उन भगवान् विष्णुका मैं भजन करता हूँ। जिनके नामकी महिमाका पार पानेमें सम्पूर्ण देवता, असुर और मनुष्य भी समर्थ नहीं हैं, उन परमेश्वरकी मैं एक क्षुद्र जीव किस प्रकार स्तुति करूँ। महापातकी मानव जिनके नामका श्रवण करनेमात्रसे ही पवित्र हो जाते हैं, उन भगवान्‌की स्तुति मुझ-जैसा अल्प-बुद्धिवाला व्यक्ति कैसे कर सकता है। जिनके नामका जिस किसी प्रकार कीर्तन अथवा श्रवण कर लेनेपर भी पापी पुरुष अत्यन्त शुद्ध हो जाते हैं और शुद्धात्मा मनुष्य मोक्षको प्राप्त कर लेते हैं, निष्पाप योगीजन अपने मनको बुद्धिमें स्थापित करके जिनका साक्षात्कार करते हैं, उन ज्ञानस्वरूप परमेश्वरकी मैं शरण लेता हूँ। सांख्ययोगी सम्पूर्ण भूतोंमें आत्मारूपसे परिपूर्ण हुए जिन जरारहित आदिदेव श्रीहरिका साक्षात्कार करते हैं, उन ज्ञानस्वरूप भगवान्‌का मैं भजन करता हूँ। सम्पूर्ण जीव जिनके स्वरूप हैं, जो शान्तस्वरूप हैं, सबके साक्षी, ईश्वर, सहस्रों मस्तकोंसे सुशोभित तथा भावरूप हैं, उन भगवान् श्रीहरिकी मैं वन्दना करता हूँ। भूत और भविष्य चराचर जगत्‌को व्याप्त करके जो उससे दस अङ्गुल ऊपर स्थित हैं, उन जरा-मृत्युरहित परमेश्वरका मैं भजन करता हूँ। जो सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म, महान्‌से भी अत्यन्त महान् तथा गुह्यसे भी अत्यन्त गुह्य हैं, उन अजन्मा भगवान्‌को मैं बार-बार प्रणाम करता हूँ। जो परमेश्वर ध्यान, चिन्तन, पूजन, श्रवण अथवा नमस्कारमात्र कर लेनेपर भी जीवको अपना परम पद दे देते हैं, उन भगवान् पुरुषोत्तमकी मैं वन्दना करता हूँ। इस प्रकार परम पुरुष परमेश्वरकी नारदजीके स्तुति करनेपर नारदसहित वे सनन्दन आदि मुनीश्वर बड़ी प्रसन्नताको प्राप्त हुए। उनके नेत्रोंमें आनन्दके आँसू भर आये थे। जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर परम पुरुष भगवान् विष्णुके उपर्युक्त स्तोत्रका पाठ करता है, वह सब पापोंसे शुद्धचित्त होकर भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है।

सृष्टिक्रमका संक्षिप्त वर्णन; द्वीप, समुद्र और भारतवर्षका वर्णन, भारतमें सत्कर्मानुष्ठानकी महत्ता तथा भगवदर्पणपूर्वक कर्म करनेकी आज्ञा

नारदजीने पूछा—सनकजी! आदिदेव भगवान् विष्णुने पूर्वकालमें ब्रह्मा आदिकी किस प्रकार सृष्टि की? यह बात मुझे बताइये; क्योंकि आप सर्वज्ञ हैं।

श्रीसनकजीने कहा—देवर्षे! भगवान् नारायण अविनाशी, अनन्त, सर्वव्यापी तथा निरञ्जन हैं। उन्होंने इस सम्पूर्ण चराचर जगत्‌को व्याप्त कर रखा है। स्वयंप्रकाश, जगन्मय महाविष्णुने आदिसृष्टिके समय भिन्न-भिन्न गुणोंका आश्रय लेकर अपनी तीन मूर्तियोंको प्रकट किया। पहले भगवान्‌ने अपने दाहिने अङ्गसे जगत्‌की सृष्टिके लिये प्रजापति ब्रह्माजीको प्रकट किया। फिर अपने

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मध्य अङ्गसे जगत्का संहार करनेवाले रुद्र-नामधारी शिवको उत्पन्न किया। साथ ही इस जगत्का पालन करनेके लिये उन्होंने अपने बायें अङ्गसे अविनाशी भगवान् विष्णुको अभिव्यक्त

किया। जरा-मृत्युसे रहित उन आदिदेव परमात्माको कुछ लोग 'शिव' नामसे पुकारते हैं। कोई सदा सत्यरूप 'विष्णु' कहते हैं और कुछ लोग उन्हें 'ब्रह्मा' बताते हैं। भगवान् विष्णुकी जो पराशक्ति है, वही जगत्रूपी कार्यका सम्पादन करनेवाली है। भाव और अभाव—दोनों उसीके स्वरूप हैं। वही भावरूपसे विद्या और अभावरूपसे अविद्या कहलाती है। जिस समय यह संसार महाविष्णुसे भिन्न प्रतीत होता है, उस समय अविद्या सिद्ध होती है; वही दुःखका कारण होती है। नारदजी! जब तुम्हारी ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय रूपकी उपाधि नष्ट हो जायगी और सब रूपोंमें एकमात्र भगवान् महाविष्णु ही हैं—ऐसी भावना बुद्धिमें होने लगेगी, उस समय विद्याका प्रकाश होगा। वह अभेद-बुद्धि ही विद्या कहलाती है। इस प्रकार महाविष्णुकी मायाशक्ति उनसे भिन्न प्रतीत होनेपर जन्म-मृत्युरूप संसार-बन्धनको देनेवाली होती है और वही यदि अभेद-बुद्धिसे देखी जाय तो संसार-बन्धनका नाश करनेवाली बन जाती है। यह सम्पूर्ण चराचर जगत् भगवान् विष्णुकी शक्तिसे उत्पन्न हुआ है, इसलिये जङ्गम—जो चेष्टा करता है और स्थावर—जो चेष्टा नहीं करता, वह सम्पूर्ण विश्व भिन्न-भिन्न प्रतीत होता है। जैसे घट, मठ आदि भिन्न-भिन्न उपाधियोंके कारण आकाश भिन्न-भिन्न रूपमें प्रतीत होता है, उसी प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् अविद्यारूप उपाधिके योगसे भिन्न-भिन्न प्रतीत होता है। मुने! जैसे भगवान् विष्णु सम्पूर्ण जगत्में व्यापक हैं, उसी प्रकार उनकी शक्ति भी व्यापक है; जैसे अङ्गारमें रहनेवाली दाहशक्ति अपने आश्रयमें व्याप्त होकर स्थित रहती है। कुछ लोग भगवान्की उस शक्तिको लक्ष्मी कहते हैं तथा कुछ लोग उसे उमा और भारती (सरस्वती) आदि नाम देते हैं। भगवान् विष्णुकी वह परा शक्ति जगत्की सृष्टि आदि करनेवाली है। वह व्यक्त और अव्यक्तरूपसे सम्पूर्ण जगत्को व्याप्त करके स्थित है। जो भगवान् अखिल विश्वकी रक्षा करते हैं, वे ही परम पुरुष नारायण देव हैं। अतः जो परात्पर अविनाशी तत्त्व है, परमपद भी वही है; वही अक्षर, निर्गुण, शुद्ध, सर्वत्र परिपूर्ण एवं सनातन परमात्मा हैं; वे परसे भी परे हैं। परमानन्दस्वरूप परमात्मा सब प्रकारकी उपाधियोंसे रहित हैं। एकमात्र ज्ञानयोगके द्वारा उनके तत्त्वका बोध होता है। वे सबसे परे हैं। सत्, चित् और आनन्द ही उनका स्वरूप है। वे स्वयं प्रकाशमय परमात्मा नित्य शुद्ध स्वरूप हैं तथापि तत्त्व आदि गुणोंके भेदसे तीन स्वरूप धारण करते हैं। उनके ये ही तीनों स्वरूप जगत्की सृष्टि, पालन और संहारके कारण होते हैं। मुने! जिस स्वरूपसे भगवान् इस जगत्की सृष्टि करते हैं, उसीका नाम

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ब्रह्मा है। ये ब्रह्माजी जिनके नाभिकमलसे उत्पन्न हुए हैं, वे ही आनन्दस्वरूप परमात्मा विष्णु इस जगत्का पालन करते हैं। उनसे बढ़कर दूसरा कोई नहीं है। वे सम्पूर्ण जगत्के अन्तर्यामी आत्मा हैं। समस्त संसारमें वे ही व्याप्त हो रहे हैं। वे सबके साक्षी तथा निरञ्जन हैं। वे ही भिन्न और अभिन्न रूपमें स्थित परमेश्वर हैं। उन्हींकी शक्ति महामाया है, जो जगत्की सत्ताका विश्वास धारण कराती है। विश्वकी उत्पत्तिका आदिकारण होनेसे विद्वान् पुरुष उसे प्रकृति कहते हैं। आदिसृष्टिके समय लोकरचनाके लिये उद्यत हुए भगवान् महाविष्णुके प्रकृति, पुरुष और काल—ये तीन रूप प्रकट होते हैं। शुद्ध अन्तःकरणवाले ब्रह्मरूपसे जिसका साक्षात्कार करते हैं, जो विशुद्ध परम धाम कहलाता है, वही विष्णुका परम पद है। इसी प्रकार वे शुद्ध, अक्षर, अनन्त परमेश्वर ही कालरूपमें स्थित हैं। वे ही सत्त्व, रज, तम-रूप तीनों गुणोंमें विराज रहे हैं तथा गुणोंके आधार भी वे ही हैं। वे सर्वव्यापी परमात्मा ही इस जगत्के आदि-स्रष्टा हैं। जगद्गुरु पुरुषोत्तमके समीप स्थित हुई प्रकृति जब क्षोभ (चञ्चलता)-को प्राप्त हुई, तो उससे महत्तत्त्वका प्रादुर्भाव हुआ; जिसे समष्टि-बुद्धि भी कहते हैं। फिर उस महत्तत्त्वसे अहंकार उत्पन्न हुआ। अहंकारसे सूक्ष्म तन्मात्राएँ और एकादश इन्द्रियाँ प्रकट हुईं। तत्पश्चात् तन्मात्राओंसे पञ्च महाभूत प्रकट हुए, जो इस स्थूल जगत्के कारण हैं। नारदजी! उन भूतोंके नाम हैं—आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी। ये क्रमशः एक-एकके कारण होते हैं।

तदनन्तर संसारकी सृष्टि करनेवाले भगवान् ब्रह्माजीने तामस सर्गकी रचना की। तिर्यग् योनिवाले पशु-पक्षी तथा मृग आदि जन्तुओंको उत्पन्न किया। उस सर्गको पुरुषार्थका साधक न मानकर ब्रह्माजीने अपने सनातन स्वरूपसे देवताओंको (सात्त्विक सर्गको) उत्पन्न किया। तत्पश्चात् उन्होंने मनुष्योंकी (राजस सर्गकी) सृष्टि की। इसके बाद दक्ष आदि पुत्रोंको जन्म दिया, जो सृष्टिके कार्यमें तत्पर हुए। ब्रह्माजीके इन पुत्रोंसे देवताओं, असुरों तथा मनुष्योंसहित यह सम्पूर्ण जगत् भरा हुआ है। भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक तथा सत्यलोक—ये सात लोक क्रमशः एकके ऊपर एक स्थित हैं। विप्रवर! अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल तथा पाताल—ये सात पाताल क्रमशः एकके नीचे एक स्थित हैं। इन सब लोकोंमें रहनेवाले लोकपालोंको भी ब्रह्माजीने उत्पन्न किया। भिन्न-भिन्न देशोंके कुल पर्वतों और नदियोंकी भी सृष्टि की तथा वहाँके निवासियोंके लिये जीविका आदि सब आवश्यक वस्तुओंकी भी यथायोग्य व्यवस्था की। इस पृथ्वीके मध्यभागमें मेरु पर्वत है, जो समस्त देवताओंका निवासस्थान है। जहाँ पृथ्वीकी अन्तिम सीमा है, वहाँ लोकालोक पर्वतकी स्थिति है। मेरु तथा लोकालोक पर्वतके बीचमें सात समुद्र और सात द्वीप हैं। विप्रवर! प्रत्येक द्वीपमें सात-सात मुख्य पर्वत तथा निरन्तर जल प्रवाहित करनेवाली अनेक विख्यात नदियाँ भी हैं। वहाँके निवासी मनुष्य देवताओंके समान तेजस्वी होते हैं। जम्बू, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौञ्च, शाक तथा पुष्कर—ये सात द्वीपोंके नाम हैं। वे सब-की-सब देवभूमियाँ हैं। ये सातों द्वीप सात समुद्रोंसे घिरे हुए हैं। क्षारोद, इक्षुरसोद, सुरोद, घृत, दधि, दुग्ध तथा स्वादु जलसे भरे हुए वे समुद्र उन्हीं नामोंसे प्रसिद्ध हैं। इन द्वीपों और समुद्रोंको क्रमशः पूर्व-पूर्वकी अपेक्षा उत्तरोत्तर दूने विस्तारवाले जानना चाहिये। ये सब लोकालोक पर्वततक स्थित हैं। क्षार समुद्रसे उत्तर और हिमालय पर्वतसे दक्षिणके प्रदेशको 'भारतवर्ष'

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

समझना चाहिये। वह समस्त कर्मोंका फल देनेवाला है।

नारदजी! भारतवर्षमें मनुष्य जो सात्त्विक, राजसिक और तामसिक तीन प्रकारके कर्म करते हैं, उनका फल भोगभूमियोंमें क्रमशः भोगा जाता है। विप्रवर! भारतवर्षमें किया हुआ जो शुभ अथवा अशुभ कर्म है, उसका क्षणभङ्गुर (बचा हुआ) फल जो जीवोंद्वारा अन्यत्र भोगा जाता है। आज भी देवतालोग भारतभूमिमें जन्म लेनेकी इच्छा करते हैं। वे सोचते हैं, 'हमलोग कब संचित किये हुए महान् अक्षय, निर्मल एवं शुभ पुण्यके फलस्वरूप भारतवर्षकी भूमिपर जन्म लेंगे और कब वहाँ महान् पुण्य करके परम पदको प्राप्त होंगे। अथवा वहाँ नाना प्रकारके दान, भाँति-भाँतिके यज्ञ या तपस्याके द्वारा जगदीश्वर श्रीहरिकी आराधना करके उनके नित्यानन्दमय अनामय पदको कब प्राप्त कर लेंगे।' नारदजी! जो भारतभूमिमें जन्म लेकर भगवान् विष्णुकी आराधनामें लग जाता है, उसके समान पुण्यात्मा तीनों लोकोंमें कोई नहीं है। भगवान्‌के नाम और गुणोंका कीर्तन जिसका स्वभाव बन जाता है, जो भगवद्भक्तोंका प्रिय होता है अथवा जो महापुरुषोंकी सेवा-शुश्रूषा करता है, वह देवताओंके लिये भी वन्दनीय है। जो नित्य भगवान् विष्णुकी आराधनामें तत्पर है अथवा हरि-भक्तोंके स्वागत-सत्कारमें संलग्न रहता है और उन्हें भोजन कराकर बचे हुए (श्रेष्ठ) अन्नका स्वयं सेवन करता है, वह भगवान् विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है। जो अहिंसा आदि धर्मोंके पालनमें तत्पर होकर शान्तभावसे रहता है और भगवान्‌के 'नारायण, कृष्ण तथा वासुदेव' आदि नामोंका उच्चारण करता है, वह श्रेष्ठ इन्द्रादि देवताओंके लिये भी वन्दनीय है। जो मानव 'शिव, नीलकण्ठ तथा शङ्कर' आदि नामोंद्वारा भगवान् शिवका स्मरण करता तथा सदा सम्पूर्ण जीवोंके हितमें संलग्न रहता है, वह (भी) देवताओंके लिये पूजनीय माना गया है। जो गुरुका भक्त, शिवका ध्यान करनेवाला, अपने आश्रम-धर्मके पालनमें तत्पर, दूसरोंके दोष न देखनेवाला, पवित्र तथा कार्यकुशल है, वह भी देवेश्वरोंद्वारा पूज्य होता है। जो ब्राह्मणोंका हित-साधन करता है, वर्णधर्म और आश्रमधर्ममें श्रद्धा रखता है तथा सदा वेदोंके स्वाध्यायमें तत्पर होता है, उसे 'पङ्क्तिपावन' मानना चाहिये। जो देवेश्वर भगवान् नारायण तथा शिवमें कोई भेद नहीं देखता, वह ब्रह्माजीके लिये भी सदा वन्दनीय है; फिर हमलोगोंकी तो बात ही क्या है? नारदजी! जो गौओंके प्रति क्षमाशील—उनपर क्रोध न करनेवाला, ब्रह्मचारी, परायी निन्दासे दूर रहनेवाला तथा संग्रहसे रहित है, वह भी देवताओंके लिये पूजनीय है। जो चोरी आदि दोषोंसे पराङ्मुख है, दूसरोंद्वारा किये हुए उपकारको याद रखता है, सत्य बोलता है, बाहर और भीतरसे पवित्र रहता है तथा दूसरोंकी भलाईके कार्यमें सदा संलग्न रहता है, वह देवता और असुर सबके लिये पूजनीय होता है। जिसकी बुद्धि वेदार्थ श्रवण करने, पुराणकी कथा सुनने तथा सत्सङ्गमें लगी होती है, वह भी इन्द्रादि देवताओंद्वारा वन्दनीय होता है। जो भारतवर्षमें रहकर श्रद्धापूर्वक पूर्वोक्त प्रकारके अनेकानेक सत्कर्म करता रहता है, वह हमलोगोंके लिये वन्दनीय है।

जो शीघ्र ही इन पुण्यात्माओंमेंसे किसी एककी श्रेणीमें अपने-आपको ले जानेकी चेष्टा नहीं करता, वह पापाचारी एवं मूढ़ ही है; उससे बढ़कर बुद्धिहीन दूसरा कोई नहीं है। जो भारतवर्षमें जन्म लेकर पुण्यकर्मसे विमुख होता है, वह अमृतका घड़ा छोड़कर विषके पात्रको

In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अपनाता है। मुने! जो मनुष्य वेदों और स्मृतियोंमें बताये धर्मोंका आचरण करके अपने-आपको पवित्र नहीं करता, वही आत्महत्यारा तथा पापियोंका अगुआ है। मुनीश्वर! जो कर्मभूमि भारतवर्षका आश्रय लेकर धर्मका आचरण नहीं करता, वह वेदज्ञ महात्माओंद्वारा सबसे 'अधम' कहा गया है। जो शुभ-कर्मोंका परित्याग करके पाप-कर्मोंका सेवन करता है, वह कामधेनुको छोड़कर आकका दूध खोजता फिरता है। विप्रवर! इस प्रकार ब्रह्मा आदि देवता भी अपने भोगोंके नाशसे भयभीत होकर भारतवर्षके भू-भागकी प्रशंसा किया करते हैं। अतः भारतवर्षको सबसे अधिक पवित्र तथा उत्तम समझना चाहिये। यह देवताओंके लिये भी दुर्लभ तथा सब कर्मोंका फल देनेवाला है। जो इस पुण्यमय भूखण्डमें सत्कर्म करनेके लिये उद्यत होता है, उसके समान भाग्यशाली तीनों लोकोंमें दूसरा कोई नहीं है। जो इस भारतवर्षमें जन्म लेकर अपने कर्मबन्धनको काट डालनेकी चेष्टा करता है, वह नररूपमें छिपा हुआ साक्षात् 'नारायण' है। जो परलोकमें उत्तम फल प्राप्त करनेकी इच्छा रखता है, उसे आलस्य छोड़कर सत्कर्मोंका अनुष्ठान करना चाहिये। उन कर्मोंको भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुको समर्पित कर देनेपर उनका फल अक्षय माना गया है। यदि कर्मफलोंकी ओरसे मनमें वैराग्य हो तो अपने पुण्यकर्मको भगवान् विष्णुमें प्रेम होनेके लिये उनके चरणोंमें समर्पित कर दे। ब्रह्मलोकतलके सभी लोक पुण्यक्षय होनेपर पुनर्जन्म देनेवाले होते हैं; परंतु जो कर्मोंका फल नहीं चाहता, वह भगवान् विष्णुके परम पदको प्राप्त कर लेता है। भगवान्‌की प्रसन्नताके लिये वेद-शास्त्रोंद्वारा बताये हुए आश्रमानुकूल कर्मोंका अनुष्ठान करना चाहिये। जिसने कर्म-फलकी कामना त्याग दी है, वह अविनाशी पदको प्राप्त होता है। मनुष्य निष्काम हो या सकाम, उसे विधिपूर्वक कर्म अवश्य करना चाहिये। जो अपने वर्ण और आश्रमके कर्म छोड़ देता है, वह विद्वान् पुरुषोंद्वारा पतित कहा जाता है। नारदजी! सदाचारपरायण ब्राह्मण अपने ब्रह्मतेजके साथ वृद्धिको प्राप्त होता है। यदि वह भगवान्‌के चरणोंमें भक्ति रखता है तो उसपर भगवान् विष्णु बहुत प्रसन्न होते हैं। समस्त धर्मोंके फल भगवान् वासुदेव हैं, तपस्याका चरम लक्ष्य भी वासुदेव ही हैं, वासुदेवके तत्त्वको समझ लेना ही उत्तम ज्ञान है तथा वासुदेवको प्राप्त कर लेना ही उत्तम गति है। ब्रह्माजीसे लेकर कीटपर्यन्त यह सम्पूर्ण स्थावर-जङ्गम जगत् वासुदेवस्वरूप है, उनसे भिन्न कुछ भी नहीं है। वे ही ब्रह्मा और शिव हैं, वे ही देवता, असुर तथा यज्ञरूप हैं, वे ही यह ब्रह्माण्ड भी हैं। उनसे भिन्न अपनी पृथक् सत्ता रखनेवाली दूसरी कोई वस्तु नहीं है। जिनसे पर या अपर कोई वस्तु नहीं है तथा जिनसे अत्यन्त लघु और महान् भी कोई नहीं है, उन्हीं भगवान् विष्णुने इस विचित्र विश्वको व्याप्त कर रखा है, स्तुति करनेयोग्य उन देवाधिदेव श्रीहरिको सदा प्रणाम करना चाहिये*।

---

* वासुदेवपरो धर्मो वासुदेवपरं तपः। वासुदेवपरं ज्ञानं वासुदेवपरा गतिः॥
वासुदेवात्मकं सर्वं जगत् स्थावरजङ्गमम्। आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं तस्मादन्यन्न विद्यते॥
स एव धाता त्रिपुरान्तकश्च स एव देवासुरयज्ञरूपः। स एव ब्रह्माण्डमिदं ततोऽन्यन्न किंचिदस्ति व्यतिरिक्तरूपम्॥
यस्मात्परं नापरमस्ति किंचिद्यस्मादणीयान्न तथा महीयान्। व्याप्तं हि तेनेदमिदं विचित्रं तं देवदेवं प्रणमेत्समीड्यम्॥
(ना० पु० ३। ८०—८३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

श्रद्धा-भक्ति, वर्णाश्रमोचित आचार तथा सत्सङ्गकी महिमा, मृकण्डु मुनिकी तपस्यासे संतुष्ट होकर भगवान्‌का मुनिको दर्शन तथा वरदान देना

श्रीसनकजी कहते हैं—नारद! श्रद्धापूर्वक आचरणमें लाये हुए सब धर्म मनोवाञ्छित फल देनेवाले होते हैं। श्रद्धासे सब कुछ सिद्ध होता है और श्रद्धासे ही भगवान् श्रीहरि संतुष्ट होते हैं[१]। भक्तियोगका साधन भक्तिपूर्वक ही करना चाहिये तथा सत्कर्मोंका अनुष्ठान भी श्रद्धा-भक्तिसे ही करना चाहिये। विप्रवर नारद! श्रद्धाहीन कर्म कभी सिद्ध नहीं होते। जैसे सूर्यका प्रकाश समस्त जीवोंकी चेष्टामें कारण होता है, उसी प्रकार भक्ति सम्पूर्ण सिद्धियोंका परम कारण है। जैसे जल सम्पूर्ण लोकोंका जीवन माना गया है, उसी प्रकार भक्ति सब प्रकारकी सिद्धियोंका जीवन है। जैसे सब जीव-जन्तु पृथ्वीका आश्रय लेकर जीवन धारण करते हैं, उसी प्रकार भक्तिका सहारा लेकर सब कार्योंका साधन करना चाहिये। श्रद्धालु पुरुषको धर्मका लाभ होता है, श्रद्धालु ही धन पाता है, श्रद्धासे ही कामनाओंकी सिद्धि होती है तथा श्रद्धालु पुरुष ही मोक्ष पाता है[२] मुनिश्रेष्ठ! दान, तपस्या अथवा बहुत दक्षिणावाले यज्ञ भी यदि भक्तिसे रहित हैं तो उनके द्वारा भगवान् विष्णु संतुष्ट नहीं होते हैं। मेरु पर्वतके बराबर सुवर्णकी करोड़ों सहस्र राशियोंका दान भी यदि बिना श्रद्धा-भक्तिके किया जाय तो वह निष्फल होता है। बिना भक्ति जो तपस्या की जाती है, वह केवल शरीरको सुखाना मात्र है; बिना भक्ति जो हविष्यका हवन किया जाता है, वह राखमें डाली हुई आहुतिके समान व्यर्थ है, श्रद्धा-भक्तिके साथ मनुष्य जो कुछ थोड़ा-सा भी सत्कर्म करता है, वह उसे अनन्त कालतक अक्षय सुख देनेवाला होता है। ब्रह्मन्! वेदोक्त अश्वमेध यज्ञका एक सहस्र बार अनुष्ठान क्यों न किया जाय, यदि वह श्रद्धा-भक्तिसे रहित है तो सब-का-सब निष्फल होता है। भगवान्‌की उत्तम भक्ति मनुष्योंके लिये कामधेनुके समान मानी गयी है; उसके रहते हुए भी अज्ञानी मनुष्य संसाररूपी विषका पान करते हैं, यह कितने आश्चर्यकी बात है! ब्रह्मपुत्र नारदजी! इस असार संसारमें ये तीन बातें ही सार हैं—'भगवद्भक्तोंका सङ्ग, भगवान् विष्णुकी भक्ति और सुख-दुःख आदि द्वन्द्वोंको सहन करनेका स्वभाव[३]। ब्रह्मन्! जिनके मनमें दूसरोंके दोष देखनेकी प्रवृत्ति है, उनके किये हुए भजन-दान आदि सभी कर्मोंको निष्फल जानो। भगवान् विष्णु उनसे बहुत दूर हैं। जो दूसरोंकी सम्पत्ति देखकर मन-ही-मन संतप्त होते हैं, जिनका चित्त पाखण्डपूर्ण आचारोंमें ही लगता है, वे व्यर्थ कर्म करनेवाले हैं। भगवान् श्रीहरि उनसे बहुत दूर हैं। जो बड़े-बड़े धर्मोंके विषयमें प्रश्न करते हैं, किंतु उन धर्मोंको झूठा बताते हैं और धर्म-कर्मके विषयमें जिनका मन श्रद्धा-भक्तिसे रहित है, ऐसे लोगोंसे भगवान्

---

१. श्रद्धापूर्वाः सर्वधर्मा मनोरथफलप्रदाः। श्रद्धया साध्यते सर्वं श्रद्धया तुष्यते हरिः॥ (ना० पु० ४।१)

२. श्रद्धावाँल्लभते धर्मं श्रद्धावानर्थमाप्नुयात्। श्रद्धया साध्यते कामः श्रद्धावान् मोक्षमाप्नुयात्॥ (ना० पु० ४।६)

३. हरिभक्तिः परा नृणां कामधेनूपमा स्मृता। तस्यां सत्यां पिबन्त्यज्ञाः संसारगरलं ह्यहो॥
असारभूते संसारे सारमेतदजात्मज। भगवद्भक्तसङ्गश्च हरिभक्तिस्तितिक्षुता॥ (ना० पु० ४।१२-१३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विष्णु बहुत दूर हैं। धर्मका प्रतिपादन वेदमें किया गया है और वेद साक्षात् परम पुरुष नारायणका स्वरूप है। अतः वेदोंमें जो अश्रद्धा रखनेवाले हैं, उनसे भगवान् बहुत दूर हैं[१]। जिसके दिन धर्मानुष्ठानके बिना ही आते और चले जाते हैं, वह लुहारकी धौंकनीके समान साँस लेता हुआ भी जीवित नहीं है। ब्रह्मनन्दन! धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—ये चार पुरुषार्थ सनातन हैं। श्रद्धालु पुरुषोंको ही इनकी सिद्धि होती है; श्रद्धाहीनको नहीं [२]। जो मानव अपने वर्णाश्रमोचित आचारका उल्लङ्घन किये बिना ही भगवान् विष्णुकी भक्तिमें तत्पर है, वह उस वैकुण्ठधाममें जाता है, जिसका दर्शन बड़े-बड़े ज्ञानी भक्तोंको सुलभ होता है। मुनीश्वर! जो अपने आश्रमके अनुकूल वेदोक्त धर्मोंका पालन करते हुए भगवान् विष्णुके भजन-ध्यानमें लगा रहता है, वह परम पदको प्राप्त होता है। आचारसे धर्म प्रकट होता है और धर्मके स्वामी भगवान् विष्णु हैं। अतः जो अपने आश्रमके आचारमें संलग्न है, उसके द्वारा भगवान् श्रीहरि सर्वदा पूजित होते हैं[३]। जो छहों अङ्गोंसहित वेदों और उपनिषदोंका ज्ञाता होकर भी अपने वर्णाश्रमोचित आचारसे गिरा हुआ है, उसीको पतित समझना चाहिये; क्योंकि वह धर्म-कर्मसे भ्रष्ट हो चुका है। भगवान्‌की भक्तिमें तत्पर तथा भगवान् विष्णुके ध्यानमें लीन होकर भी जो अपने वर्णाश्रमोचित आचारसे भ्रष्ट हो, उसे पतित कहा जाता है। द्विजश्रेष्ठ! वेद, भगवान् विष्णुकी भक्ति अथवा शिवभक्ति भी आचार-भ्रष्ट मूढ़ पुरुषको पवित्र नहीं करती है। ब्रह्मन्! पुण्यक्षेत्रोंमें जाना, पवित्र तीर्थोंका सेवन करना अथवा भाँति-भाँतिके यज्ञोंका अनुष्ठान भी आचार-भ्रष्ट पुरुषकी रक्षा नहीं करता। आचारसे स्वर्ग प्राप्त होता है, आचारसे सुख मिलता है और आचारसे ही मोक्ष सुलभ होता है; आचारसे क्या नहीं मिलता?

साधुश्रेष्ठ! सम्पूर्ण आचारोंका, समस्त योगोंका तथा स्वयं हरिभक्तिका भी मूल कारण भक्ति ही मानी गयी है। सबको मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले भगवान् विष्णु भक्तिसे ही पूजित होते हैं। अतः भक्ति सम्पूर्ण लोकोंकी माता कही जाती है। जैसे सब जीव माताका ही आश्रय लेकर जीवन धारण करते हैं, उसी प्रकार समस्त धार्मिक पुरुष भक्तिका आश्रय लेकर जीते हैं। नारदजी! अपने वर्ण और आश्रमके आचारका पालन करनेमें लगे हुए पुरुषको यदि भगवान् विष्णुकी भक्ति प्राप्त हो जाय तो तीनों लोकोंमें उसके समान दूसरा कोई नहीं है। भक्तिसे कर्मोंकी सिद्धि होती है, उन कर्मोंसे भगवान् विष्णु संतुष्ट होते हैं, उनके संतुष्ट होनेपर ज्ञान प्राप्त होता है और ज्ञानसे मोक्ष मिलता है। भक्ति तो भगवद्भक्तोंके सङ्गसे प्राप्त होती है, किंतु भगवद्भक्तोंका सङ्ग मनुष्योंको पूर्वजन्मोंके संचित पुण्यसे ही मिलता है। जो वर्णाश्रमोचित कर्तव्यके पालनमें तत्पर, भगवद्भक्तिके सच्चे अभिलाषी तथा काम, क्रोध आदि दोषोंसे मुक्त हैं, वे ही सम्पूर्ण लोकोंको शिक्षा देनेवाले संत हैं[४]। ब्रह्मन्! जो पुण्यात्मा अथवा जितेन्द्रिय नहीं हैं, उन्हें परम उत्तम सत्सङ्गकी प्राप्ति नहीं होती। यदि सत्सङ्ग मिल जाय तो उसमें पूर्वजन्मोंके संचित पुण्यको ही कारण जानना चाहिये। जिसके पूर्वजन्मोंमें किये हुए समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं, उसीको

१. वेदप्रणिहितो धर्मो वेदो नारायणः परः। तत्राश्रद्धापरा ये तु तेषां दूरतरो हरिः॥ (ना० पु० ४। १७)
२. धर्मार्थकाममोक्षाख्याः पुरुषार्थाः सनातनाः। श्रद्धावतां हि सिध्यन्ति नान्यथा ब्रह्मनन्दन॥ (ना० पु० ४। १९)
३. आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः। आश्रमाचारयुक्तेन पूजितः सर्वदा हरिः॥ (ना० पु० ४। २२)
४. वर्णाश्रमाचाररता भगवद्भक्तिलालसाः। कामादिदोषनिर्मुक्तास्ते सन्तो लोकशिक्षकाः॥ (ना० पु०४। ३४)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सत्सङ्ग सुलभ होता है; अन्यथा उसकी प्राप्ति असम्भव है। सूर्य अपनी किरणोंके समूहसे दिनमें बाहरके अन्धकारका नाश करते हैं, किंतु संत-महात्मा अपने उत्तम वचनरूपी किरणोंके समुदायसे सदा भीतरके अज्ञानान्धकारका नाश करते रहते हैं। संसारमें भगवद्भक्तिके लिये लालायित रहनेवाले पुरुष दुर्लभ हैं; उनका सङ्ग जिसे प्राप्त होता है, उसे सनातन शान्ति सुलभ होती है।

नारदजीने पूछा—भगवद्भक्त पुरुषोंका क्या लक्षण है? वे कैसा कर्म करते हैं तथा उन्हें कैसे लोककी प्राप्ति होती है? यह सब आप यथार्थरूपसे बताइये। सनकजी! आप सुदर्शनचक्रधारी देवाधिदेव लक्ष्मीपति भगवान् विष्णुके भक्त हैं। अतः आप ही ये सब बातें बतानेमें समर्थ हैं। आपसे बढ़कर दूसरा कोई नहीं है।

सनकजीने कहा—ब्रह्मन्! योगनिद्रासे मुक्त होनेपर जगदीश्वर भगवान् विष्णुने बुद्धिमान् महात्मा मार्कण्डेयजीको जिस परम गोपनीय रहस्यका उपदेश किया था, वही तुम्हें बतलाता हूँ, सुनो। वे जो परम ज्योतिःस्वरूप देवाधिदेव सनातन भगवान् विष्णु हैं, वे ही जगत्-रूपमें प्रकट होते हैं। इस जगत्के स्रष्टा भी वे ही हैं। भगवान् शिव तथा ब्रह्माजी भी उन्हींके स्वरूप हैं। वे प्रलयकालमें भयंकर रुद्ररूपसे प्रकट होते हैं और समस्त ब्रह्माण्डको अपना ग्रास बनाते हैं। स्थावर-जङ्गमरूप सम्पूर्ण जगत् नष्ट होकर जब एकार्णवके जलमें विलीन हो जाता है, उस समय भगवान् विष्णु ही वटवृक्षके पत्रपर शिशुरूपसे शयन करते हैं। उनका एक-एक रोम असंख्य ब्रह्मा आदिसे विभूषित होता है। महाप्रलयके समय जब भगवान् वटपत्रपर सो रहे थे, उस समय उसी स्थानपर भगवान् नारायणके परम भक्त महाभाग मार्कण्डेयजी भगवान्की विविध लीलाओंका दर्शन करते हुए खड़े थे।

ऋषियोंने पूछा—मुने! हमने पहलेसे सुन रखा है कि उस महाभयंकर प्रलयकालमें स्थावर-जङ्गम समस्त प्राणी नष्ट हो गये थे और एकमात्र भगवान् श्रीहरि ही विराजमान थे। जब समस्त चराचर जगत् नष्ट होकर एकार्णवमें विलीन हो चुका था, तब सबको अपना ग्रास बनानेवाले श्रीहरिने मार्कण्डेय मुनिको किसलिये बचा रखा था? सूतजी! इस विषयको लेकर हमारे मनमें बड़ा कौतूहल हो रहा है। अतः इसका निवारण कीजिये। भगवान् विष्णुकी सुयश-सुधाका पान करनेमें किसे आलस्य हो सकता है!

सूतजी बोले—ब्राह्मणो! पूर्वकालमें मृकण्डु नामसे विख्यात एक महाभाग मुनि हो गये हैं। उन महातपस्वी महर्षिने शालग्राम नामक महान् तीर्थमें बड़ी भारी तपस्या की। ब्रह्मन्! उन्होंने दस हजार युगोंतक सनातन ब्रह्मका गुणगान करते हुए उपवास किया। वे बड़े क्षमाशील, सत्यप्रतिज्ञ तथा जितेन्द्रिय थे। समस्त प्राणियोंको अपने समान देखते थे। उनके मनमें विषय-भोगोंके लिये तनिक भी कामना नहीं थी। वे सम्पूर्ण जीवोंके हितैषी तथा मन और इन्द्रियोंको वशमें रखनेवाले थे। उन्होंने उक्त तीर्थमें बड़ी भारी तपस्या की। उनकी तपस्यासे शङ्कित हो इन्द्र आदि सब देवता उस समय अनामय परमेश्वर भगवान् नारायणकी शरणमें गये। क्षीरसागरके उत्तर तटपर जाकर देवताओंने देवदेवेश्वर जगद्गुरु पद्मनाभका इस प्रकार स्तवन किया।

देवता बोले—हे अविनाशी नारायण! हे अनन्त! हे शरणागतपालक! हम सब देवता मृकण्डु मुनिकी तपस्यासे भयभीत हो आपकी शरणमें आये हैं। आप हमारी रक्षा कीजिये। देवाधिदेवेश्वर! आपकी जय हो। शङ्ख और गदा धारण करनेवाले देवता! आपकी जय हो। यह सम्पूर्ण जगत् आपका

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

स्वरूप है। आपको नमस्कार है। आप ही ब्रह्माण्डकी उत्पत्तिके आदि कारण हैं। आपको नमस्कार है। देवदेवेश्वर! आपको नमस्कार है। लोकपाल! आपको नमस्कार है। सम्पूर्ण जगत्की रक्षा करनेवाले! आपको नमस्कार है। लोकसाक्षिन्! आपको नमस्कार है। ध्यानगम्य! आपको नमस्कार है। ध्यानके हेतुभूत! ध्यानस्वरूप तथा ध्यानके साक्षी परमेश्वर! आपको नमस्कार है। पृथिवी आदि पाँच भूत आपके ही स्वरूप हैं; आपको नमस्कार है। आप चैतन्यरूप हैं; आपको नमस्कार है। आप सबसे ज्येष्ठ हैं, आपको नमस्कार है। आप शुद्धस्वरूप हैं, निर्गुण हैं तथा गुणरूप हैं; आपको नमस्कार है। निराकार-साकार तथा अनेक रूप धारण करनेवाले आपको नमस्कार है। गौओं तथा ब्राह्मणोंके हितैषी! आपको नमस्कार है। जगत्का हित-साधन करनेवाले सच्चिदानन्दस्वरूप गोविन्द! आपको बार-बार नमस्कार है।

इस प्रकार देवताओंद्वारा की हुई स्तुतिको सुनकर शङ्ख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान् लक्ष्मीपतिने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया। उनके नेत्र खिले हुए कमलदलके समान शोभा पा रहे थे। उनका करोड़ों सूर्योंके समान प्रभाव था। सब प्रकारके दिव्य आभूषणोंसे वे युक्त थे। भगवान्के वक्षःस्थलपर श्रीवत्सचिह्न सुशोभित हो रहा था। वे पीताम्बर धारण किये हुए थे। उनकी आकृति बड़ी सौम्य थी। बायें कंधेपर सुनहले रंगका यज्ञोपवीत चमक रहा था। बड़े-बड़े महर्षि उनकी स्तुति कर रहे थे तथा श्रेष्ठ पार्षद उन्हें सब ओरसे घेरकर खड़े थे। उनका दर्शन करके वे सम्पूर्ण देवता उनके तेजके समक्ष फीके पड़ गये और बड़ी प्रसन्नताके साथ पृथिवीपर लेटकर अपने आठों अङ्गोंसे उन्हें प्रणाम किया। तब प्रसन्न हुए भगवान् विष्णु प्रणाम करनेवाले इन्द्रादि देवताओंको आनन्दित करते हुए गम्भीर वाणीमें बोले।

श्रीभगवान्ने कहा—देवताओ! मैं जानता हूँ, मृकण्डु मुनिकी तपस्यासे तुम्हारे मनमें बड़ा खेद हो रहा है, परंतु वे महर्षि साधुपुरुषोंमें अग्रगण्य हैं। अतः तुम्हें कष्ट नहीं देंगे। श्रेष्ठ देवताओ! जो साधुपुरुष हैं, वे सम्पत्तिमें हों या विपत्तिमें, किसी प्रकार भी दूसरेको कष्ट नहीं देते। वे स्वप्नमें भी ऐसा नहीं करते। सज्जनो! जो मानव सम्पूर्ण जगत्का हित करनेवाला, दूसरोंके दोष न देखनेवाला तथा ईर्ष्यारहित है, वह इहलोक और परलोकमें साधुपुरुषोंद्वारा 'निःशङ्क' कहा जाता है। सशङ्क व्यक्ति सदा दुःखी रहता है और निःशङ्क पुरुष सुख पाता है। अतः तुमलोग निश्चिन्त होकर अपने-अपने घर जाओ। मृकण्डु मुनि तुम्हें कोई कष्ट नहीं देंगे। इसके सिवा तुम्हारी रक्षा करनेवाला मैं तो हूँ ही। अतः सुखपूर्वक विचरो।

इस प्रकार अलसीके फूलकी भाँति श्यामकान्तिवाले भगवान् विष्णु देवताओंको वर देकर उनके देखते-देखते वहीं अन्तर्धान हो गये। देवताओंका मन प्रसन्न हो गया। वे जैसे आये थे, उसी प्रकार स्वर्गको लौट गये। भगवान् श्रीहरिने प्रसन्न होकर मृकण्डुको भी प्रत्यक्ष दर्शन दिया। जो स्वयंप्रकाश, निरञ्जन एवं निराकार परब्रह्म हैं, वही अलसीके फूलके समान श्यामसुन्दर विग्रह धारण करके प्रकट हो गये। दिव्य आयुधोंसे सुशोभित उन पीताम्बरधारी भगवान् विष्णुको देखकर मृकण्डु मुनि आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने ध्यानसे आँखें खोलकर देखा, भगवान् विष्णु सम्मुख विराजमान हैं। उनके मुखसे प्रसन्नता टपक रही है, वे शान्तभावसे स्थित हैं। जगत्का धारण-पोषण उन्हींके द्वारा होता है। यह सम्पूर्ण विश्व उन्हींका तेज है। भगवान्का दर्शन करके मुनिका शरीर पुलकित हो उठा। उनके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

श्रीयुगलछबि

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

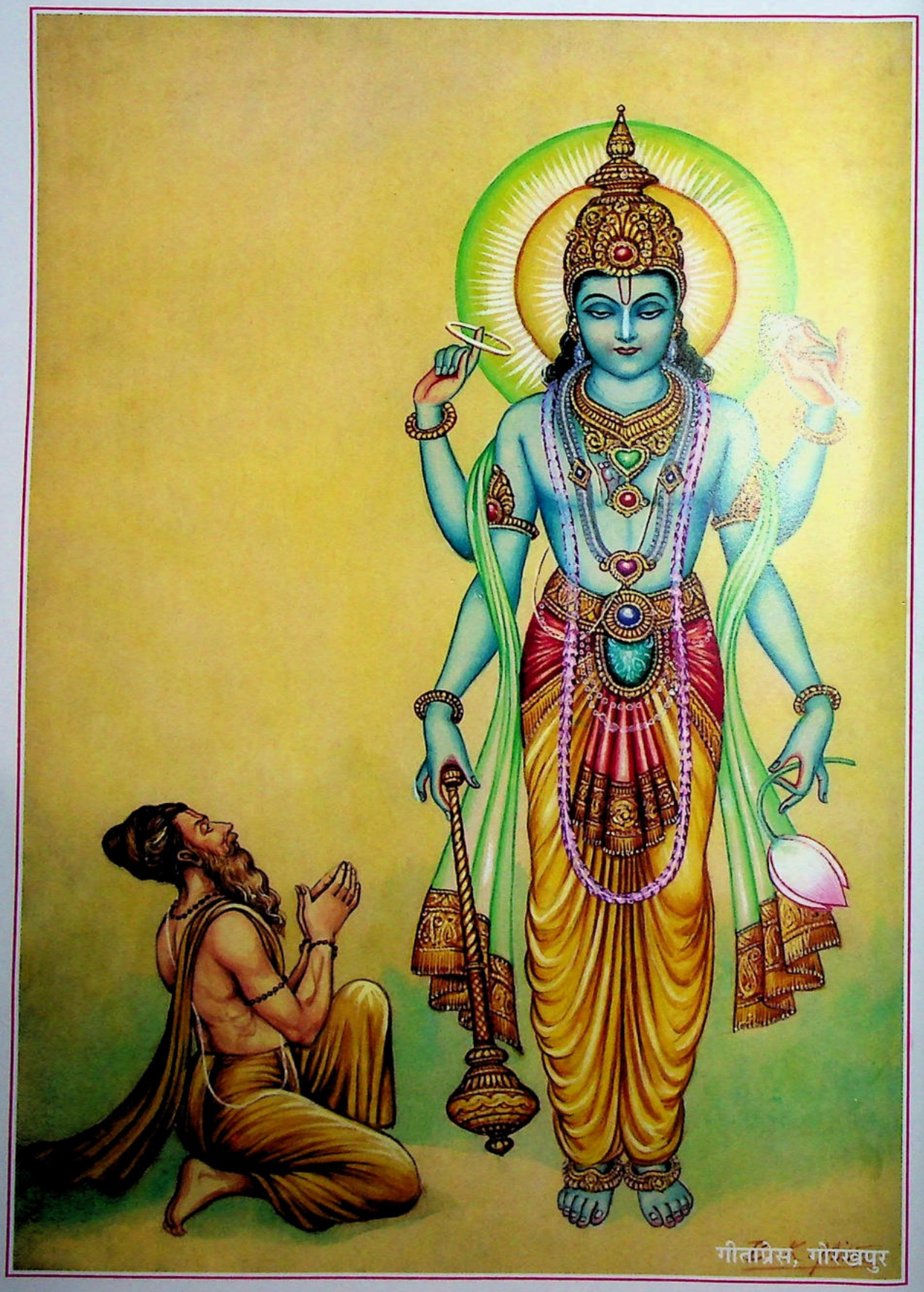

भगीरथको भगवान् विष्णुके दर्शन

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

गायत्रीका ध्यान

प्रातःकाल　　मध्याह्न　　सायंकाल

Hinduism Discord Server https://discord.gg/rthdHHeet
Public Domain Digitized by Sarayu Trust Foundation
MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

भगवान् श्रीरामका ध्यान

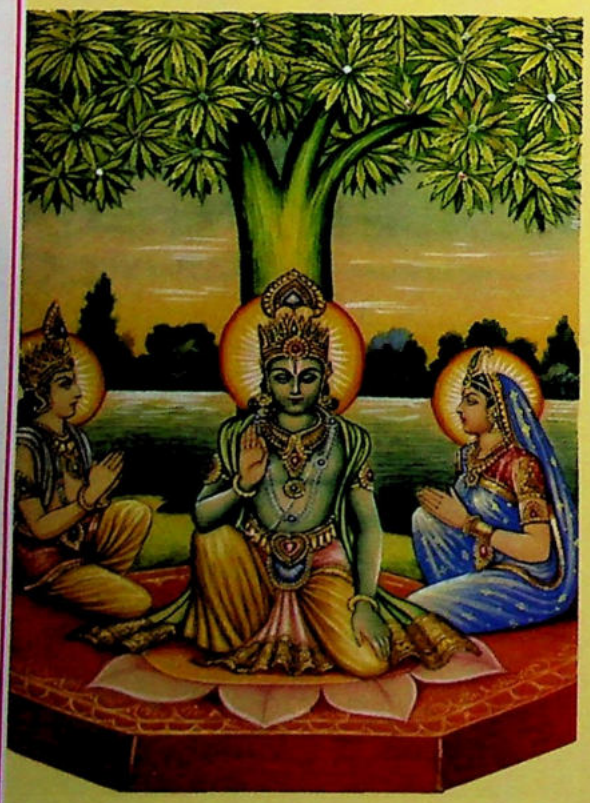

भगवान् रामका सरयूतटका ध्यान,

श्रीसीताजीका ध्यान

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

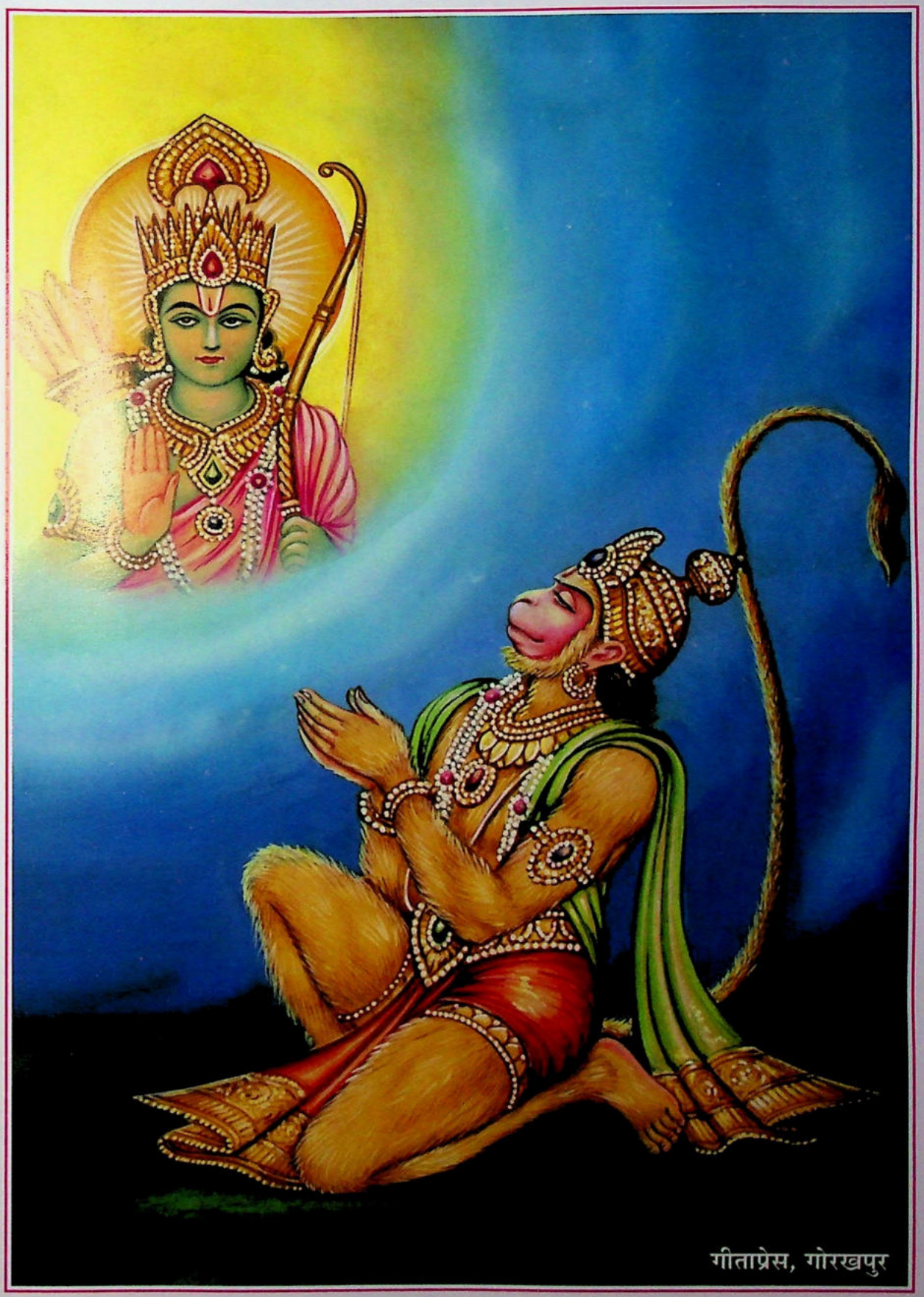

श्रीहनुमान्‌जी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

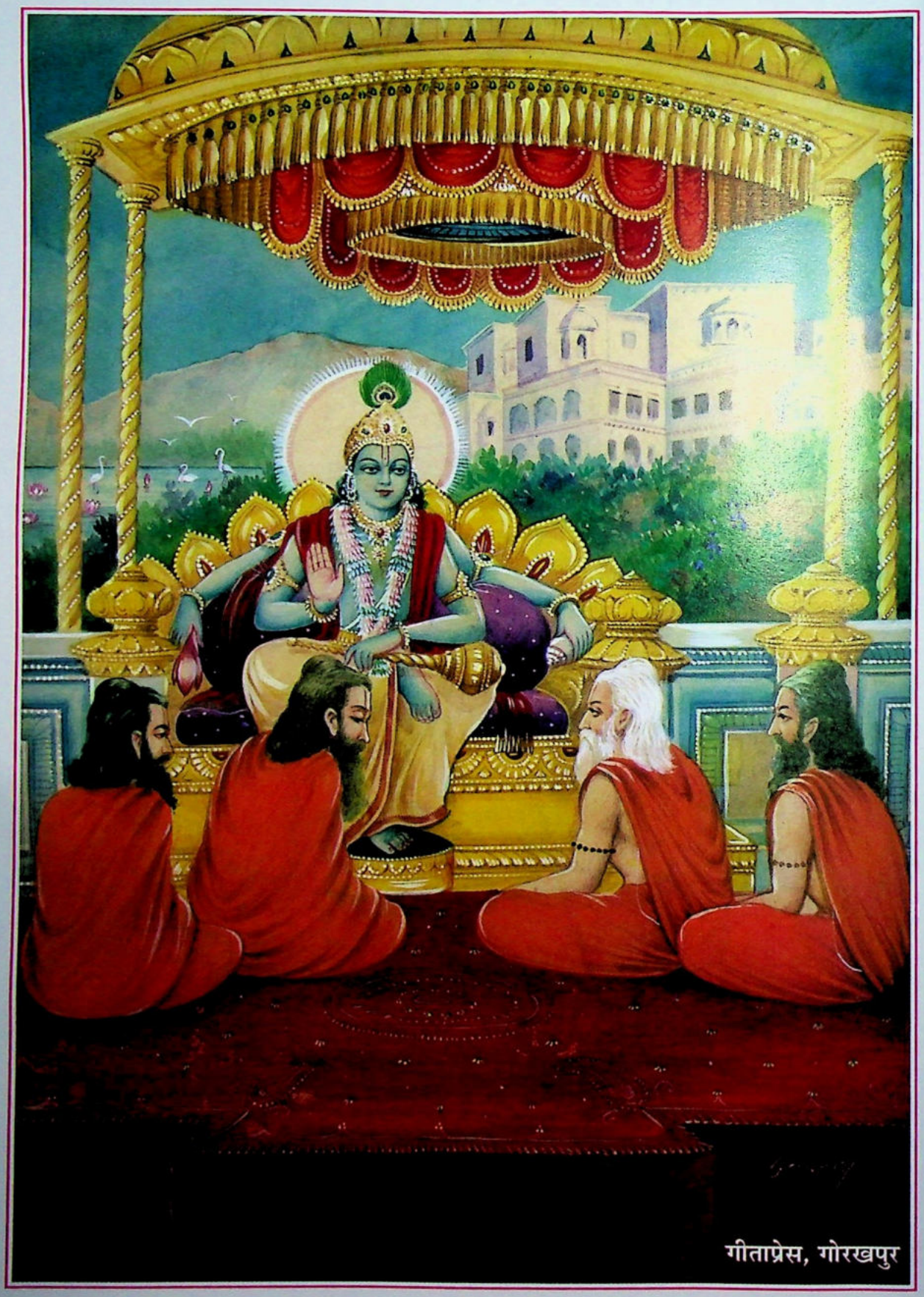

श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् श्रीरामका ध्यान

In Public Domain. Digitized by Sarayu Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

भगवान् शिवजीका ताण्डव नृत्य

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नेत्रोंसे आनन्दके आँसू झरने लगे। उन्होंने पृथ्वीपर दण्डकी भाँति गिरकर उन देवाधिदेव सनातन परमात्माको प्रणाम किया। फिर हर्षजनक आँसुओंसे भगवान्‌के दोनों चरण पखारते हुए वे सिरपर अञ्जलि बाँधे उनकी स्तुति करने लगे।

मृकण्डुजी बोले—परमात्मस्वरूप परमेश्वरको नमस्कार है। जो परसे भी अति परे हैं, जिनका पार पाना असम्भव है, जो दूसरोंपर अनुग्रह करनेवाले तथा दूसरोंको संसार-सागरके उस पार पहुँचा देनेवाले हैं, उन भगवान् श्रीहरिको नमस्कार है। जो नाम और जाति आदिकी कल्पनाओंसे रहित हैं, जिनका स्वरूप शब्दादि विषयोंके दोषसे दूर है, जिनके अनेक स्वरूप हैं तथा जो तमोगुणसे सर्वथा शून्य हैं, उन स्तुति करनेयोग्य परमेश्वरका मैं भजन करता हूँ। जो वेदान्तवेद्य और पुराणपुरुष हैं, ब्रह्मा आदिसे लेकर सम्पूर्ण जगत् जिनका स्वरूप है, जिनकी कहीं भी उपमा नहीं है तथा जो भक्तजनोंपर अनुग्रह करनेवाले हैं, उन स्तवन करनेयोग्य आदिपरमेश्वरकी मैं आराधना करता हूँ। जिनके समस्त दोष दूर हो गये हैं, जो एकमात्र ध्यानमें स्थित रहते हैं, जिनकी कामना निवृत्त और मोह दूर हो गये हैं,ऐसे महात्मा पुरुष जिनका दर्शन करते हैं, संसार-बन्धनको नष्ट करनेवाले उन परम पवित्र परमात्माको मैं प्रणाम करता हूँ। जो स्मरणमात्रसे समस्त पीड़ाओंका नाश कर देते हैं, शरणमें आये हुए भक्तजनोंका पालन करते हैं, जो समस्त संसारके सेव्य हैं तथा सम्पूर्ण जगत् जिनके भीतर निवास करता है, उन करुणासागर परमेश्वर विष्णुको मैं नमस्कार करता हूँ।

महर्षि मृकण्डुके इस प्रकार स्तुति करनेपर शङ्ख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान् विष्णुको बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने अपनी चार विशाल भुजाओंसे खींचकर मुनिको हृदयसे लगा लिया और अत्यन्त प्रेमपूर्वक कहा—'उत्तम व्रतका पालन करनेवाले मुने! तुम सर्वथा निष्पाप हो, तुम्हारी तपस्या और स्तुतिसे मैं बहुत प्रसन्न हूँ। तुम कोई वर माँगो। सुव्रत! तुम्हारे मनको जो अभीष्ट हो, वही वर माँग लो।'

मृकण्डुने कहा—देवदेव! जगन्नाथ! मैं कृतार्थ हो गया, इसमें तनिक भी संशय नहीं है; क्योंकि जो पुण्यात्मा नहीं हैं, उनके लिये आपका दर्शन सर्वथा दुर्लभ है। ब्रह्मा आदि देवता तथा तीक्ष्ण व्रतका पालन करनेवाले योगीजन भी जिनका दर्शन नहीं कर पाते, धर्मनिष्ठ, यज्ञोंकी दीक्षा लेनेवाले यजमान, वीतराग साधक तथा ईर्ष्यारहित साधुओंको भी जिनका दर्शन दुर्लभ है, उन्हीं परम तेजोमय आप श्रीहरिका मैं दर्शन कर रहा हूँ, इससे बढ़कर दूसरा क्या वर माँगूँ? जगद्गुरु जनार्दन! मैं इतनेसे ही कृतार्थ हूँ। अच्युत! महापातकी मनुष्य भी आपके नामोंका स्मरण करनेमात्रसे आपके परम पदको प्राप्त कर लेते हैं; फिर जो आपका दर्शन कर लेता है, उसके लिये तो कहना ही क्या है?

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

श्रीभगवान् बोले—ब्रह्मन्! तुमने ठीक कहा है। विद्वन्! मैं तुमपर बहुत प्रसन्न हूँ, मेरा दर्शन कदापि व्यर्थ नहीं होगा। अतः तुम्हारी तपस्यासे संतुष्ट होकर मैं तुम्हारे यहाँ (अंशरूपसे) समस्त गुणोंसे युक्त, रूपवान् तथा दीर्घजीवी पुत्रके रूपमें उत्पन्न होऊँगा। मुनिश्रेष्ठ! जिसके कुलमें मेरा जन्म होता है, उसका समस्त कुल मोक्षको प्राप्त कर लेता है। मेरे प्रसन्न होनेपर तीनों लोकोंमें कौन-सा कार्य असाध्य है।

ऐसा कहकर देवदेवेश्वर भगवान् विष्णु मृकण्डु मुनिके देखते-देखते अन्तर्धान हो गये। तदनन्तर वे मुनि तपस्यासे निवृत्त हो गये।

मार्कण्डेयजीको पिताका उपदेश, समय-निरूपण, मार्कण्डेयद्वारा भगवान्‌की स्तुति और भगवान्‌का मार्कण्डेयजीको भगवद्भक्तोंके लक्षण बताकर वरदान देना

नारदजीने पूछा—ब्रह्मन्! पुराणोंमें यह सुना जाता है कि चिरञ्जीवी महामुनि मार्कण्डेयने इस जगत्‌के प्रलयकालमें भगवान् विष्णुकी मायाका दर्शन किया था, अतः इस विषयमें कहिये।

श्रीसनकजीने कहा—नारदजी! मैं उस सनातन कथाका वर्णन करूँगा, आप सावधान होकर सुनें। मार्कण्डेय मुनिसे सम्बन्ध रखनेवाली यह कथा भगवान् विष्णुकी भक्तिसे परिपूर्ण है। साधुशिरोमणि मृकण्डुने तपस्यासे निवृत्त होनेके बाद विवाह करके प्रसन्नतापूर्वक गृहस्थधर्मका पालन आरम्भ किया। वे मन और इन्द्रियोंका संयम करके सदा प्रसन्न रहते और कृतार्थताका अनुभव करते थे। उनकी पत्नी बड़ी पवित्र, कार्यकुशल तथा निरन्तर पतिकी सेवामें तत्पर रहनेवाली थीं। वे मन, वाणी और शरीरसे भी पातिव्रत-धर्मका पालन करती थीं। समय आनेपर उन्होंने भगवान्‌के तेजोमय अंशसे युक्त गर्भ धारण किया और दस महीनेके बाद एक परम तेजस्वी पुत्रको जन्म दिया। महर्षि मृकण्डु उत्तम लक्षणोंसे सुशोभित पुत्रको देखकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने विधिपूर्वक मङ्गलमय जातकर्म-संस्कार सम्पन्न कराया। मुनिका वह पुत्र शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी भाँति दिन-दिन बढ़ने लगा। विप्रवर! तदनन्तर पाँचवें वर्षमें प्रसन्नतापूर्वक पुत्रका उपनयन-संस्कार करके मुनिने उसे वैदिक-धर्म-संहिताकी शिक्षा दी और कहा—'बेटा! ब्राह्मणोंका दर्शन होनेपर सदा विधिपूर्वक उन्हें नमस्कार करना चाहिये। तीनों समय सूर्यको जलाञ्जलि देकर उनकी पूजा करना और वेदोंके स्वाध्यायपूर्वक वेदोक्त कर्मका पालन करते रहना चाहिये। ब्रह्मचर्य तथा तपस्याके द्वारा सदा श्रीहरिकी पूजा करनी चाहिये। दुष्ट पुरुषोंसे वार्तालाप आदि निषिद्ध कर्मको त्याग देना चाहिये। भगवान् विष्णुके भजनमें लगे हुए साधुपुरुषोंके साथ रहना चाहिये। किसीसे भी द्वेष रखना उचित नहीं है। सबके हितका साधन करना चाहिये। वत्स! यज्ञ, अध्ययन और दान—ये कर्म तुम्हें सदा करने चाहिये।

इस प्रकार पिताका आदेश पाकर मुनीश्वर मार्कण्डेय नित्य-निरन्तर भगवान् विष्णुका चिन्तन करते हुए स्वधर्मका पालन करने लगे। महाभाग मार्कण्डेय बड़े धर्मानुरागी और दयालु थे। वे मनको वशमें रखनेवाले और सत्यप्रतिज्ञ थे। वे जितेन्द्रिय, शान्त, महाज्ञानी और सम्पूर्ण तत्त्वोंके मर्मज्ञ थे। उन्होंने भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये बड़ी भारी तपस्या की। बुद्धिमान् मार्कण्डेयके आराधना करनेपर जगदीश्वर भगवान् विष्णुने उन्हें पुराणसंहिता बनानेका वर दिया। चिरञ्जीवी मार्कण्डेयजी सुदर्शनचक्रधारी देवाधिदेव भगवान् विष्णुके महान् भक्त और उनके तेजके अंश

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

(अ० ५ श्लोक ६) थे। ब्रह्मन्! यह संसार जब एकार्णवके जलमें विलीन हो गया, उस समय भी उन्हें अपना प्रभाव दिखानेके लिये भगवान् विष्णुने उनका संहार नहीं किया। मृकण्डुपुत्र मार्कण्डेय बड़े बुद्धिमान् और विष्णुभक्त थे। भगवान् श्रीहरि स्वयं जबतक सोते रहे, तबतक मार्कण्डेयजी वहाँ खड़े रहे। उस समयका माप मैं बतला रहा हूँ, सुनिये। पंद्रह निमेषकी एक काष्ठा बतायी गयी है। नारदजी! तीस काष्ठाकी एक कला समझनी चाहिये। तीस कलाका एक क्षण होता है और छः क्षणोंकी एक घड़ी मानी गयी है। दो घड़ीका एक मुहूर्त्त और तीस मुहूर्त्तका एक दिन होता है। तीस दिनका एक मास होता है और एक मासमें दो पक्ष होते हैं। दो मासका एक ऋतु और तीन ऋतुओंका एक अयन माना गया है। दो अयनसे एक वर्ष बनता है, जो देवताओंका एक दिन है। उत्तरायण देवताओंका दिन है और दक्षिणायन उनकी रात्रि है। मनुष्योंके एक मासके बराबर पितरोंका एक दिन कहा जाता है। इसलिये सूर्य और चन्द्रमाके संयोगमें अर्थात् अमावस्याके दिन उत्तम पितृकल्प जानना चाहिये। बारह हजार दिव्य वर्षोंका एक दैवत युग होता है। दो हजार दैवत युगके बराबर ब्रह्माके एक दिन-रात्रिका मान है। वह मनुष्योंके लिये सृष्टि और प्रलय दोनों मिलकर ब्रह्माका दिन-रात-रूप एक कल्प है। इकहत्तर दिव्य चतुर्युगका एक मन्वन्तर होता है और चौदह मन्वन्तरोंसे ब्रह्माजीका एक दिन पूरा होता है। मुने! जितना बड़ा ब्रह्माजीका दिन होता है, उतनी ही बड़ी उनकी रात्रि भी बतायी गयी है। विप्रवर! ब्रह्माजीकी रात्रिके समय तीनों लोकोंका नाश हो जाता है। मानव वर्ष-गणनाके अनुसार उसका जो प्रमाण है, वह सुनो। मुने! एक हजार चतुर्युग (चार हजार युग)-का ब्रह्माजीका एक दिन होता है। ऐसे ही तीस दिनोंका एक मास और बारह महीनोंका उनका एक वर्ष समझना चाहिये। ऐसे सौ वर्षोंमें उनकी आयु पूरी होती है। उनके काल-मानके अनुसार उनकी सम्पूर्ण आयुका समय दो परार्धका होता है। ब्रह्माजीका दो परार्ध भगवान् विष्णुके लिये एक दिन समझना चाहिये। इतनी ही बड़ी उनकी रात्रि भी बतायी गयी है। मृकण्डुनन्दन मार्कण्डेयजी उतने ही समयतक उस भयंकर एकार्णवके जलमें भगवान् विष्णुकी शक्तिसे बलवान् होकर सूखे पत्तेकी भाँति खड़े रहे। उस समय वे श्रीहरिके समीप परमात्मतत्त्वका ध्यान करते हुए स्थित थे।

तदनन्तर प्रलयकालका अन्त समय आनेपर योगनिद्रासे मुक्त हो श्रीहरिने ब्रह्माजीके रूपसे इस चराचर जगत्की रचना की। जलका उपसंहार और जगत्की नूतन सृष्टि देखकर मार्कण्डेयजी चकित हो गये। उन्होंने अत्यन्त प्रसन्न होकर श्रीहरिके चरणोंमें प्रणाम किया। महामुनि मार्कण्डेयने सिरपर अञ्जलि बाँधे नित्यानन्दस्वरूप श्रीहरिका प्रिय वचनोंद्वारा इस प्रकार स्तवन किया।

Public Domain. Digitized by Sarayu Trust. Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

मार्कण्डेयजी बोले—जिनके सहस्रों मस्तक हैं, रोग-शोक आदि विकारसे जो सर्वथा रहित हैं, जिनका कोई आधार नहीं है (स्वयं ही सबके आधार हैं) तथा जो सर्वत्र व्यापक हैं, मनुष्योंसे सदा प्रार्थित होनेवाले उन भगवान् नारायणदेवको मैं सदा प्रणाम करता हूँ। जो प्रमाणसे परे तथा जरावस्थासे रहित हैं, नित्य एवं सच्चिदानन्दस्वरूप हैं तथा जहाँ कोई तर्क या संकेत काम नहीं देता, उन भगवान् जनार्दनको मैं प्रणाम करता हूँ। जो परम अक्षर, नित्य, विश्वके आदिकारण तथा जगत्के उत्पत्तिस्थान हैं, उन सर्वतत्त्वमय शान्तस्वरूप भगवान् जनार्दनको मैं नमस्कार करता हूँ। जो पुरातन पुरुष सब प्रकारकी सिद्धियोंसे सम्पन्न और सम्पूर्ण ज्ञानके एकमात्र आश्रय हैं, जिनका स्वरूप परसे भी अति परे है, उन भगवान् जनार्दनको मैं नमस्कार करता हूँ। जो परम ज्योति, परम धाम तथा परम पवित्र पद हैं, जिनकी सबके साथ एकरूपता है, उन परमात्मा जनार्दनको मैं प्रणाम करता हूँ। सत्, चित् और आनन्द ही जिनका स्वरूप है, जो सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मादि देवताओंके लिये भी परम पद हैं, उन सर्वस्वरूप श्रेष्ठ सनातन भगवान् जनार्दनको मैं नमस्कार करता हूँ। जो सगुण, निर्गुण, शान्त, मायातीत और विशुद्ध मायाके अधिपति हैं तथा जो रूपरहित होते हुए भी अनेक रूपवाले हैं, उन भगवान् जनार्दनको मैं प्रणाम करता हूँ। जो भगवान् इस जगत्की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं, उन आदिदेव भगवान् जनार्दनको मैं नमस्कार करता हूँ। परेश! परमानन्द! शरणागतवत्सल! दयासागर! मेरी रक्षा कीजिये। मन-वाणीसे अतीत परमेश्वर! आपको नमस्कार है।

विप्रवर नारदजी! शङ्ख, चक्र और गदा धारण करनेवाले जगद्गुरु भगवान् विष्णु इस प्रकार स्तुति करनेवाले मार्कण्डेयजीसे अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक बोले।

श्रीभगवान्ने कहा—द्विजश्रेष्ठ! संसारमें जो भक्त पुरुष मुझ भगवान्की भक्तिमें चित्त लगाये रहनेवाले हैं, उनपर संतुष्ट हो मैं सदा उनकी रक्षा करता हूँ, इसमें संदेह नहीं है। भगवद्भक्तरूपसे अपनेको छिपाकर मैं ही सदा सब लोकोंकी रक्षा करता हूँ।

मार्कण्डेयजीने पूछा—भगवन्! भगवद्भक्तके क्या लक्षण हैं? किस कर्मसे मनुष्य भगवद्भक्त होते हैं, यह मैं सुनना चाहता हूँ; क्योंकि इस बातको जाननेके लिये मेरे मनमें बड़ी उत्कण्ठा है।

श्रीभगवान्ने कहा—मुनिश्रेष्ठ! भगवद्भक्तोंके लक्षण बतलाता हूँ, सुनो। उनके प्रभाव अथवा महिमाका वर्णन करोड़ों वर्षोंमें भी नहीं किया जा सकता। जो सम्पूर्ण जीवोंके हितैषी हैं, जिनमें दूसरोंके दोष देखनेकी आदत नहीं है, जो ईर्ष्यारहित, मन और इन्द्रियोंको वशमें रखनेवाले, निष्काम एवं शान्त हैं, वे ही भगवद्भक्तोंमें श्रेष्ठ माने गये हैं। जो मन, वाणी तथा क्रियाद्वारा दूसरोंको कभी पीड़ा नहीं देते तथा जिनमें संग्रह अथवा कुछ ग्रहण करनेका स्वभाव नहीं है, वे भगवद्भक्त माने गये हैं। जिनकी सात्त्विक बुद्धि उत्तम भगवत्सम्बन्धी कथा-वार्ता सुननेमें स्वभावतः लगी रहती है तथा जो भगवान् और उनके भक्तोंके भी भक्त होते हैं, वे श्रेष्ठ भक्त समझे जाते हैं। जो श्रेष्ठ मानव माता और पिताके प्रति गङ्गा और विश्वनाथका भाव रखकर उनकी सेवा करते हैं, वे भी श्रेष्ठ भगवद्भक्त हैं। जो भगवान्के पूजनमें रत हैं, जो इसमें सहायक होते हैं तथा जो भगवान्की पूजा देखकर उसका अनुमोदन करते हैं, वे उत्तम भगवद्भक्त हैं। जो व्रतियों तथा यतियोंकी सेवामें संलग्न तथा परायी निन्दासे दूर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रहते हैं, वे श्रेष्ठ भागवत हैं। जो श्रेष्ठ मनुष्य सबके लिये हितकारक वचन बोलते हैं और सबके गुणोंको ही ग्रहण करनेवाले हैं, वे इस लोकमें भगवद्भक्त माने गये हैं। जो श्रेष्ठ मानव सब जीवोंको अपने ही समान देखते तथा शत्रु और मित्रमें भी समान भाव रखते हैं, वे उत्तम भगवद्भक्त हैं। जो धर्मशास्त्रके वक्ता, सत्यवादी तथा साधुपुरुषोंके सेवक हैं, वे भगवद्भक्तोंमें श्रेष्ठ कहे गये हैं। जो पुराणोंकी व्याख्या करते, जो पुराण सुनते और पुराण-वक्तामें श्रद्धाभक्ति रखते हैं, वे श्रेष्ठ भगवद्भक्त हैं। जो मनुष्य सदा गौओं तथा ब्राह्मणोंकी सेवा करते और तीर्थयात्रामें लगे रहते हैं, वे श्रेष्ठ भगवद्भक्त हैं। जो मनुष्य दूसरोंका अभ्युदय देखकर प्रसन्न होते और भगवन्नामका जप करते रहते हैं, वे उत्तम भागवत हैं। जो बगीचे लगाते, तालाब और पोखरोंकी रक्षा करते तथा बावड़ी और कुएँ बनवाते हैं, वे उत्तम भक्त हैं। जो तालाब और देवमन्दिर बनवाते तथा गायत्री-मन्त्रके जपमें संलग्न रहते हैं, वे श्रेष्ठ भक्त हैं। जो हरिनामका आदर करते, उन्हें सुनकर अत्यन्त हर्षमें भर जाते और पुलकित हो उठते हैं, वे श्रेष्ठ भगवद्भक्त हैं। जो मनुष्य तुलसीका बगीचा देखकर उसको नमस्कार करते और कानोंमें तुलसी काष्ठ धारण करते हैं, वे उत्तम भगवद्भक्त हैं। जो तुलसीकी गन्ध सूँघकर तथा उसकी जड़के समीपकी मिट्टीको सूँघकर प्रसन्न होते हैं, वे भी श्रेष्ठ भक्त हैं। जो वर्णाश्रम-धर्मके पालनमें तत्पर, अतिथियोंका सत्कार करनेवाले तथा वेदार्थके वक्ता होते हैं, वे श्रेष्ठ भागवत माने गये हैं। जो भगवान् शिवसे प्रेम रखनेवाले, शिवके चिन्तनमें ही आसक्त रहनेवाले तथा शिवके चरणोंकी पूजामें तत्पर एवं त्रिपुण्ड्र धारण करनेवाले हैं, वे भी श्रेष्ठ भक्त हैं। जो भगवान् विष्णु तथा परमात्मा शिवके नाम लेते तथा रुद्राक्षकी मालासे विभूषित होते हैं, वे श्रेष्ठ भगवद्भक्त हैं। जो बहुत दक्षिणावाले यज्ञोंद्वारा महादेवजी अथवा भगवान् विष्णुका उत्तम भक्तिसे यजन करते हैं, वे श्रेष्ठ भगवद्भक्त हैं। जो पढ़े हुए शास्त्रोंका दूसरोंके हितके लिये उपदेश करते और सर्वत्र गुण ही ग्रहण करते हैं, वे उत्तम भक्त माने गये हैं। परमेश्वर शिव तथा परमात्मा विष्णुमें जो समबुद्धिसे प्रवृत्त होते हैं, वे श्रेष्ठ भक्त माने गये हैं। जो शिवकी प्रसन्नताके लिये अग्निहोत्रमें तत्पर पञ्चाक्षर मन्त्रके जपमें संलग्न तथा शिवके ध्यानमें अनुरक्त रहते हैं, वे उत्तम भागवत हैं। जो जलदानमें तत्पर, अन्नदानमें संलग्न तथा एकादशीव्रतके पालनमें लगे रहनेवाले हैं, वे श्रेष्ठ भक्त हैं। जो गोदान करते, कन्यादानमें तत्पर रहते और मेरी प्रसन्नताके लिये सत्कर्म करते हैं, वे श्रेष्ठ भगवद्भक्त हैं। विप्रवर मार्कण्डेय! यहाँपर कुछ ही भगवद्भक्तोंका वर्णन किया है। मैं भी सौ करोड़ वर्षोंमें भी उन सबका पूरा-पूरा वर्णन नहीं कर सकता। अतः विप्रवर! तुम भी सदा उत्तम शीलसे युक्त होकर रहो। समस्त प्राणियोंको आश्रय दो। मन और इन्द्रियोंको वशमें रखो। सबके प्रति मैत्रीभाव रखते हुए धर्माचरणमें लगे रहो। पुनः महाप्रलय-कालतक सब धर्मोंका पालन करते हुए मेरे स्वरूपके ध्यानमें तत्पर रहकर तुम परम मोक्ष प्राप्त कर लोगे।

देवताओंके स्वामी दयासिन्धु भगवान् विष्णु अपने भक्त मार्कण्डेयको इस प्रकार वरदान देकर वहीं अन्तर्धान हो गये। महाभाग मार्कण्डेयजी सदा भगवान्‌के भजनमें लगे रहकर उत्तम धर्मका पालन करने लगे। उन्होंने अनेक प्रकारके यज्ञोंद्वारा विधिपूर्वक भगवान्‌का पूजन किया। फिर महाक्षेत्र शालग्रामतीर्थमें उत्तम तपस्या की और भगवान्‌के ध्यानद्वारा कर्मबन्धनका नाश करके परम मोक्ष प्राप्त कर लिया। इसलिये

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान्‌की आराधना करनेवाला भक्त पुरुष समस्त प्राणियोंका हितकारी होता है। वह मनसे जो-जो वस्तुएँ पाना चाहता है, वह सब निस्संदेह प्राप्त कर लेता है।

सनकजी कहते हैं—विप्रवर नारद! तुमने जो कुछ पूछा था, उसके अनुसार यह सब भगवद्भक्तिका माहात्म्य मैंने तुम्हें बताया है। अब और क्या सुनना चाहते हो?

गङ्गा-यमुना-संगम, प्रयाग, काशी तथा गङ्गा एवं गायत्रीकी महिमा

सूतजी कहते हैं—भगवान्‌की भक्तिका यह माहात्म्य सुनकर नारदजी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने ज्ञान-विज्ञानके पारगामी सनक मुनिसे पुनः इस प्रकार प्रश्न किया।

नारदजी बोले—मुने! आप शास्त्रोंके पारदर्शी विद्वान् हैं। मुझपर बड़ी भारी दया करके यह ठीक-ठीक बताइये कि क्षेत्रोंमें उत्तम क्षेत्र तथा तीर्थोंमें उत्तम तीर्थ कौन है?

सनकजीने कहा—ब्रह्मन्! यह परम गोपनीय प्रसङ्ग है, सुनो। उत्तम क्षेत्रोंका यह वर्णन सब प्रकारकी सम्पत्तियोंको देनेवाला, श्रेष्ठ, बुरे स्वप्नोंका नाशक, पवित्र, धर्मानुकूल, पापहारी तथा शुभ है। मुनियोंको नित्य-निरन्तर इसका श्रवण करना चाहिये। गङ्गा और यमुनाका जो संगम है, उसीको महर्षिलोग शास्त्रोंमें उत्तम क्षेत्र तथा तीर्थोंमें उत्तम तीर्थ कहते हैं। ब्रह्मा आदि समस्त देवता, मुनि तथा पुण्यकी इच्छा रखनेवाले सब मनुष्य श्वेत और श्याम जलसे भरे हुए उस संगम-तीर्थका सेवन करते हैं। गङ्गाको परम पवित्र नदी समझना चाहिये; क्योंकि वह भगवान् विष्णुके चरणोंसे प्रकट हुई है। इसी प्रकार यमुना भी साक्षात् सूर्यकी पुत्री हैं। ब्रह्मन्! इन दोनोंका समागम परम कल्याणकारी है। मुने! नदियोंमें श्रेष्ठ गङ्गा स्मरणमात्रसे समस्त क्लेशोंका नाश करनेवाली, सम्पूर्ण पापोंको दूर करनेवाली तथा सारे उपद्रवोंको मिटा देनेवाली है। महामुने! समुद्रपर्यन्त पृथ्वीपर जो-जो पुण्यक्षेत्र हैं, उन सबसे अधिक पुण्यतम क्षेत्र प्रयागको ही जानना चाहिये। जहाँ ब्रह्माजीने यज्ञद्वारा भगवान् लक्ष्मीपतिका यजन किया है तथा सब महर्षियोंने भी वहाँ नाना प्रकारके यज्ञ किये हैं। सब तीर्थोंमें स्नान करनेसे जो पुण्य प्राप्त होते हैं, वे सब मिलकर गङ्गाजीके एक बूँद जलसे किये हुए अभिषेककी सोलहवीं कलाकी भी समता नहीं कर सकते। जो गङ्गासे सौ योजन दूर खड़ा होकर भी 'गङ्गा-गङ्गा' का उच्चारण करता है, वह भी सब पापोंसे मुक्त हो जाता है; फिर जो गङ्गामें स्नान करता है, उसके लिये तो कहना ही क्या है? भगवान् विष्णुके चरणकमलोंसे प्रकट होकर भगवान् शिवके मस्तकपर विराजमान होनेवाली भगवती गङ्गा मुनियों और देवताओंके द्वारा भी भलीभाँति सेवन करनेयोग्य हैं, फिर साधारण मनुष्योंके लिये तो बात ही क्या है?* श्रेष्ठ मनुष्य अपने ललाटमें जहाँ गङ्गाजीकी बालूका तिलक लगाते हैं, वहीं अर्धचन्द्रके नीचे प्रकाशित होनेवाला तृतीय नेत्र समझना चाहिये। गङ्गामें किया हुआ स्नान महान् पुण्यदायक तथा देवताओंके लिये भी दुर्लभ है; वह भगवान् विष्णुका सारूप्य देनेवाला होता है—इससे बढ़कर उसकी महिमाके विषयमें और क्या कहा जा सकता है? गङ्गामें स्नान करनेवाले पापी भी सब पापोंसे मुक्त हो श्रेष्ठ विमानपर बैठकर परम धाम वैकुण्ठको चले जाते हैं। जिन्होंने गङ्गामें स्नान किया है, वे महात्मा पुरुष पिता और माताके कुलकी बहुत-सी पीढ़ियोंको

* गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शते स्थितः। सोऽपि मुच्येत पापेभ्यः किमु गङ्गाभिषेकवान्॥
विष्णुपादोद्भवा देवी विश्वेश्वरशिरःस्थिता। संसेव्या मुनिभिर्देवैः किं पुनः पामरैर्जनैः॥
(ना० पूर्व० ६। १२-१३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उद्धार करके भगवान् विष्णुके धाममें चले जाते हैं। ब्रह्मन्! जो गङ्गाजीका स्मरण करता है, उसने सब तीर्थोंमें स्नान और सभी पुण्य-क्षेत्रोंमें निवास कर लिया—इसमें संशय नहीं है। गङ्गा-स्नान किये हुए मनुष्यको देखकर पापी भी स्वर्गलोकका अधिकारी हो जाता है। उसके अङ्गोंका स्पर्श करनेमात्रसे वह देवताओंका अधिपति हो जाता है। गङ्गा, तुलसी, भगवान्के चरणोंमें अविचल भक्ति तथा धर्मोपदेशक सद्गुरुमें श्रद्धा—ये सब मनुष्योंके लिये अत्यन्त दुर्लभ हैं[१]। उत्तम धर्मका उपदेश देनेवाले गुरुके चरणोंकी धूल, गङ्गाजीकी मृत्तिका तथा तुलसीवृक्षके मूलभागकी मिट्टीको जो मनुष्य भक्तिपूर्वक अपने मस्तकपर धारण करता है, वह वैकुण्ठ धामको जाता है। जो मनुष्य मन-ही-मन यह अभिलाषा करता है कि मैं कब गङ्गाजीके समीप जाऊँगा और कब उनका दर्शन करूँगा, वह भी वैकुण्ठ धामको जाता है। ब्रह्मन्! दूसरी बातें बहुत कहनेसे क्या लाभ, साक्षात् भगवान् विष्णु भी सैकड़ों वर्षोंमें गङ्गाजीकी महिमाका वर्णन नहीं कर सकते। अहो! माया सारे जगत्को मोहमें डाले हुए है, यह कितनी अद्भुत बात है? क्योंकि गङ्गा और उसके नामके रहते हुए भी लोग नरकमें जाते हैं। गङ्गाजीका नाम संसार-दुःखका नाश करनेवाला बताया गया है। तुलसीके नाम तथा भगवान्की कथा कहनेवाले साधु पुरुषके प्रति की हुई भक्तिका भी यही फल है। जो एक बार भी 'गङ्गा' इस दो अक्षरका उच्चारण कर लेता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है[२]। परम पुण्यमयी इस गङ्गा नदीका यदि मेष, तुला और मकरकी संक्रान्तियोंमें (अर्थात् वैशाख, कार्तिक और माघके महीनोंमें) भक्तिपूर्वक सेवन किया जाय तो सेवन करनेवाले सम्पूर्ण जगत्को यह पवित्र कर देती है। द्विजश्रेष्ठ! गोदावरी, भीमरथी, कृष्णा, नर्मदा, सरस्वती, तुङ्गभद्रा, कावेरी, यमुना, बाहुदा, वेत्रवती, ताम्रपर्णी तथा सरयू आदि सब तीर्थोंमें गङ्गाजी ही सबसे प्रधान मानी गयी हैं। जैसे सर्वव्यापी भगवान् विष्णु सम्पूर्ण जगत्को व्याप्त करके स्थित हैं, उसी प्रकार सब पापोंका नाश करनेवाली गङ्गादेवी सब तीर्थोंमें व्याप्त हैं। अहो! महान् आश्चर्य है! परम पावनी जगदम्बा गङ्गा स्नान-पान आदिके द्वारा सम्पूर्ण संसारको पवित्र कर रही हैं, फिर सभी मनुष्य इनका सेवन क्यों नहीं करते?

इसी प्रकार विख्यात काशीपुरी भी तीर्थोंमें उत्तम तीर्थ और क्षेत्रोंमें उत्तम क्षेत्र है। समस्त देवता उसका सेवन करते हैं। इस लोकमें कानवाले पुरुषोंके वे ही दोनों कान धन्य हैं और वे ही बहुत-से शास्त्रोंका ज्ञान धारण करनेवाले हैं, जिनके द्वारा बारम्बार काशीका नाम श्रवण किया गया है। द्विजश्रेष्ठ! जो मनुष्य अविमुक्त क्षेत्र काशीका स्मरण करते हैं, वे सब पापोंका नाश करके भगवान् शिवके लोकमें चले जाते हैं। मनुष्य सौ योजन दूर रहकर भी यदि अविमुक्त क्षेत्रका स्मरण करता है तो वह बहुतेरे पातकोंसे भरा होनेपर भी भगवान् शिवके रोग-शोकरहित नित्यधामको चला जाता है। ब्रह्मन्! जो प्राण निकलते समय अविमुक्त क्षेत्रका स्मरण कर लेता है, वह भी सब पापोंसे छूटकर शिवधामको प्राप्त हो जाता है। काशीके गुणोंके विषयमें यहाँ बहुत

१. गङ्गा च तुलसी चैव हरिभक्तिरचञ्चला। अत्यन्तदुर्लभा नृणां भक्तिर्धर्मप्रवक्तरि॥
(ना० पूर्व० ६। २१)

२. गङ्गाया महिमा ब्रह्मन् वक्तुं वर्षशतैरपि। न शक्यते विष्णुनापि किमन्यैर्बहुभाषितैः॥
अहो माया जगत्सर्वं मोहयत्येतदद्भुतम्। यतो वै नरकं यान्ति गङ्गानाम्नि स्थितेऽपि हि॥
संसारदुःखविच्छेदि गङ्गानाम प्रकीर्तितम्। तथा तुलस्या भक्तिश्च हरिकीर्तिप्रवक्तरि॥
सकृदप्युच्चरेद् यस्तु गङ्गेत्येवाक्षरद्वयम्। सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति॥
(ना० पूर्व० ६। २४—२७)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

कहनेसे क्या लाभ; जो काशीका नाम भी लेते हैं, उनसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—ये चारों पुरुषार्थ दूर नहीं रहते। ब्रह्मन्! गङ्गा और यमुनाका संगम (प्रयाग) तो काशीसे भी बढ़कर है; क्योंकि उसके दर्शनमात्रसे मनुष्य परम गतिको प्राप्त कर लेते हैं। सूर्यके मकर राशिपर रहते समय जहाँ कहीं भी गङ्गामें स्नान किया जाय, वह स्नान-पान आदिके द्वारा सम्पूर्ण जगत्को पवित्र करती और अन्तमें इन्द्रलोक पहुँचाती है। लोकका कल्याण करनेवाले लिङ्गस्वरूप भगवान् शङ्कर भी जिस गङ्गाका सदा सेवन करते हैं, उसकी महिमाका पूरा-पूरा वर्णन कैसे किया जा सकता है? शिवलिङ्ग साक्षात् श्रीहरिरूप है और श्रीहरि साक्षात् शिव-लिङ्गरूप हैं। इन दोनोंमें थोड़ा भी अन्तर नहीं है। जो इनमें भेद करता है, उसकी बुद्धि खोटी है। अज्ञानके समुद्रमें डूबे हुए पापी मनुष्य ही आदि-अन्तरहित भगवान् विष्णु और शिवमें भेदभाव करते हैं। जो सम्पूर्ण जगत्के स्वामी और कारणोंके भी कारण हैं, वे भगवान् विष्णु ही प्रलयकालमें रुद्ररूप धारण करते हैं। ऐसा विद्वान् पुरुषोंका कथन है। भगवान् रुद्र ही विष्णुरूपसे सम्पूर्ण जगत्का पालन करते हैं। वे ही ब्रह्माजीके रूपसे संसारकी सृष्टि करते हैं तथा अन्तमें हररूपसे वे ही तीनों लोकोंका संहार करते हैं। जो मनुष्य भगवान् विष्णु, शिव तथा ब्रह्माजीमें भेदबुद्धि करता है, वह अत्यन्त भयंकर नरकमें जाता है। जो भगवान् शिव, विष्णु और ब्रह्माजीको एक रूपसे देखता है, वह परमानन्दको प्राप्त होता है। यह शास्त्रोंका सिद्धान्त है। जो अनादि, सर्वज्ञ, जगत्के आदिस्रष्टा तथा सर्वत्र व्यापक हैं, वे भगवान् विष्णु ही शिवलिङ्गरूपसे काशीमें विद्यमान हैं। काशीपुरीका विश्वेश्वरलिङ्ग ज्योतिर्लिङ्ग कहलाता है। श्रेष्ठ मनुष्य उसका दर्शन करके परम ज्योतिको प्राप्त होता है। जिसने त्रिभुवनको पवित्र करनेवाली काशीपुरीकी परिक्रमा कर ली, उसके द्वारा समुद्र, पर्वत तथा सात द्वीपोंसहित पृथ्वीकी परिक्रमा हो गयी। धातु, मिट्टी, लकड़ी, पत्थर अथवा चित्र आदिसे निर्मित जो भगवान् शिव अथवा विष्णुकी निर्मल प्रतिमाएँ हैं, उन सबमें भगवान् विष्णु विद्यमान हैं। जहाँ तुलसीका बगीचा, कमलोंका वन और पुराणोंका पाठ हो, वहाँ भगवान् विष्णु स्थित रहते हैं। ब्रह्मन्! पुराणकी कथा सुननेमें जो प्रेम होता है, वह गङ्गास्नानके समान है तथा पुराणकी कथा कहनेवाले व्यासके प्रति जो भक्ति होती है, वह प्रयागके तुल्य मानी गयी है। जो पुराणोक्त धर्मका उपदेश देकर जन्म-मृत्युरूप संसार-सागरमें डूबे हुए जगत्का उद्धार करता है, वह साक्षात् श्रीहरिका स्वरूप बताया गया है। गङ्गाके समान कोई तीर्थ नहीं है, माताके समान कोई गुरु नहीं है, भगवान् विष्णुके समान कोई देवता नहीं है तथा गुरुसे बढ़कर कोई तत्त्व नहीं है[1]। जैसे चारों वर्णोंमें ब्राह्मण, नक्षत्रोंमें चन्द्रमा तथा सरोवरोंमें समुद्र श्रेष्ठ है, उसी प्रकार पुण्य तीर्थों और नदियोंमें गङ्गा सबसे श्रेष्ठ मानी गयी हैं। शान्तिके समान कोई बन्धु नहीं है, सत्यसे बढ़कर कोई तप नहीं है, मोक्षसे बड़ा कोई लाभ नहीं है और गङ्गाके समान कोई नदी नहीं है[2]। गङ्गाजीका उत्तम नाम पापरूपी वनको भस्म करनेके लिये दावानलके समान है। गङ्गा संसाररूपी रोगको दूर करनेवाली हैं, इसलिये यत्नपूर्वक उनका सेवन करना चाहिये। गायत्री और गङ्गा दोनों समस्त पापोंको हर लेनेवाली मानी गयी हैं। नारदजी! जो इन दोनोंके प्रति भक्तिभावसे रहित है, उसे पतित समझना चाहिये। गायत्री वेदोंकी माता हैं और जाह्नवी (गङ्गा)

१. नास्ति गङ्गासमं तीर्थं नास्ति मातृसमो गुरुः। नास्ति विष्णुसमं दैवं नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्॥
(ना० पूर्व० ६। ५८)

२. नास्ति शान्तिसमो बन्धुर्नास्ति सत्यात्परंतपः। नास्ति मोक्षात्परो लाभो नास्ति गङ्गासमा नदी॥
(ना० पूर्व० ६। ६०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सम्पूर्ण जगत्की जननी हैं। वे दोनों समस्त पापोंके नाशका कारण हैं। जिसपर गायत्री प्रसन्न होती हैं, उसपर गङ्गा भी प्रसन्न होती हैं। वे दोनों भगवान् विष्णुकी शक्तिसे सम्पन्न हैं, अतः सम्पूर्ण कामनाओंकी सिद्धि देनेवाली हैं। गङ्गा और गायत्री धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंके फलरूपमें प्रकट हुई हैं। ये दोनों निर्मल तथा परम उत्तम हैं और सम्पूर्ण लोकोंपर अनुग्रह करनेके लिये प्रवृत्त हुई हैं। मनुष्योंके लिये गायत्री और गङ्गा दोनों अत्यन्त दुर्लभ हैं। इसी प्रकार तुलसीके प्रति भक्ति और भगवान् विष्णुके प्रति सात्त्विक भक्ति भी दुर्लभ है। अहो! महाभागा गङ्गा स्मरण करनेपर समस्त पापोंका नाश करनेवाली, दर्शन करनेपर भगवान् विष्णुका लोक देनेवाली तथा जल पीनेपर भगवान्का सारूप्य प्रदान करनेवाली हैं। उनमें स्नान कर लेनेपर मनुष्य भगवान् विष्णुके उत्तम धामको जाते हैं*। जगत्का धारण-पोषण करनेवाले सर्वव्यापी सनातन भगवान् नारायण गङ्गा-स्नान करनेवाले मनुष्योंको मनोवाञ्छित फल देते हैं। जो श्रेष्ठ मानव गङ्गाजलके एक कणसे भी अभिषिक्त होता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो परम धामको प्राप्त कर लेता है। गङ्गाके जलविन्दुका सेवन करनेमात्रसे राजा सगरकी संतति परम पदको प्राप्त हुई।

असूया-दोषके कारण राजा बाहुकी अवनति और पराजय तथा उनकी मृत्युके बाद रानीका और्व मुनिके आश्रममें रहना

नारदजीने पूछा—मुनिश्रेष्ठ! राजा सगर कौन थे? वह सब मुझे बतानेकी कृपा करें।

सनकजीने कहा—मुनिवर! गङ्गाजीका उत्तम माहात्म्य सुनिये, जिनके जलका स्पर्श होनेमात्रसे राजा सगरका कुल पवित्र हो गया और सम्पूर्ण लोकोंमें सबसे उत्तम वैकुण्ठ धामको चला गया। सूर्यवंशमें बाहु नामवाले एक राजा हो गये हैं। उनके पिताका नाम वृक था। बाहु बड़े धर्मपरायण राजा थे और सारी पृथ्वीका धर्मपूर्वक पालन करते थे। उन्होंने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अन्य जीवोंको अपने-अपने धर्मकी मर्यादामें स्थापित किया था। महाराज बाहुने सातों द्वीपोंमें सात अश्वमेध यज्ञ किये और ब्राह्मणोंको गाय, भूमि, सुवर्ण तथा वस्त्र आदि देकर भलीभाँति तृप्त किया। नीतिशास्त्रके अनुसार उन्होंने चोर-डाकुओंको यथेष्ट दण्ड देकर शासनमें रखा और दूसरोंका संताप दूर करके अपनेको कृतार्थ माना। पृथ्वीपर बिना जोते-बोये अन्न पैदा होता और वह फल-फूलसे भरी रहती थी। मुनीश्वर! देवराज इन्द्र उनके राज्यकी भूमिपर समयानुसार वर्षा करते थे

* अहो गङ्गा महाभागा स्मृता पापप्रणाशिनी। हरिलोकप्रदा दृष्टा पीता सारूप्यदायिनी। यत्र स्नाता नरा यान्ति विष्णोः पदमनुत्तमम्॥ (ना० पूर्व० ६। ६७)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और पापाचारियोंका अन्त हो जानेके कारण वहाँकी प्रजा धर्मसे सुरक्षित रहती थी।

एक समय राजा बाहुके मनमें असूया (गुणोंमें दोष-दृष्टि)-के साथ बड़ा भारी अहंकार उत्पन्न हुआ, जो सब सम्पत्तियोंका नाश करनेवाला तथा अपने विनाशका भी हेतु है। वे सोचने लगे—मैं समस्त लोकोंका पालन करनेवाला बलवान् राजा हूँ। मैंने बड़े-बड़े यज्ञोंका अनुष्ठान किया है। मुझसे पूजनीय दूसरा कौन है? मैं विद्वान् हूँ, श्रीमान् हूँ। मैने सब शत्रुओंको जीत लिया है। मुझे वेद और वेदाङ्गोंके तत्त्वका ज्ञान है और नीतिशास्त्रका तो मैं बहुत बड़ा पण्डित हूँ। मुझे कोई जीत नहीं सकता। मेरे ऐश्वर्यको हानि नहीं पहुँचा सकता। इस पृथ्वीपर मुझसे बढ़कर दूसरा कौन है? इस प्रकार अहंकारके वशीभूत होनेपर उनके मनमें दूसरोंके प्रति दोषदृष्टि हो गयी। मुनीश्वर! दोषदृष्टि होनेसे उस राजाके हृदयमें काम प्रबल हो उठा। इन सब दोषोंके स्थित होनेपर मनुष्यका विनाश होना निश्चित है। यौवन, धन-सम्पत्ति, प्रभुता और अविवेक—इनमेंसे एक-एक भी अनर्थका कारण होता है, फिर जहाँ ये चारों मौजूद हों वहाँके लिये क्या कहना*? विप्रवर! उनके भीतर बड़ी भारी असूया पैदा हो गयी, जो लोकका विरोध, अपने देहका नाश तथा सब सम्पत्तियोंका अन्त करनेवाली होती है। सुव्रत! असूयासे भरे हुए चित्तवाले पुरुषोंके पास यदि धन-सम्पत्ति मौजूद हो तो उसे भूसेकी आगमें वायुके संयोगके समान समझो। जिनका चित्त दूसरोंके दोष देखनेमें लगा होता है, जो पाखण्डपूर्ण आचारका पालन करते हैं तथा सदा कटुवचन बोला करते हैं, उन्हें इस लोकमें और परलोकमें भी सुख नहीं मिलता। जिनका मन असूया-दोषसे दूषित है तथा जो सदा निष्ठुर भाषण किया करते हैं, उनके प्रियजन, पुत्र तथा भाई-बन्धु भी शत्रु बन जाते हैं। जो परायी स्त्रीको देखकर मन-ही-मन उसे प्राप्त करनेकी अभिलाषा करता है, वह अपनी सम्पत्तिका नाश करनेके लिये स्वयं ही कुठार बन गया है—इसमें संशय नहीं है। मुने! जो मनुष्य अपने कल्याणका नाश करनेके लिये प्रयत्न करता है, वही दूसरोंका कल्याण देखकर अपनी कुत्सित बुद्धिके कारण उनसे डाह करने लगता है। ब्रह्मन्! जो मित्र, संतान, गृह, क्षेत्र, धन-धान्य और पशु—सबकी हानि देखना चाहता हो, वही सदा दूसरोंसे असूया करे।

तदनन्तर जब राजा बाहुका हृदय असूया-दोषसे दूषित हो जानेके कारण वे अत्यन्त उद्दण्ड हो गये, तब हैहय और तालजङ्घ-कुलके क्षत्रिय उनके प्रबल शत्रु बन गये। असूया होनेपर दूसरे जीवोंके साथ द्वेष बहुत बढ़ जाता है—इसमें संदेह नहीं है। असूयासे दूषित चित्तवाले उस राजाका अपने शत्रुओंके साथ लगातार एक मासतक भयंकर युद्ध होता रहा। अन्तमें वे अपने वैरी हैहय और तालजङ्घ नामवाले क्षत्रियोंसे परास्त हो गये। अतः दुःखी होकर राजा बाहु अपनी गर्भवती पत्नीके साथ वनमें चले गये। वहाँ एक बहुत बड़ा तालाब देखकर उन्हें बड़ा संतोष हुआ; परंतु उनके मनमें तो असूया भरी हुई थी, इसलिये उनका भाव देखकर उस जलाशयके पक्षी भी इधर-उधर छिप गये। यह बड़े आश्चर्यकी बात हुई। उस समय बड़ी उतावलीके साथ अपने घोंसलोंमें समाते हुए वे पक्षी इस प्रकार कह रहे थे—'अहो! बड़े कष्टकी बात है। यहाँ तो कोई भयानक पुरुष आ गया।' राजाने अपनी दोनों पत्नियोंके साथ उस सरोवरमें प्रवेश करके जल पीया और वृक्षके नीचे उसकी सुखद छायामें जा बैठे। नारदजी! गुणवान् मनुष्य कोई भी क्यों न हो, वह सबके लिये श्लाघ्य होता है और सब प्रकारकी सम्पत्तियोंसे युक्त होनेपर भी गुणहीन मनुष्य सदा लोगोंसे निन्दित

* यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकता। एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्॥ (ना० पूर्व० ७। १५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ही होता है। द्विजश्रेष्ठ नारद! उस समय बाहुकी बहुत निन्दा हुई थी। वे संसारमें अपने पुरुषार्थ और यशका नाश करके मरे हुएकी भाँति वनमें रहते थे। अकीर्तिके समान कोई मृत्यु नहीं है। क्रोधके समान कोई शत्रु नहीं है। निन्दाके समान कोई पाप नहीं है और मोहके समान कोई भय नहीं है। असूयाके समान कोई अपकीर्ति नहीं है, कामके समान कोई आग नहीं है, रागके समान कोई बन्धन नहीं है और सङ्ग अथवा आसक्तिके समान कोई विष नहीं है[1] इ.स प्रकार बहुत विलाप करके राजा बाहु अत्यन्त दुःखित हो गये। मानसिक संताप और बुढ़ापेके कारण उनका शरीर जर्जरीभूत हो गया। मुनिश्रेष्ठ! इस तरह बहुत समय बीतनेके पश्चात् और्व मुनिके आश्रमके निकट रोगसे ग्रस्त होकर राजा बाहु संसारसे चल बसे। उनकी छोटी पत्नी यद्यपि गर्भवती थी तो भी दुःखसे आतुर हो दीर्घकालतक विलाप करके उसने पतिके साथ चितापर जल मरनेका विचार किया। इसी बीचमें परम बुद्धिमान् और्व मुनि, जो महान् तेजकी निधि थे, वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने उत्तम समाधिके द्वारा यह सब वृत्तान्त जान लिया था। मुनीश्वरगण तीनों कालोंके ज्ञाता होते हैं। वे असूयारहित महात्मा अपनी ज्ञानदृष्टिसे भूत, भविष्य और वर्तमान सब कुछ देख लेते हैं। परम पुण्यात्मा और्व मुनि अपनी तपस्याके कारण तेजकी राशि जान पड़ते थे। वे उसी स्थानपर आये, जहाँ राजा बाहुकी प्यारी एवं पतिव्रता पत्नी खड़ी थी। मुनिश्रेष्ठ नारद! रानीको चितापर चढ़नेके लिये उद्यत देख मुनिवर और्व धर्ममूलक वचन बोले।

और्वने कहा—महाराज बाहुकी प्यारी पत्नी! तू पतिव्रता है; किंतु चितापर चढ़नेका अत्यन्त साहसपूर्ण कार्य न कर। तेरे गर्भमें शत्रुओंका नाश करनेवाला चक्रवर्ती बालक है। कल्याणमयी राजपुत्री! जिनकी संतान बहुत छोटी हो, जो गर्भवती हों, जिन्होंने अभी ऋतुकाल न देखा हो तथा जो रजस्वला हों, ऐसी स्त्रियाँ पतिके साथ चितापर नहीं चढ़तीं—उनके लिये चितारोहणका निषेध है। श्रेष्ठ पुरुषोंने ब्रह्महत्या आदि पापोंका प्रायश्चित्त बताया है, पाखण्डी और परनिन्दकका भी उद्धार होता है; किंतु जो गर्भके बालककी हत्या करता है, उसके उद्धारका कोई उपाय नहीं है। सुव्रते! नास्तिक, कृतघ्न, धर्मत्यागी और विश्वासघातीके उद्धारका भी कोई उपाय नहीं है[2]। अतः शोभने! तुझे यह महान् पाप नहीं करना चाहिये।

---

१. नास्त्यकीर्तिसमो मृत्युर्नास्ति क्रोधसमो रिपुः। नास्ति निन्दासमं पापं नास्ति मोहसमासवः॥
नास्त्यसूयासमाकीर्तिर्नास्ति कामसमोऽनलः। नास्ति रागसमः पाशो नास्ति सङ्गसमं विषम्॥

२. बालापत्याश्च गर्भिण्यो ह्यदृष्टऋतवस्तथा। रजस्वला राजसुते नारोहन्ति चितां शुभे॥
ब्रह्महत्यादिपापानां प्रोक्ता निष्कृतिरुत्तमैः। दम्भिनो निन्दकस्यापि भ्रूणघ्नस्य न निष्कृतिः॥
नास्तिकस्य कृतघ्नस्य धर्मोपेक्षाकरस्य च। विश्वासघातकस्यापि निष्कृतिर्नास्ति सुव्रते॥
(ना० पूर्व० ७।५२—५४)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

मुनिके इस प्रकार कहनेपर पतिव्रता रानीको उनके वचनोंपर विश्वास हो गया और वह अत्यन्त दुःखसे पीड़ित हो अपने मरे हुए पतिके चरणकमलोंको पकड़कर विलाप करने लगी। महात्मा और्व सब शास्त्रोंके ज्ञाता थे। वे रानीसे पुनः बोले—'राजकुमारी! तू रो मत, तुझे श्रेष्ठ राजलक्ष्मी प्राप्त होगी। महाभागे! इस समय सज्जन पुरुषोंके सहयोगसे इस मृतक शरीरका दाह-संस्कार करना उचित है, अतः शोक त्यागकर तू समयोचित कार्य कर। पण्डित हो या मूर्ख, दरिद्र हो या धनवान् तथा दुराचारी हो या सदाचारी—सबपर मृत्युकी समान दृष्टि है। नगरमें हो या वनमें, समुद्रमें हो या पर्वतपर, जिस जीवने जो कर्म किया है, उसे उसका भोग अवश्य करना होगा। जैसे दुःख बिना बुलाये ही प्राणियोंके पास चले आते हैं, उसी प्रकार सुख भी आ सकते हैं—ऐसी मेरी मान्यता है। इस विषयमें दैव ही प्रबल है। पूर्वजन्मके जो-जो कर्म हैं, उन्हीं-उन्हींको यहाँ भोगना पड़ता है। कमलानने! जीव गर्भमें हों या बाल्यावस्थामें, जवानीमें हों या बुढ़ापेमें, उन्हें मृत्युके अधीन अवश्य होना पड़ता है। अतः सुव्रते! इस दुःखको त्यागकर तू सुखी हो जा। पतिके अन्त्येष्टि-संस्कार कर और विवेकके द्वारा स्थिर हो जा। यह शरीर कर्मपाशमें बँधा हुआ तथा हजारों दुःख और व्याधियोंसे घिरा हुआ है। इसमें सुखका तो आभास ही मात्र है। क्लेश ही अधिक होता है।'

परम बुद्धिमान् और्व मुनिने रानीको इस प्रकार समझा-बुझाकर उससे दाह-सम्बन्धी सब कार्य करवाये; फिर उसने शोक त्याग दिया और मुनीश्वरको प्रणाम करके कहा—'भगवन्! आप-जैसे संत दूसरोंकी भलाईकी ही अभिलाषा रखते हैं—इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं। पृथ्वीपर जितने भी वृक्ष हैं, वे अपने उपभोगके लिये नहीं फलते—उनका फल दूसरोंके ही काम आता है। इसलिये जो दूसरोंके दुःखसे दुःखी और दूसरोंकी प्रसन्नतासे प्रसन्न होता है, वही नर-रूपधारी जगदीश्वर नारायण है। संत पुरुष दूसरोंका दुःख दूर करनेके लिये शास्त्र सुनते हैं और अवसर आनेपर सबका दुःख दूर करनेके लिये शास्त्रोंके वचन कहते हैं। जहाँ संत रहते हैं, वहाँ दुःख नहीं सताता; क्योंकि जहाँ सूर्य है, वहाँ अन्धकार कैसे रह सकता है?'

इस प्रकार कहकर रानीने उस तालाबके किनारे मुनिकी बतायी हुई विधिके अनुसार अपने पतिकी अन्य पारलौकिक क्रियाएँ सम्पन्न कीं। वहाँ और्व मुनिके स्थित होनेसे राजा बाहु तेजसे प्रकाशित होते हुए चितासे निकले और श्रेष्ठ विमानपर बैठकर मुनीश्वर और्वको प्रणाम करके परम धामको चले गये। जिनपर महापुरुषोंकी दृष्टि पड़ती है, वे महापातक या उपपातकसे युक्त होनेपर भी अवश्य परम पदको प्राप्त हो जाते हैं। पुण्यात्मा पुरुष यदि किसीके शरीरको, शरीरके भस्मको अथवा उसके धुएँको भी देख ले तो वह परम पदको प्राप्त होता है*। नारदजी! पतिका श्राद्धकर्म करके रानी और्व मुनिके आश्रमपर गयी और अपनी सौतके साथ महर्षिकी सेवा करने लगी।

सगरका जन्म तथा शत्रुविजय, कपिलके क्रोधसे सगर-पुत्रोंका विनाश तथा भगीरथद्वारा लायी हुई गङ्गाजीके स्पर्शसे उन सबका उद्धार

श्रीसनकजी कहते हैं—मुनीश्वर! इस प्रकार राजा बाहुकी वे दोनों रानियाँ और्व मुनिके आश्रमपर रहकर प्रतिदिन भक्तिभावसे उनकी सेवा-शुश्रूषा करती रहीं। नारदजी! इस तरह छः

* महापातकयुक्ता वा युक्ता वा चोपपातकैः। परं पदं प्रयान्त्येव महद्भिरवलोकिताः॥
कलेवरं वा तद्भस्म तद्धूमं वापि सत्तम। यदि पश्यति पुण्यात्मा स प्रयाति परां गतिम्॥
(ना० पूर्व० ७। ७४-७५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

महीने बीत जानेपर राजाकी जो जेठी रानी थी, उसके मनमें सौतकी समृद्धि देखकर पापपूर्ण विचार उत्पन्न हुआ। अतः उस पापिनीने छोटी रानीको जहर दे दिया; किंतु छोटी रानी प्रतिदिन आश्रमकी भूमि लीपने आदिके द्वारा मुनिकी भलीभाँति सेवा करती थीं, इसीलिये उस पुण्यकर्मके प्रभावसे रानीपर उस विषका असर नहीं हुआ। तत्पश्चात् तीन मास और व्यतीत होनेपर रानीने शुभ समयमें विषके साथ ही एक पुत्रको जन्म दिया। मुनिकी सेवासे रानीके सब पाप नष्ट हो चुके थे। अहो! लोकमें सत्सङ्गका कैसा माहात्म्य है? वह कौन-सा पाप नष्ट नहीं कर सकता और सत्सङ्गके प्रभावसे पाप नष्ट हो जानेपर पुण्यात्मा मनुष्योंको कौन-सा सुख अधिक-से-अधिक नहीं मिल सकता? जानकर और अनजानमें किया हुआ तथा दूसरोंसे कराया हुआ जो पाप है, उस सबको महात्मा पुरुषोंकी सेवा तत्काल नष्ट कर देती है। संसारमें सत्सङ्गके प्रभावसे जड भी पूज्य हो जाता है। जैसे भगवान् शंकरके द्वारा ललाटमें ग्रहण कर लिये जानेपर एक कलाका चन्द्रमा भी वन्दनीय हो गया। विप्रवर! इहलोक और परलोकमें सत्सङ्ग मनुष्योंको सदा उत्तम समृद्धि प्रदान करता है, इसलिये संत पुरुष परम पूजनीय हैं। मुनीश्वर! महात्मा पुरुषोंके गुणोंका वर्णन करनेमें कौन समर्थ है? अहो! उनके प्रभावसे गर्भमें पड़ा हुआ विष तीन मासतक पचता रहा। यह कैसी अद्भुत बात है? तेजस्वी मुनि और्वने गर (विष)-के सहित उत्पन्न हुए पुत्रको देखकर उसका जातकर्म-संस्कार किया और उस बालकका नाम सगर रखा। माताने बालक सगरका बड़े प्रेमसे पालन-पोषण किया। मुनीश्वर और्वने यथासमय उसके चूडाकर्म तथा यज्ञोपवीत-संस्कार किये तथा राजाके लिये उपयोगी शास्त्रोंका उसे अध्ययन कराया। मुनि सब मन्त्रोंके ज्ञाता थे। उन्होंने देखा, सगर अब बाल्यावस्थासे कुछ ऊपर उठ चुका है और मन्त्रग्रहण करनेमें समर्थ है, तब उसे अस्त्र-शस्त्रोंकी मन्त्रसहित शिक्षा दी। नारदजी! महर्षि और्वसे शिक्षा पाकर सगर बड़ा बलवान्, धर्मात्मा, कृतज्ञ, गुणवान् तथा परम बुद्धिमान् हो गया। धर्मज्ञ सगर अब प्रतिदिन अमित तेजस्वी और्व मुनिके लिये समिधा, कुशा, जल और फूल आदि लाने लगा। बालक बड़ा विनयी और सद्गुणोंका भण्डार था। एक दिन उसने अपनी माताको प्रणाम करके हाथ जोड़कर कहा।

सगरने कहा—माँ! मेरे पिताजी कहाँ चले गये हैं? उनका क्या नाम है और वे किसके कुलमें उत्पन्न हुए हैं? यह सब बातें मुझे बताओ। मेरे मनमें यह सुननेके लिये बड़ी उत्कण्ठा है। संसारमें जिनके पिता नहीं हैं, वे जीवित होकर भी मरे हुएके समान हैं। जिसके माता-पिता जीवित नहीं हैं, उसे कोई सुख नहीं है। जैसे धर्महीन मूर्ख मनुष्य इस लोक और परलोकमें निन्दित होता है, वही दशा पितृहीन बालककी भी है। माता-पितासे रहित, अज्ञानी, अविवेकी, पुत्रहीन तथा ऋणग्रस्त पुरुषका जन्म व्यर्थ है। जैसे चन्द्रमाके बिना रात्रि, कमलके बिना तालाब और पतिके बिना स्त्रीकी शोभा नहीं होती, उसी प्रकार पितृहीन बालक भी शोभा नहीं पाता। जैसे धर्महीन मनुष्य, कर्महीन गृहस्थ और गौ आदि पशुओंसे हीन वैश्यकी शोभा नहीं होती, वैसे ही पिताके बिना पुत्र सुशोभित नहीं होता। जैसे सत्यरहित वचन, साधु पुरुषोंसे रहित सभा तथा दयाशून्य तप व्यर्थ है, वही दशा पिताके बिना बालककी होती है। जैसे वृक्षके बिना वन, जलके बिना नदी और वेगहीन घोड़ा निरर्थक होता है, वैसी ही पिताके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

बिना बालककी दशा होती है*। माँ! जैसे याचक मनुष्य-लोकमें अत्यन्त लघु समझा जाता है, उसी प्रकार पितृहीन बालक बहुत दुःख उठाता है।

पुत्रकी यह बात सुनकर रानी लंबी साँस खींचकर दुःखमें डूब गयी। उसने सगरके पूछनेपर उसे सब बातें ठीक-ठीक बता दीं। यह सब वृत्तान्त सुनकर सगरको बड़ा क्रोध हुआ। उनके नेत्र लाल हो गये। उन्होंने उसी समय प्रतिज्ञा की, 'मैं शत्रुओंका नाश कर डालूँगा।' फिर और्व मुनिकी परिक्रमा करके माताको प्रणाम किया और मुनिसे आज्ञा लेकर वहाँसे प्रस्थान किया। और्वके आश्रमसे निकलनेपर सत्यवादी एवं पवित्र राजकुमार सगरको उनके कुलपुरोहित महर्षि वसिष्ठ मिल गये। इससे उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। अपने कुलगुरु महात्मा वसिष्ठको प्रणाम करके सगरने अपना सब समाचार बताया; यद्यपि वे ज्ञानदृष्टिसे सब कुछ पहलेसे ही जानते थे। राजा सगरने उन्हीं महर्षिसे ऐन्द्र, वारुण, ब्राह्म और आग्नेय-अस्त्र तथा उत्तम खड्ग तथा वज्रके समान सुदृढ़ धनुष प्राप्त किया। तदनन्तर शुद्ध हृदयवाले सगरने मुनिकी आज्ञा ले उनके आशीर्वादसे समादृत हो उन्हें प्रणाम करके तत्काल वहाँसे यात्रा की। शूरवीर सगरने एक ही धनुषसे अपने विरोधियोंको पुत्र-पौत्र और सेनासहित स्वर्गलोक पहुँचा दिया। उनके धनुषसे छूटे हुए अग्निसदृश बाणोंसे संतप्त होकर कितने ही शत्रु नष्ट हो गये और कितने ही भयभीत होकर भाग गये। शक, यवन तथा अन्य बहुत-से राजा प्राण बचानेकी इच्छासे तुरंत वसिष्ठ मुनिकी शरणमें गये। इस प्रकार भूमण्डलपर विजय प्राप्त करके बाहुपुत्र सगर शीघ्र ही आचार्य वसिष्ठके समीप आये। उन्हें अपने गुप्तचरोंसे यह बात मालूम हो गयी थी कि हमारे शत्रु गुरुजीकी शरणमें गये हैं। बाहुपुत्र सगरको आया हुआ सुनकर महर्षि वसिष्ठ शरणागत राजाओंकी रक्षा करने तथा अपने शिष्य सगरकी प्रसन्नताके लिये क्षणभर विचार करने लगे। फिर उन्होंने कितने ही राजाओंके सिर मुँड़वा दिये और कितने ही राजाओंकी दाढ़ी-मूँछ मुँडवा दी। यह देखकर सगर हँस पड़े और अपने तपोनिधि गुरुसे इस प्रकार बोले।

सगरने कहा—गुरुदेव! आप इन दुराचारियोंकी व्यर्थ रक्षा करते हैं। इन्होंने मेरे पिताके राज्यका अपहरण कर लिया था, अतः मैं सब प्रकारसे इनका संहार कर डालूँगा। पापात्मा दुष्ट मनुष्य तबतक दुष्टता करते हैं, जबतक कि उनकी शक्ति प्रबल होती है। इसलिये शत्रु यदि दास बनकर आये, वेश्याएँ सौहार्द दिखायें और साँप साधुता प्रकट करें तो कल्याणकी इच्छा रखनेवाले पुरुषोंको उनपर विश्वास नहीं करना चाहिये। क्रूर मनुष्य पहले तो जीभसे बड़ी कठोर बातें बोलते हैं, किंतु जब निर्बल पड़ जाते हैं तो उसी जीभसे बड़ी करुणाजनक बातें कहने लगते हैं। जिसको अपने कल्याणकी इच्छा हो, वह नीतिशास्त्रका ज्ञाता पुरुष दुष्टोंके दम्भपूर्ण साधुभाव और दासभावपर कभी विश्वास न करे। नम्रता दिखाते हुए दुर्जन, कपटी मित्र और दुष्टस्वभाववाली स्त्रीपर विश्वास करनेवाला पुरुष मृत्युतुल्य खतरेमें ही है। अतः गुरुदेव! आप इनकी प्राणरक्षा न करें। ये रूप तो

---

* चन्द्रहीना यथा रात्रिः पद्महीनं यथा सरः। पतिहीना यथा नारी पितृहीनस्तथा शिशुः॥
धर्महीनो यथा जन्तुः कर्महीनो यथा गृही। पशुहीनो यथा वैश्यस्तथा पित्रा विनार्भकः॥
सत्यहीनं यथा वाक्यं साधुहीना यथा सभा। तपो यथा दयाहीनं तथा पित्रा विनार्भकः॥
वृक्षहीनं यथारण्यं जलहीना यथा नदी। वेगहीनो यथा वाजी तथा पित्रा विनार्भकः॥
(ना० पूर्व० ८। २१—२४)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

गौका-सा बनाकर आये हैं, परंतु इनका कर्म व्याघ्रोंके समान है। इन सब दुष्टोंका वध करके मैं आपकी कृपासे इस पृथ्वीका पालन करूँगा।

वसिष्ठ बोले—महाभाग! तुम्हें अनेकानेक साधुवाद है। सुव्रत! तुम ठीक कहते हो। फिर भी मेरी बात सुनकर तुम्हें पूर्ण शान्ति मिलेगी। राजन्! सभी जीव कर्मोंकी रस्सीमें बँधे हुए हैं, तथापि जो अपने पापोंसे ही मारे गये हैं, उन्हें फिर किसलिये मारते हो? यह शरीर पापसे उत्पन्न हुआ और पापसे ही बढ़ रहा है। इसे पापमूलक जानकर भी तुम क्यों इसका वध करनेको उद्यत हुए हो? तुम वीर क्षत्रिय हो। इस पापमूलक शरीरको मारकर तुम्हें कौन-सी कीर्ति प्राप्त होगी? ऐसा विचारकर इन लोगोंको मत मारो।

गुरु वसिष्ठका यह वचन सुनकर सगरका क्रोध शान्त हो गया। उस समय मुनि भी सगरके शरीरपर अपना हाथ फेरते हुए बहुत प्रसन्न हुए। तदनन्तर महर्षि वसिष्ठने उत्तम व्रतका पालन करनेवाले अन्य मुनियोंके साथ महात्मा सगरका राज्याभिषेक किया। सगरकी दो स्त्रियाँ थीं—केशिनी और सुमति। नारदजी! ये दोनों विदर्भराज काश्यपकी कन्याएँ थीं। एक समय राजा सगरकी दोनों पत्नियोंद्वारा प्रार्थना करनेपर भृगुवंशी मन्त्रवेत्ता और्व मुनिने उन्हें पुत्र-प्राप्तिके लिये वर दिया। वे मुनीश्वर तीनों कालकी बातें जानते थे। उन्होंने क्षणभर ध्यानमें स्थित होकर केशिनी और सुमतिका हर्ष बढ़ाते हुए इस प्रकार कहा।

और्व बोले—महाभागे! तुम दोनोंमेंसे एक रानी तो एक ही पुत्र प्राप्त करेगी; किंतु वह वंशको चलानेवाला होगा। परंतु दूसरी केवल संतानविषयक इच्छाकी पूर्तिके लिये साठ हजार पुत्र पैदा करेगी। तुमलोग अपनी-अपनी रुचिके अनुसार इनमेंसे एक-एक वर माँग लो।

और्व मुनिका यह वचन सुनकर केशिनीने वंशपरम्पराके हेतुभूत एक ही पुत्रका वरदान माँगा तथा रानी सुमतिके साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए। मुनिश्रेष्ठ! केशिनीके पुत्रका नाम था असमञ्जस। दुष्ट असमञ्जस उन्मत्तकी-सी चेष्टा करने लगा। उसकी देखा-देखी सगरके सभी पुत्र बुरे आचरण करने लगे। इन सबके दूषित कर्मोंको देखकर बाहुपुत्र राजा सगर बहुत दुःखी हुए। उन्होंने अपने पुत्रोंके निन्दित कर्मपर भलीभाँति विचार किया। वे सोचने लगे—अहो! इस संसारमें दुष्टोंका सङ्ग अत्यन्त कष्ट देनेवाला है। तदनन्तर असमञ्जसके अंशुमान् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो बड़ा धर्मात्मा, गुणवान् और शास्त्रोंका ज्ञाता था। वह सदा अपने पितामह राजा सगरके हितमें संलग्न रहता था। सगरके सभी दुराचारी पुत्र लोकमें उपद्रव करने लगे। वे धार्मिक अनुष्ठान करनेवाले लोगोंके कार्यमें सदा विघ्न डाला करते थे। वे दुष्ट राजकुमार सदा मद्यपान करते और पारिजात आदि दिव्य वृक्षोंके फूल लाकर अपने शरीरको सजाते थे। उन्होंने साधु पुरुषोंकी जीविका छीन ली और सदाचारका नाश कर डाला। यह सब देखकर इन्द्र आदि देवता अत्यन्त दुःखसे पीड़ित हो इन सगरपुत्रोंके नाशके लिये कोई उत्तम उपाय सोचने लगे। सब देवता कुछ निश्चय करके पातालकी गुफामें रहनेवाले देवदेवेश्वर भगवान् कपिलके समीप गये। कपिलजी अपने मनसे परमानन्दस्वरूप आत्माका ध्यान कर रहे थे। देवताओंने भूमिपर दण्डकी भाँति लेटकर उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया और इस प्रकार स्तुति की।

देवता बोले—भगवन्! आप योगशक्तियोंसे सम्पन्न हैं, आपको नमस्कार है। आप सांख्ययोगमें रत रहनेवाले हैं, आपको नमस्कार है। आप नररूपसे छिपे हुए नारायण हैं, आपको नमस्कार है। संसाररूपी वनको भस्म करनेके लिये आप दावानलके समान हैं तथा धर्मपालनके लिये सेतुरूप हैं, आपको नमस्कार है। प्रभो! आप महान् वीतराग महात्मा हैं, आपको बारम्बार

In Public Domain. Digitized by Sarayoo Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

नमस्कार है। हम सब देवता सगरके पुत्रोंसे पीड़ित होकर आपकी शरणमें आये हैं। आप हमारी रक्षा करें।

कपिलजीने कहा—श्रेष्ठ देवगण? जो लोग इस जगत्में अपने यश, बल, धन और आयुका नाश चाहते हैं, वे ही लोगोंको पीड़ा देते हैं। जो सर्वदा मन, वाणी और क्रियाद्वारा दूसरोंको पीड़ा देते हैं, उन्हें दैव ही शीघ्र नष्ट कर देता है। थोड़े ही दिनोंमें इन सगरपुत्रोंका नाश हो जायगा।

महात्मा कपिल मुनिके ऐसा कहनेपर देवता विधिपूर्वक उन्हें प्रणाम करके स्वर्गलोकको चले गये। इसी बीचमें राजा सगरने वसिष्ठ आदि महर्षियोंके सहयोगसे परम उत्तम अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान आरम्भ किया। उस यज्ञके लिये नियुक्त किये हुए घोड़ेको देवराज इन्द्रने चुरा लिया और पातालमें जहाँ कपिल मुनि रहते थे, वहीं ले जाकर बाँध दिया। इन्द्रके द्वारा चुराये हुए उस अश्वको खोजनेके लिये सगरके सभी पुत्र आश्चर्यचकित होकर भू आदि लोकोंमें घूमने लगे। जब ऊपरके लोकोंमें कहीं भी उन्हें वह अश्व दिखायी नहीं दिया, तब वे पातालमें जानेको उद्यत हुए। फिर तो सारी पृथ्वीको खोदना शुरू किया। एक-एकने अलग-अलग एक-एक योजन भूमि खोद डाली। खोदी हुई मिट्टीको उन्होंने समुद्रके तटपर बिखेर दिया और उसी द्वारसे वे सभी सगरपुत्र पाताललोकमें जा पहुँचे। वे सब अविवेकी मदसे उन्मत्त हो रहे थे। पातालमें सब ओर उन्होंने अश्वको ढूँढ़ना आरम्भ किया। खोजते-खोजते वहाँ उन्हें करोड़ों सूर्योंके समान प्रभावशाली महात्मा कपिलका दर्शन हुआ। वे ध्यानमें तन्मय थे। उनके पास ही वह घोड़ा भी दिखायी दिया। फिर तो वे सभी अत्यन्त क्रोधमें भर गये और मुनिको देखकर उन्हें मार डालनेका विचार करके वेगपूर्वक दौड़ते हुए उनपर टूट पड़े। उस समय आपसमें एक-दूसरेसे वे इस प्रकार कह रहे थे—'इसे मार डालो, मार डालो। बाँध लो, बाँध लो। पकड़ो, जल्दी पकड़ो। देखो न, घोड़ा चुराकर यहाँ साधुरूपमें बगुलेकी भाँति ध्यान लगाये बैठा है। अहो! संसारमें ऐसे भी खल हैं, जो बड़े-बड़े आडम्बर रचते हैं।' इस तरहकी बातें बोलते हुए वे मुनीश्वर कपिलका उपहास करने लगे। कपिलजी अपने समस्त इन्द्रियवर्ग और बुद्धिको आत्मामें स्थिर करके ध्यानमें तत्पर थे; अतः उनकी इस करतूतका उन्हें कुछ भी पता नहीं चला। सगरपुत्रोंकी मृत्यु निकट थी, इसलिये उन लोगोंकी बुद्धि मारी गयी थी। वे मुनिको लातोंसे मारने लगे। कुछ लोगोंने उनकी बाहें पकड़ लीं। तब मुनिकी समाधि भङ्ग हो गयी। उन्होंने विस्मित होकर लोकमें उपद्रव करनेवाले सगरपुत्रोंको लक्ष्य करके गम्भीरभावसे युक्त यह वचन कहा—'जो ऐश्वर्यके मदसे उन्मत्त हैं, जो भूखसे पीड़ित हैं, जो कामी हैं तथा जो अहंकारसे मूढ़ हो रहे हैं—ऐसे मनुष्योंको विवेक नहीं होता*। यदि दुष्ट मनुष्य सज्जनोंको सताते हैं तो इसमें आश्चर्य क्या है? नदीका वेग किनारेपर उगे हुए वृक्षोंको भी गिरा देता है। जहाँ धन है, जवानी है तथा परायी स्त्री भी है, वहाँ सदा सब अन्धे और मूर्ख बने रहते हैं। दुष्टके पास लक्ष्मी हो तो वह लोकका विनाश करनेवाली ही होती है। जैसे वायु अग्निकी ज्वालाको बढ़ानेमें सहायक होता है और जैसे दूध साँपके विषको बढ़ानेमें कारण होता है, उसी प्रकार दुष्टकी लक्ष्मी उसकी दुष्टताको बढ़ा देती है। अहो! धनके मदसे अन्धा हुआ मनुष्य देखते हुए भी

* ऐश्वर्यमदमत्तानां क्षुधितानां च कामिनाम्। अहङ्कारविमूढानां विवेको नैव जायते॥ (ना० पूर्व० ८। १०३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नहीं देखता। यदि वह अपने हितको देखता है तभी वह वास्तवमें देखता है।'

ऐसा कहकर कपिलजीने कुपित हो अपने नेत्रोंसे आग प्रकट की। उस आगने समस्त सगरपुत्रोंको क्षणभरमें जलाकर भस्म कर डाला। उनकी नेत्राग्निको देखकर पातालनिवासी जीव

शोकमें डूब गये और असमयमें प्रलय हुआ जानकर चीत्कार करने लगे। उस अग्निसे संतप्त हो सम्पूर्ण सर्प तथा राक्षस समुद्रमें शीघ्रतापूर्वक समा गये। अवश्य ही साधु-महात्माओंका कोप दुस्सह होता है।

तदनन्तर देवदूतने राजाके यज्ञमें आकर यजमान सगरको वह सब समाचार बताया। राजा सगर सब शास्त्रोंके ज्ञाता थे। यह सब वृत्तान्त सुनकर उन्होंने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक कहा—दैवने ही उन दुष्टोंको दण्ड दे दिया। माता, पिता, भाई अथवा पुत्र जो भी पाप करता है, वही शत्रु माना गया है। जो पापमें प्रवृत्त होकर सब लोगोंके साथ विरोध करता है, उसे महान् शत्रु समझना चाहिये—यही शास्त्रोंका निर्णय है। मुनीश्वर नारदजी! राजा सगरने अपने पुत्रोंका नाश होनेपर भी शोक नहीं किया; क्योंकि दुराचारियोंकी मृत्यु साधु पुरुषोंके लिये संतोषका कारण होती है। 'पुत्रहीन पुरुषोंका यज्ञमें अधिकार नहीं है'। धर्मशास्त्रकी ऐसी आज्ञा होनेके कारण महाराज सगरने अपने पौत्र अंशुमान्‌को ही दत्तक पुत्रके रूपमें गोद ले लिया। सारग्राही राजा सगरने बुद्धिमान् और विद्वानोंमें श्रेष्ठ अंशुमान्‌को अश्व ढूँढ़ लानेके कार्यमें नियुक्त किया। अंशुमान्‌ने उस गुफाके द्वारपर जाकर तेजोराशि मुनिवर कपिलको देखा और उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया। फिर दोनों हाथोंको जोड़कर वह विनयपूर्वक उनके सामने खड़ा हो गया और शान्तचित्त सनातन देवदेव कपिलसे इस प्रकार बोला।

अंशुमान्‌ने कहा—ब्रह्मन्! मेरे पिताके भाइयोंने यहाँ आकर जो दुष्टता की है, उसे आप क्षमा करें; क्योंकि साधु पुरुष सदा दूसरोंके उपकारमें लगे रहते हैं और क्षमा ही उनका बल है। संत-महात्मा दुष्ट जीवोंपर भी दया करते हैं। चन्द्रमा चाण्डालके घरसे अपनी चाँदनी खींच नहीं लेते हैं। सज्जन पुरुष दूसरोंसे सताये जानेपर भी सबके लिये सुखकारक ही होता है। देवताओंद्वारा अपनी अमृतमयी कलाके भक्षण किये जानेपर भी चन्द्रमा उन्हें परम संतोष ही देता है। चन्दनको काटा जाय या छेदा जाय, वह अपनी सुगन्धसे सबको सुवासित करता रहता है। साधु पुरुषोंका भी ऐसा ही स्वभाव होता है। पुरुषोत्तम! आपके गुणोंको जाननेवाले मुनीश्वरगण ऐसा मानते हैं कि आप क्षमा, तपस्या तथा धर्माचरणद्वारा समस्त लोकोंको शिक्षा देनेके लिये इस भूतलपर अवतीर्ण हुए हैं। ब्रह्मन्! आपको नमस्कार है। मुने! आप ब्रह्मस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है। आप स्वभावतः ब्राह्मणोंका हित करनेवाले हैं और सदा ब्रह्मचिन्तनमें लगे रहते हैं, आपको

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नमस्कार है।

अंशुमान्‌के इस प्रकार स्तुति करनेपर कपिल मुनिका मुख प्रसन्नतासे खिल उठा। उस समय वे बोले—'निष्पाप राजकुमार! मैं तुमपर प्रसन्न हूँ, वर माँगो।' मुनिके ऐसा कहनेपर अंशुमान्‌ने प्रणाम करके कहा—'भगवन्! हमारे इन पितरोंको ब्रह्मलोकमें पहुँचा दें।' तब कपिल मुनि अंशुमान्‌पर अत्यन्त प्रसन्न हो आदरपूर्वक बोले—'राजकुमार! तुम्हारा पौत्र यहाँ गङ्गाजीको लाकर अपने पितरोंको स्वर्गलोक पहुँचायेगा। वत्स! तुम्हारे पौत्र भगीरथद्वारा लायी हुई पुण्यसलिला गङ्गा नदी इन सगरपुत्रोंके पाप धोकर इन्हें परम पदकी प्राप्ति करा देगी। बेटा! इस घोड़ेको ले जाओ, जिससे तुम्हारे पितामहका यज्ञ पूर्ण हो जाय।' तब अंशुमान् अपने पितामहके पास लौट गये और उन्हें अश्वसहित सब समाचार निवेदन किया। सगरने उस पशुके द्वारा ब्राह्मणोंके साथ वह यज्ञ पूर्ण किया और तपस्याद्वारा भगवान् विष्णुकी आराधना करके वे वैकुण्ठधामको चल गये। अंशुमान्‌के दिलीप नामक पुत्र हुआ। दिलीपसे भगीरथका जन्म हुआ, जो दिव्य लोकसे गङ्गाजीको इस भूतलपर ले आये। मुने! भगीरथकी तपस्यासे संतुष्ट हो ब्रह्माजीने उन्हें गङ्गा दे दी; फिर भगीरथ, गङ्गाजीको धारण कौन करेगा—इस विषयमें विचार करने लगे। तदनन्तर भगवान् शिवकी आराधना करके उनकी सहायतासे वे देवनदी गङ्गाको पृथ्वीपर ले आये और उनके जलसे स्पर्श कराकर पवित्र हुए पितरोंको उन्होंने दिव्य स्वर्गलोकमें पहुँचा दिया।

बलिके द्वारा देवताओंकी पराजय तथा अदितिकी तपस्या

नारदजीने कहा—भाईजी! यदि मैं आपकी कृपाका पात्र होऊँ तो भगवान् विष्णुके चरणोंके अग्रभागसे उत्पन्न हुई जो गङ्गा बतायी जाती हैं, उनकी उत्पत्तिकी कथा मुझसे कहिये।

श्रीसनकजी बोले—निष्पाप नारदजी! मैं गङ्गाकी उत्पत्ति बताता हूँ, सुनिये। वह कथा कहने और सुननेवालेके लिये भी पुण्यदायिनी है तथा सब पापोंका नाश करनेवाली है। कश्यप नामसे प्रसिद्ध एक मुनि हो गये हैं। वे ही इन्द्र आदि देवताओंके जनक हैं। दक्ष-पुत्री दिति और अदिति—ये दोनों उनकी पत्नियाँ हैं। अदिति देवताओंकी माता है और दिति दैत्योंकी जननी। ब्रह्मन्! उन दोनोंके दो पुत्र हैं, वे सदा एक-दूसरेको जीतनेकी इच्छा रखते हैं। दितिका पुत्र आदिदैत्य हिरण्यकशिपु बड़ा बलवान् था। उसके पुत्र प्रह्लाद हुए। वे दैत्योंमें बड़े भारी संत थे। प्रह्लादका पुत्र विरोचन हुआ, जो ब्राह्मणभक्त था। विरोचनके पुत्र बलि हुए, जो अत्यन्त तेजस्वी और प्रतापी थे। मुने! बलि ही दैत्योंके सेनापति हुए। वे बहुत बड़ी सेनाके साथ इस पृथ्वीका राज्य भोगते थे। समूची पृथ्वीको जीतकर स्वर्गको भी जीत लेनेका विचार कर वे युद्धमें प्रवृत्त हुए। उन्होंने विशाल सेनाके साथ देवलोकको प्रस्थान किया। देवशत्रु बलिने स्वर्गलोकमें पहुँचकर सिंहके समान पराक्रमी दैत्योंद्वारा इन्द्रकी राजधानीको घेर लिया। तब इन्द्र आदि देवता भी युद्धके लिये नगरसे बाहर निकले। तदनन्तर देवताओं और दैत्योंमें घोर युद्ध छिड़ गया। दैत्योंने देवताओंकी सेनापर बाणोंकी झड़ी लगा दी। इसी प्रकार देवता भी दैत्यसेनापर बाणवर्षा करने लगे। तदनन्तर दैत्यगण भी देवताओंपर नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंद्वारा घातक प्रहार करने लगे। पत्थर,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भिन्दिपाल, खड्ग, परशु, तोमर, परिघ, क्षुरिका, कुन्त, चक्र, शङ्क, मूसल, अङ्कुश, लाङ्गल, पट्टिश, शक्ति, उपल, शतघ्नी, पाश, थप्पड़, मुक्के, शूल, नालीक, नाराच, दूरसे फेंकनेयोग्य अन्यान्य अस्त्र तथा मुद्गरसे वे देवताओंको मारने लगे। रथ, अश्व, गज और पैदल सेनाओंसे खचाखच भरा हुआ वह युद्ध निरन्तर बढ़ने लगा। देवताओंने भी दैत्योंपर अनेक प्रकारके अस्त्र चलाये। इस प्रकार एक हजार वर्षोंतक वह युद्ध चलता रहा। अन्तमें दैत्योंका बल बढ़ जानेके कारण देवता परास्त हो गये और सब-के-सब भयभीत हो स्वर्गलोक छोड़कर भाग गये। वे मनुष्योंके रूपमें छिपकर पृथ्वीपर विचरने लगे। विरोचनकुमार बलि भगवान् नारायणकी शरण ले अव्याहत ऐश्वर्य, बढ़ी हुई लक्ष्मी और महान् बलसे सम्पन्न हो त्रिभुवनका राज्य भोगने लगे। उन्होंने भगवान् विष्णुकी प्रीतिके लिये तत्पर होकर अनेक अश्वमेध यज्ञ किये। बलि स्वर्गमें रहकर इन्द्र और दिक्पाल— दोनों पदोंका— उपभोग करते थे। देवमाता अदिति अपने पुत्रोंकी यह दशा देखकर बहुत दुःखी हुईं। उन्होंने यह सोचकर कि अब मेरा यहाँ रहना व्यर्थ है, हिमालयको प्रस्थान किया। वहाँ इन्द्रका ऐश्वर्य तथा दैत्योंकी पराजय चाहती हुई वे भगवान् विष्णुके ध्यानमें तत्पर हो अत्यन्त कठोर तपस्या करने लगीं। कुछ कालतक वे निरन्तर बैठी ही रहीं। उसके बाद दीर्घकालतक दोनों पैरोंसे खड़ी रहीं। तदनन्तर बहुत समयतक एक पैरसे और फिर उस एक पैरकी अँगुलियोंके ही बलपर खड़ी रहीं। कुछ कालतक तो वे फलाहार करती रहीं, फिर सूखे पत्ते खाकर रहने लगीं। उसके बाद बहुत दिनोंतक जल पीकर रहीं, फिर वायुके आहारपर रहने लगीं और अन्तमें उन्होंने सर्वथा आहार त्याग दिया। नारदजी! अदिति अपने अन्तःकरणद्वारा सच्चिदानन्दघन परमात्माका ध्यान करती हुई एक हजार दिव्य वर्षोंतक तपस्यामें लगी रहीं।

तदनन्तर दैत्योंने अदितिको ध्यानसे विचलित करनेके लिये अपनी दाढ़ोंके अग्रभागसे अग्नि प्रकट की, जिसने उस वनको क्षणभरमें जला दिया। उसका विस्तार सौ योजन था और वह नाना प्रकारके जीव-जन्तुओंसे भरा हुआ था। जो दैत्य अदितिका अपमान करनेके लिये गये थे, वे सब उसी अग्निसे जलकर भस्म हो गये। केवल देवमाता अदिति ही जीवित बची थीं, क्योंकि दैत्योंका विनाश और स्वजनोंपर अनुकम्पा

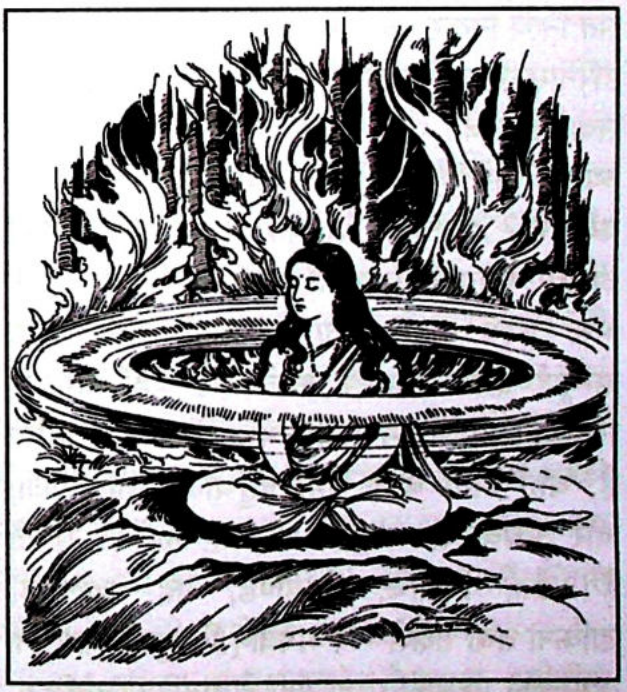

करनेवाले भगवान् विष्णुके सुदर्शन चक्रने उनकी रक्षा की थी।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अदितिको भगवद्दर्शन और वरप्राप्ति, वामनजीका अवतार, बलि-वामन-संवाद, भगवान्‌का तीन पैरसे समस्त ब्रह्माण्डको लेकर बलिको रसातल भेजना

नारदजीने पूछा—भाईजी! आपने यह बड़ी अद्भुत बात बतायी है। मैं जानना चाहता हूँ कि उस अग्निने अदितिको छोड़कर उन दैत्योंको ही क्षणभरमें कैसे जला दिया। आप अदितिके महान् सत्त्वका वर्णन कीजिये, जो विशेष आश्चर्यका कारण है; क्योंकि मुनीश्वर साधु पुरुष सदा दूसरोंको उपदेश देनेमें तत्पर रहते हैं।

सनकजीने कहा—नारदजी! जिनका मन भगवान्‌के भजनमें लगा हुआ है, ऐसे संतोंकी महिमा सुनिये। भगवान्‌के चिन्तनमें लगे हुए साधु पुरुषोंको बाधा देनेमें कौन समर्थ हो सकता है? जहाँ भगवान्‌का भक्त रहता है, वहाँ ब्रह्मा, विष्णु, शिव, देवता, सिद्ध, मुनीश्वर और साधु-संत नित्य निवास करते हैं। महाभाग! शान्तचित्तवाले हरिनामपरायण भक्तोंके भी हृदयमें भगवान् विष्णु सदा विराजते हैं, फिर जो निरन्तर उन्हींके ध्यानमें लगे हुए हैं, उनके विषयमें तो कहना ही क्या है? भगवान् शिवकी पूजामें लगा हुआ अथवा भगवान् विष्णुकी आराधनामें तत्पर हुआ भक्त पुरुष जहाँ रहता है, वहीं लक्ष्मी तथा सम्पूर्ण देवता निवास करते हैं। जहाँ भगवान् विष्णुकी उपासनामें संलग्न भक्त पुरुष वास करता है, वहाँ अग्नि बाधा नहीं पहुँचा सकती। राजा, चोर अथवा रोग-व्याधि भी कष्ट नहीं दे सकते हैं। प्रेत, पिशाच, कूष्माण्ड, ग्रह, बालग्रह, डाकिनी तथा राक्षस—ये भगवान् विष्णुकी आराधना करनेवाले पुरुषको पीड़ा नहीं दे सकते। जितेन्द्रिय, सबका हितकारी तथा धर्म-कर्मका पालन करनेवाला पुरुष जहाँ रहता है, वहीं सम्पूर्ण तीर्थ और देवता वास करते हैं। जहाँ एक या आधे पल भी योगी महात्मा पुरुष ठहरते हैं, वहीं सब श्रेय हैं, वहीं तीर्थ है, वही तपोवन है। जिनके नामकीर्तनसे, स्तोत्रपाठसे अथवा पूजनसे भी सब उपद्रव नष्ट हो जाते हैं, फिर उनके ध्यानसे उपद्रवोंका नाश हो, इसके लिये कहना ही क्या है? ब्रह्मन्! इस प्रकार दैत्योंद्वारा प्रकट की हुई उस अग्निसे दैत्योंसहित सारा वन दग्ध हो गया, किंतु देवमाता अदिति नहीं जलीं; क्योंकि वे भगवान् विष्णुके चक्रसे सुरक्षित थीं।

तदनन्तर कमलदलके समान विकसित नेत्र और प्रसन्न मुखवाले शङ्ख, चक्र, गदाधारी भगवान् विष्णु अदितिके समीप प्रकट हुए। उनके मुखपर मन्द-मन्द मुसकानकी छटा छा रही थी और चमकीले दाँतोंकी प्रभासे सम्पूर्ण दिशाएँ उद्भासित हो रही थीं। उन्होंने अपने पवित्र हाथसे कश्यपजीकी प्यारी पत्नी अदितिका स्पर्श करते हुए कहा।

श्रीभगवान् बोले— देवमाता! तुमने तपस्याद्वारा मेरी आराधना की है, इसलिये मैं तुमपर प्रसन्न हूँ। तुमने बहुत समयतक कष्ट उठाया है। अब तुम्हारा कल्याण होगा, इसमें संदेह नहीं है। तुम्हारे मनमें जैसी रुचि हो, वह वर माँगो, मैं अवश्य दूँगा। भद्रे! भय न करो। महाभागे! तुम्हारा कल्याण अवश्य होगा।

देवाधिदेव भगवान् विष्णुके ऐसा कहनेपर देवमाता अदितिने उनके चरणोंमें प्रणाम किया और सम्पूर्ण जगत्‌को सुख देनेवाले उन परमेश्वरकी स्तुति की।

अदिति बोलीं—देवदेवेश्वर! सर्वव्यापी जनार्दन! आपको नमस्कार है। आप ही सत्त्व आदि गुणोंके भेदसे जगत्‌के पालन आदि व्यवहार चलानेके कारण हैं। आप रूपरहित होते हुए भी अनेक रूप धारण करते हैं। आप परमात्माको नमस्कार है। सबसे एकरूपता (अभिन्नता) ही

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

आपका स्वरूप है। आप निर्गुण एवं गुणस्वरूप हैं। आपको नमस्कार है। आप सम्पूर्ण जगत्के स्वामी और परम ज्ञानरूप हैं। श्रेष्ठ भक्तजनोंके प्रति वात्सल्यभाव सदा आपकी शोभा बढ़ाता रहता है। आप मङ्गलमय परमात्माको नमस्कार है। मुनीश्वरगण जिनके अवतार-स्वरूपोंकी सदा पूजा करते हैं, उन आदिपुरुष भगवान्को मैं अपने मनोरथकी सिद्धिके लिये प्रणाम करती हूँ। जिन्हें श्रुतियाँ नहीं जानतीं, उनके ज्ञाता विद्वान् पुरुष भी नहीं जानते, जो इस जगत्के कारण हैं तथा मायाको साथ रखते हुए भी मायासे सर्वथा पृथक् हैं, उन भगवान्को नमस्कार करती हूँ। जिनकी अद्भुत कृपादृष्टि मायाको दूर भगा देनेवाली है, जो जगत्के कारण तथा जगत्स्वरूप हैं, उन विश्ववन्दित भगवान्की मैं वन्दना करती हूँ। जिनके चरणारविन्दोंकी धूलके सेवनसे सुशोभित मस्तकवाले भक्तजन परम सिद्धिको प्राप्त हो चुके हैं, उन भगवान् कमलाकान्तको मैं नमस्कार करती हूँ। ब्रह्मा आदि देवता भी जिनकी महिमाको पूर्णरूपसे नहीं जानते तथा जो भक्तोंके अत्यन्त निकट रहते हैं, उन भक्तसङ्गी भगवान्को मैं प्रणाम करती हूँ। वे करुणासागर भगवान् जगत्के सङ्गका त्याग करके शान्तभावसे रहनेवाले भक्तजनोंको अपना सङ्ग प्रदान करते हैं, उन सङ्गरहित श्रीहरिको मैं प्रणाम करती हूँ। जो यज्ञोंके स्वामी, यज्ञोंके भोक्ता, यज्ञकर्मोंमें स्थित रहनेवाले यज्ञकर्मके बोधक तथा यज्ञोंके फलदाता हैं, उन भगवान्को मैं नमस्कार करती हूँ। पापात्मा अजामिल भी जिनके नामोच्चारणके पश्चात् परम धामको प्राप्त हो गया, उन लोकसाक्षी भगवान्को मैं प्रणाम करती हूँ। जो विष्णुरूपी शिव और शिवरूपी विष्णु होकर इस जगत्के संचालक हैं, उन जगद्गुरु भगवान् नारायणको मैं नमस्कार करती हूँ। ब्रह्मा आदि देवेश्वर भी जिनकी मायाके पाशमें बँधे होनेके कारण जिनके परमात्मभावको नहीं समझ पाते, उन भगवान् सर्वेश्वरको मैं प्रणाम करती हूँ। जो सबके हृदयकमलमें स्थित होकर भी अज्ञानी पुरुषोंको दूरस्थ-से प्रतीत होते हैं तथा जिनकी सत्ता प्रमाणोंसे परे है, उन ज्ञानसाक्षी परमेश्वरको मैं नमस्कार करती हूँ। जिनके मुखसे ब्राह्मण प्रकट हुआ है, दोनों भुजाओंसे क्षत्रियकी उत्पत्ति हुई है, ऊरुओंसे वैश्य उत्पन्न हुआ है और दोनों चरणोंसे शूद्रका जन्म हुआ है; जिनके मनसे चन्द्रमा प्रकट हुआ है, नेत्रसे सूर्यका प्रादुर्भाव हुआ है; मुखसे अग्नि और इन्द्रकी तथा कानोंसे वायुकी उत्पत्ति हुई है; ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद जिनके स्वरूप हैं, जो संगीतविषयक सातों स्वरोंके भी आत्मा हैं, व्याकरण आदि छः अङ्ग भी जिनके स्वरूप हैं, उन्हीं आप परमेश्वरको मेरा बारम्बार नमस्कार है। भगवन्! आप ही इन्द्र, वायु और चन्द्रमा हैं। आप ही ईशान (शिव) और आप ही यम हैं। अग्नि और निर्ऋति भी आप ही हैं। आप ही वरुण एवं सूर्य हैं। देवता, स्थावर वृक्ष आदि, पिशाच, राक्षस, सिद्ध, गन्धर्व, पर्वत, नदी, भूमि और समुद्र भी आपके स्वरूप हैं। आप ही जगदीश्वर हैं, जिनसे परात्पर तत्त्व दूसरा कोई नहीं है। देव! सम्पूर्ण जगत् आपका ही स्वरूप है, इसलिये सदा आपको नमस्कार है। नाथनाथ! सर्वज्ञ! आप ही सम्पूर्ण भूतोंके आदिकारण हैं। वेद आपका ही स्वरूप है। जनार्दन! दैत्योंद्वारा सताये हुए मेरे पुत्रोंकी रक्षा कीजिये।

इस प्रकार स्तुति करके देवमाता अदितिने भगवान्को बारम्बार प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहा। उस समय आनन्दके आँसुओंसे उनका वक्षःस्थल भींग रहा था। (वे बोलीं—) 'देवेश! आप सबके आदिकारण हैं। मैं आपकी कृपाकी पात्र हूँ। मेरे देवलोकवासी पुत्रोंको

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अकण्टक राज्यलक्ष्मी दीजिये। अन्तर्यामिन्! विश्वरूप! सर्वज्ञ! परमेश्वर! लक्ष्मीपते! आपसे क्या छिपा हुआ है? प्रभो! आप मुझसे पूछकर मुझे क्यों मोहमें डाल रहे हैं? तथा आपकी आज्ञाका पालन करनेके लिये मेरे मनमें जो अभिलाषा है, वह आपको बताऊँगी। देवेश्वर! मैं दैत्योंसे पीड़ित हो रही हूँ। मेरे पुत्र इस समय मेरी रक्षा न कर सकनेके कारण व्यर्थ हो गये हैं। मैं दैत्योंका भी वध करना नहीं चाहती, क्योंकि वे भी मेरे पुत्र ही हैं। सुरेश्वर! उन दैत्योंको मारे बिना ही मेरे पुत्रोंको सम्पत्ति दे दीजिये।' नारदजी! अदितिके ऐसा कहनेपर देवदेवेश्वर भगवान् विष्णु पुनः बहुत प्रसन्न हुए और देवमाताको आनन्दित करते हुए आदरपूर्वक बोले।

श्रीभगवान्ने कहा—देवि! मैं प्रसन्न हूँ। तुम्हारा कल्याण हो। मैं स्वयं ही तुम्हारा पुत्र बनूँगा; क्योंकि सौतके पुत्रोंपर इतना वात्सल्य तुम्हारे सिवा अन्यत्र दुर्लभ है। तुमने जो स्तुति की है, उसको जो मनुष्य पढ़ेंगे, उन्हें श्रेष्ठ सम्पत्ति प्राप्त होगी और उनके पुत्र कभी हीन दशामें नहीं पड़ेंगे। जो अपने तथा दूसरेके पुत्रपर समानभाव रखता है, उसे कभी पुत्रका शोक नहीं होता—यह सनातन धर्म है*।

अदिति बोलीं—देव! आप सबके आदिकारण और परम पुरुष हैं। मैं आपको अपने गर्भमें धारण करनेमें असमर्थ हूँ। आपके एक-एक रोममें असंख्य ब्रह्माण्ड हैं। आप सबके ईश्वर तथा कारण हैं। प्रभो! सम्पूर्ण देवता और श्रुतियाँ भी जिनके प्रभावको नहीं जानतीं, उन्हीं देवाधिदेव भगवान्को मैं गर्भमें कैसे धारण करूँगी? आप सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म, अजन्मा तथा परात्पर परमेश्वर हैं। देव! आप पुरुषोत्तमको मैं कैसे गर्भमें धारण करूँगी? महापातकी मनुष्य भी जिनके नाम-स्मरणमात्रसे मुक्त हो जाता है, वे परमात्मा ग्राम्यजनोंके बीच जन्म कैसे धारण कर सकते हैं? प्रभो! जैसे आपके मत्स्य और शूकर अवतार हो गये हैं, वैसा ही यह भी होगा। विश्वेश! आपकी लीलाको कौन जानता है? देव! मैं आपके चरणारविन्दोंमें प्रणत होकर आपके ही नाम-स्मरणमें लगी हुई सदा आपका ही चिन्तन करती हूँ। आपकी जैसी रुचि हो, वैसा करें।

श्रीसनकजीने कहा—अदितिका वचन सुनकर देवताओंके भी देवता भगवान् जनार्दनने देवमाताको अभयदान दिया और इस प्रकार कहा।

श्रीभगवान् बोले—महाभागे! तुमने सत्य कहा है। इसमें संशय नहीं है। शुभे! तथापि मैं तुम्हें एक गोपनीयसे भी गोपनीय रहस्य बतलाता हूँ, सुनो। जो राग-द्वेषसे शून्य, दूसरोंमें कभी दोष नहीं देखनेवाले और दम्भसे दूर रहनेवाले मेरे शरणागत भक्त हैं, वे सदा मुझे धारण कर सकते हैं। जो दूसरोंको पीड़ा नहीं देते, भगवान् शिवके भजनमें लगे रहते और मेरी कथा सुननेमें अनुराग रखते हैं, वे सदा मुझे अपने हृदयमें धारण करते हैं। देवि! जिन्होंने पति-भक्तिका आश्रय लिया है, पति ही जिनका प्राण है और जो आपसमें कभी डाह नहीं रखतीं, ऐसी पतिव्रता स्त्रियाँ भी सदा मुझे अपने भीतर धारण कर सकती हैं। जो माता-पिताका सेवक, गुरुभक्त, अतिथियोंका प्रेमी और ब्राह्मणोंका हितकारी है, वह सदा मुझे धारण करता है। जो सदा पुण्यतीर्थोंका सेवन करते, सत्सङ्गमें लगे रहते और स्वभावसे ही सम्पूर्ण जगत्पर कृपा रखते हैं, वे मुझे सदा अपने हृदयमें धारण करते हैं। जो परोपकारमें तत्पर, पराये धनके लोभसे विमुख और परायी स्त्रियोंके

* स्वात्मजे वान्यपुत्रे वा यः समत्वेन वर्तते। न तस्य पुत्रशोकः स्यादेष धर्मः सनातनः॥
(ना० पूर्व० ११।४८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्रति नपुंसक होते हैं, वे भी सदा मुझे अपने भीतर धारण करते हैं*। जो तुलसीकी उपासनामें लगे हैं, सदा भगवन्नामके जपमें तत्पर हैं और गौओंकी रक्षामें संलग्न रहते हैं, वे सदा मुझे हृदयमें धारण करते हैं। जो दान नहीं लेते, पराये अन्नका सेवन नहीं करते और स्वयं दूसरोंको अन्न और जलका दान देते हैं, वे भी सदा मुझे धारण करते हैं। देवि! तुम तो सम्पूर्ण भूतोंके हितमें तत्पर पतिप्राणा साध्वी स्त्री हो, अतः मैं तुम्हारा पुत्र होकर तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूँगा।

देवमाता अदितिसे ऐसा कहकर देवदेवेश्वर

भगवान् विष्णुने अपने कण्ठकी माला उतारकर उन्हें दे दी और अभयदान देकर वे वहाँसे अन्तर्धान हो गये। तदनन्तर दक्षकुमारी देवमाता अदिति प्रसन्नचित्तसे भगवान् कमलाकान्तको पुनः प्रणाम करके अपने स्थानपर लौट आयीं। फिर समय आनेपर विश्ववन्दित महाभागा अदितिने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक सर्वलोकनमस्कृत पुत्रको जन्म दिया। वह बालक चन्द्रमण्डलके मध्य विराजमान और परम शान्त था। उसने एक हाथमें शङ्ख और दूसरेमें चक्र ले रखा था। तीसरे हाथमें अमृतका कलश और चौथेमें दधिमिश्रित अन्न था। यह भगवान्‌का सुप्रसिद्ध वामन अवतार था। भगवान् वामनकी कान्ति सहस्रों सूर्योंके समान उज्ज्वल थी। उनके नेत्र खिले हुए कमलके समान शोभा पा रहे थे। वे पीताम्बरधारी श्रीहरि सब प्रकारके दिव्य आभूषणोंसे विभूषित थे। सम्पूर्ण लोकोंके एकमात्र नायक, स्तोत्रोंद्वारा स्तवन करने योग्य तथा ऋषि-मुनियोंके ध्येय भगवान् विष्णुको प्रकट हुए जानकर महर्षि कश्यप हर्षसे विह्वल हो गये। उन्होंने भगवान्‌को प्रणाम करके हाथ जोड़कर इस प्रकार स्तुति करना आरम्भ किया।

कश्यपजी बोले—सम्पूर्ण विश्वकी सृष्टिके कारणभूत! आप परमात्माको नमस्कार है, नमस्कार है। समस्त जगत्‌का पालन करनेवाले! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। देवताओंके स्वामी! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। दैत्योंका नाश करनेवाले देव! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। भक्तजनोंके प्रियतम! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। साधु पुरुष आपको अपनी चेष्टाओंसे प्रसन्न करते हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। दुष्टोंका नाश करनेवाले भगवान्‌को नमस्कार है, नमस्कार है। उन जगदीश्वरको नमस्कार है, नमस्कार है। कारणवश वामनस्वरूप धारण करनेवाले अमित पराक्रमी भगवान् नारायणको नमस्कार है, नमस्कार है। धनुष, चक्र, खड्ग और गदा धारण करनेवाले पुरुषोत्तमको नमस्कार है। क्षीरसागरमें निवास करनेवाले भगवान्‌को नमस्कार है। साधु-पुरुषोंके हृदयकमलमें विराजमान

* परोपकारनिरताः परद्रव्यपराङ्मुखाः । नपुंसकाः परस्त्रीषु ते वहन्ति च मां सदा॥
(ना० पूर्व० १२। ६२)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

परमात्माको नमस्कार है। जिनकी अनन्त प्रभाकी सूर्य आदिसे तुलना नहीं की जा सकती, जो पुण्यकथामें आते और स्थित रहते हैं, उन भगवान्‌को नमस्कार है, नमस्कार है। सूर्य और चन्द्रमा आपके नेत्र हैं, आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप यज्ञोंका फल देनेवाले हैं, आपको नमस्कार है। आप यज्ञके सम्पूर्ण अङ्गोंमें विराजित होते हैं, आपको नमस्कार है। साधु पुरुषोंके प्रियतम! आपको नमस्कार है। जगत्‌के कारणोंके भी कारण आपको नमस्कार है। प्राकृत शब्द, रूप आदिसे रहित आप परमेश्वरको नमस्कार है। दिव्य सुख प्रदान करनेवाले आपको नमस्कार है। भक्तोंके हृदयमें वास करनेवाले आपको नमस्कार है। मत्स्यरूप धारण करके अज्ञानान्धकारका नाश करनेवाले आपको नमस्कार है। कच्छपरूपसे मन्दराचल धारण करनेवाले आपको नमस्कार है। यज्ञवराह-नामधारी आपको नमस्कार है। हिरण्याक्षको विदीर्ण करनेवाले आपको नमस्कार है। वामन-रूपधारी आपको नमस्कार है। क्षत्रिय-कुलका संहार करनेवाले परशुरामरूपधारी आपको नमस्कार है। रावणका संहार करनेवाले श्रीराम-रूपधारी आपको नमस्कार है। नन्दसुत बलराम जिनके ज्येष्ठ भ्राता हैं, उन श्रीकृष्णावतारधारी आपको नमस्कार है। कमलाकान्त! आपको नमस्कार है। आप सबको सुख देनेवाले तथा स्मरणमात्र करनेपर सबकी पीड़ाओंका नाश करनेवाले हैं। आपको बारम्बार नमस्कार है। यज्ञेश! यज्ञस्थापक! यज्ञविघ्न-विनाशक! यज्ञरूप! और यजमानरूप परमेश्वर! आप ही यज्ञके सम्पूर्ण अङ्ग हैं। मैं आपका यजन करता हूँ।

कश्यपजीके इस प्रकार स्तुति करनेपर सम्पूर्ण लोकोंको पवित्र करनेवाले देवेश्वर वामन हँसकर कश्यपजीका हर्ष बढ़ाते हुए बोले।

श्रीभगवान्‌ने कहा—तात! तुम्हारा कल्याण हो। मैं तुमपर बहुत प्रसन्न हूँ। देवपूजित महर्षे? थोड़े ही दिनोंमें तुम्हारा सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध करूँगा। मैं पहले भी दो जन्मोंमें तुम्हारा पुत्र हुआ हूँ तथा अब इस जन्ममें भी तुम्हारा पुत्र होकर तुम्हें उत्तम सुखकी प्राप्ति कराऊँगा।

इधर दैत्यराज बलिने भी अपने गुरु शुक्राचार्य तथा अन्य मुनीश्वरोंके साथ दीर्घकालतक चलनेवाला बहुत बड़ा यज्ञ प्रारम्भ किया। उस यज्ञमें ब्रह्मवादी महर्षियोंने हविष्य ग्रहण करनेके लिये लक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुका आवाहन किया। जिसका ऐश्वर्य बहुत बढ़ा-चढ़ा था, उस दैत्यराज बलिके महायज्ञमें माता-पिताकी आज्ञा ले ब्रह्मचारी वामनजी भी गये। वे अपनी मन्द मुसकानसे सब लोगोंका मन मोहे लेते थे। भक्तवत्सल वामनके रूपमें भगवान् विष्णु मानो बलिके हविष्यका प्रत्यक्ष भोग लगानेके लिये आये थे। दुराचारी हो या सदाचारी, मूर्ख हो या पण्डित, जो भक्तिभावसे युक्त है, उसके अन्तःकरणमें भगवान् विष्णु सदा विराजमान रहते हैं। वामनजीको आते देख ज्ञानदृष्टिवाले महर्षिगण उन्हें साक्षात् भगवान् नारायण जानकर सभासदोंसहित उनकी अगवानीमें गये। यह जानकर दैत्यगुरु शुक्राचार्य एकान्तमें बलिको कुछ सलाह देने लगे।

शुक्राचार्य बोले—दैत्यराज! सौम्य! तुम्हारी राजलक्ष्मीका अपहरण करनेके लिये भगवान् विष्णु वामनरूपसे अदितिके पुत्र हुए हैं। वे तुम्हारे यज्ञमें आ रहे हैं। असुरेश्वर! तुम उन्हें कुछ न देना। तुम तो स्वयं विद्वान् हो। इस समय मेरा जो मत है, उसे सुनो। अपनी बुद्धि ही सुख देनेवाली होती है। गुरुकी बुद्धि विशेषरूपसे सुखद होती है। दूसरेकी बुद्धि विनाशका कारण होती है और स्त्रीकी बुद्धि तो प्रलय करनेवाली होती है।

बलिने कहा—गुरुदेव! आपको इस प्रकार

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

धर्ममार्गका विरोधी वचन नहीं कहना चाहिये। यदि साक्षात् भगवान् विष्णु मुझसे दान ग्रहण करते हैं तो इससे बढ़कर और क्या होगा? विद्वान् पुरुष भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये यज्ञ करते हैं, यदि साक्षात् विष्णु ही आकर हमारे हविष्यका भोग लगाते हैं तो संसारमें मुझसे बढ़कर भाग्यशाली कौन होगा? पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु जीवको उत्तम भक्तिभावसे स्मरण कर लेनेसे ही पवित्र कर देते हैं। जिस किसी भी वस्तुसे उनकी पूजा की जाय, वे परम गति दे देते हैं। दूषित चित्तवाले पुरुषोंके स्मरण करनेपर भी भगवान् विष्णु उनके पापको वैसे ही हर लेते हैं, जैसे अग्निको बिना इच्छा किये भी छू दिया जाय तो भी वह जला ही देती है। जिसकी जिह्वाके अग्रभागपर 'हरि' यह दो अक्षर वास करता है, वह पुनरावृत्तिरहित श्रीविष्णुधामको प्राप्त होता है*। जो राग आदि दोषोंसे दूर रहकर सदा भगवान् गोविन्दका ध्यान करता है, वह वैकुण्ठधाममें जाता है—यह मनीषी पुरुषोंका कथन है। महाभाग गुरुदेव! अग्नि अथवा ब्राह्मणके मुखमें भगवान् विष्णुके प्रति भक्ति-भाव रखते हुए जो हविष्यकी आहुति दी जाती है, उससे वे भगवान् प्रसन्न होते हैं। मैं तो केवल भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये ही उत्तम यज्ञका अनुष्ठान करता हूँ। यदि स्वयं भगवान् यहाँ आ रहे हैं, तब तो मैं कृतार्थ हो गया—इसमें संशय नहीं है।

दैत्यराज बलि जब ऐसी बातें कह रहे थे, उसी समय वामनरूपधारी भगवान् विष्णुने यज्ञशालामें प्रवेश किया। वह स्थान होमयुक्त प्रज्वलित अग्निके कारण बड़ा मनोरम जान पड़ता था। करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशमान तथा सुडौल

अङ्गोंके कारण परम सुन्दर वामनजीको देखकर राजा बलि सहर्ष खड़े हो गये और हाथ जोड़कर उनका स्वागत किया। बैठनेके लिये आसन देकर उन्होंने वामनरूपधारी भगवान्के चरण पखारे और उस चरणोदकको कुटुम्बसहित मस्तकपर धारण करके बड़े आनन्दका अनुभव किया। जगदाधार भगवान् विष्णुको विधिपूर्वक अर्घ्य देते-देते बलिके शरीरमें रोमाञ्च हो आया, नेत्रोंसे आनन्दके आँसू झरने लगे और वे इस प्रकार बोले।

बलिने कहा—आज मेरा जन्म सफल हुआ। आज मेरा यज्ञ सफल हुआ और मेरा यह जीवन भी सफल हो गया। मैं कृतार्थ हो गया—इसमें संदेह नहीं है। भगवन्! आज मेरे यहाँ अत्यन्त दुर्लभ अमोघ अमृतकी वर्षा हो गयी। आपके शुभागमनमात्रसे अनायास महान् उत्सव छा गया। इसमें संदेह नहीं कि ये सब ऋषि कृतार्थ हो गये।

* हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः। अनिच्छयापि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः॥
जिह्वाग्रे वसते यस्य हरिरित्यक्षरद्वयम्। स विष्णुलोकमाप्नोति पुनरावृत्तिदुर्लभम्॥
(ना० पूर्व० ११। १००-१०१)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्रभो! इन्होंने पहले जो तपस्या की थी, वह आज सफल हो गयी। मैं कृतार्थ हूँ, कृतार्थ हूँ, कृतार्थ हूँ—इसमें संशय नहीं है। अतः भगवन्! आपको नमस्कार है, नमस्कार है और बारम्बार नमस्कार है। आपकी आज्ञासे आपके आदेशका पालन करूँ—ऐसा विचार मेरे मनमें हो रहा है। अतः प्रभो! आप पूर्ण उत्साहके साथ मुझे अपनी सेवाके लिये आज्ञा दें।

यज्ञमें दीक्षित यजमान बलिके ऐसा कहनेपर भगवान् वामन हँसकर बोले—'राजन्! मुझे तपस्याके निमित्त रहनेके लिये तीन पग भूमि दे दो। भूमिदानका माहात्म्य महान् है। वैसा दान न हुआ है, न होगा। भूमिदान करनेवाला मनुष्य निश्चय ही परम मोक्ष पाता है। जिसने अग्निकी स्थापना की हो, उस श्रोत्रिय ब्राह्मणके लिये थोड़ी-सी भी भूमि दान करके मनुष्य पुनरावृत्तिरहित ब्रह्मलोकको प्राप्त कर लेता है। भूमिदाता सब कुछ देनेवाला कहा गया है। भूमिदान करनेवाला मोक्षका भागी होता है। भूमिदानको अतिदान समझना चाहिये। वह सब पापोंका नाश करनेवाला है। कोई महापातकसे युक्त अथवा समस्त पातकोंसे दूषित हो तो भी दस हाथ भूमिका दान करके सब पापोंसे छूट जाता है। जो सत्पात्रको भूमिदान करता है, वह सम्पूर्ण दानोंका फल पाता है। तीनों लोकोंमें भूमिदानके समान दूसरा कोई दान नहीं है। दैत्यराज! जो जीविकारहित ब्राह्मणको भूमिदान करता है, उसके पुण्यफलका वर्णन मैं सौ वर्षोंमें भी नहीं कर सकता। जो ईख, गेहूँ, धान और सुपारीके वृक्ष आदिसे युक्त भूमिका दान करता है, वह निश्चय ही श्रीविष्णुके समान है। जीविकाहीन, दरिद्र एवं कुटुम्बी ब्राह्मणको थोड़ी-सी भी भूमि देकर मनुष्य भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। भूमिदान बहुत बड़ा दान है। उसे अतिदान कहा गया है। वह सम्पूर्ण पापोंका नाशक तथा मोक्षरूप फल देनेवाला है। इसलिये दैत्यराज! तुम सब धर्मोंके अनुष्ठानमें लगे रहकर मुझे तीन पग पृथ्वी दे दो। वहाँ रहकर मैं तपस्या करूँगा।'

भगवान्के ऐसा कहनेपर विरोचनकुमार बलि बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने ब्रह्मचारी वामनजीको भूमिदान करनेके लिये जलसे भरा कलश हाथमें लिया। सर्वव्यापी भगवान् विष्णु यह जान गये कि शुक्राचार्य इस कलशमें घुसकर जलकी धाराको रोक रहे हैं। अतः उन्होंने अपने हाथमें लिये हुए कुशके अग्रभागको उस कलशके मुखमें घुसेड़ दिया जिसने शुक्राचार्यके एक नेत्रको नष्ट कर दिया। इसके बाद उन्होंने शस्त्रके समान उस कुशके अग्रभागको आँखसे अलग किया। इतनेमें राजा बलिने भगवान् महाविष्णुको तीन पग पृथ्वीका दान कर दिया। तदनन्तर विश्वात्मा भगवान् उस समय बढ़ने लगे। उनका मस्तक ब्रह्मलोकतक पहुँच गया। अत्यन्त तेजस्वी विश्वरूप श्रीहरिने अपने दो पैरसे सारी भूमि नाप ली। उस समय उनका दूसरा पैर ब्रह्माण्डकटाह (शिखर)-को छू गया और अँगूठेके अग्रभागके आघातसे फूटकर वह ब्रह्माण्ड दो भागोंमें बँट गया। उस छिद्रके द्वारा ब्रह्माण्डसे बाहरका जल अनेक धाराओंमें बहकर आने लगा। भगवान् विष्णुके चरणोंको धोकर निकला हुआ वह निर्मल गङ्गाजल सम्पूर्ण लोकोंको पवित्र करनेवाला था। ब्रह्माण्डके बाहर जिसका उद्गमस्थान है, वह श्रेष्ठ एवं पावन गङ्गाजल धारारूपमें प्रवाहित हुआ और ब्रह्मा आदि देवताओंको उसने पवित्र किया। फिर सप्तर्षियोंसे सेवित हो वह मेरुपर्वतके शिखरपर गिरा। वामनजीका यह अद्भुत कर्म देखकर ब्रह्मा आदि देवता, ऋषि तथा मनुष्य हर्षसे विह्वल हो उनकी स्तुति करने लगे।

देवता बोले—आप परमात्मस्वरूप परमेश्वरको

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नमस्कार है। आप परात्पर होते हुए भी अपरा प्रकृतिसे उत्पन्न जगत्का रूप धारण करते हैं। आपको नमस्कार है। आप ब्रह्मरूप हैं, आपकी मन-बुद्धि अपने ब्रह्मरूपमें ही रमण करती है। आप कहीं भी कुण्ठित न होनेवाले अद्भुत कर्मसे सुशोभित होते हैं। आपको नमस्कार है। परेश! परमानन्द! परमात्मन्! परात्पर विश्वमूर्ते! प्रमाणातीत! आप सर्वात्माको नमस्कार है। आपके सब ओर नेत्र हैं, सब ओर भुजाएँ हैं, सब ओर मस्तक हैं और सब ओर गति है, आपको नमस्कार है।

ब्रह्मा आदि देवताओंद्वारा इस प्रकार स्तुति की जानेपर भगवान् महाविष्णुने स्वर्गवासी देवताओंको अभयदान दिया और वे देवाधिदेव सनातन श्रीहरि बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने एक पग भूमिकी पूर्तिके लिये विरोचनपुत्र दैत्यराज बलिको बाँध लिया, फिर उसे अपनी शरणमें आया जान रसातलका राज्य दे दिया और स्वयं भक्तके वशीभूत होकर बलिके द्वारपाल होकर रहने लगे।

नारदजीने पूछा—मुने! रसातल तो सर्पोंके भयसे परिपूर्ण भयंकर स्थान है। वहाँ भगवान् महाविष्णुने विरोचनपुत्र बलिके लिये भोजन आदिकी क्या व्यवस्था की।

श्रीसनकजीने कहा—नारदजी! अग्निमें बिना मन्त्रके जो आहुति डाली जाती है और अपात्रको जो दान दिया जाता है, वह सब कर्ताके लिये भयंकर होता है और वही राजा बलिके भोगका साधन बनता है। अपवित्र मनुष्यके द्वारा जो हविष्यका होम, दान और सत्कर्म किया जाता है, वह सब रसातलमें बलिके उपभोगके योग्य होता है और कर्ताको अधःपातरूप फल देनेवाला है। इस प्रकार भगवान् विष्णुने बलिदैत्यको रसातल-लोक और अभयदान देकर सम्पूर्ण देवताओंको स्वर्गका राज्य दे दिया। उस समय देवता उनका पूजन, महर्षिगण स्तवन और गन्धर्वलोग गुणगान कर रहे थे। वे विराट् महाविष्णु पुनः वामनरूप हो गये। ब्रह्मवादी मुनियोंने भगवान्का यह महान् कर्म देखकर परस्पर मुसकराते हुए उन पुरुषोत्तमको प्रणाम किया। सम्पूर्ण भूतस्वरूप भगवान् विष्णु वामनरूप धारण करके सब लोगोंको मोहित करते हुए तपस्याके लिये वनमें चले गये। भगवान् विष्णुके चरणोंसे निकली हुई गङ्गादेवीका ऐसा प्रभाव है कि जिनके स्मरणमात्रसे मनुष्य सम्पूर्ण पातकोंसे मुक्त हो जाता है। जो इस गङ्गा-माहात्म्यको देवालय अथवा नदीके तटपर पढ़ता या सुनता है, वह अश्वमेधयज्ञका फल पाता है।

दानका पात्र, निष्फल दान, उत्तम-मध्यम-अधम दान, धर्मराज-भगीरथ-संवाद, ब्राह्मणको जीविकादानका माहात्म्य तथा तडाग-निर्माणजनित पुण्यके विषयमें राजा वीरभद्रकी कथा

नारदजी बोले—भाईजी! मुझे गङ्गा-माहात्म्य सुननेकी इच्छा थी, सो तो सुन ली। वह सब पापोंका नाश करनेवाला है। अब मुझे दान एवं दानके पात्रका लक्षण बताइये।

श्रीसनकजीने कहा—देवर्षे! ब्राह्मण सभी वर्णोंका श्रेष्ठ गुरु है। जो दिये हुए दानको अक्षय बनाना चाहता हो, उसे ब्राह्मणको ही दान देना चाहिये। सदाचारी ब्राह्मण निर्भय होकर सबसे दान ले सकता है, किंतु क्षत्रिय और वैश्य कभी किसीसे दान ग्रहण न करें। जो ब्राह्मण क्रोधी, पुत्रहीन, दम्भाचार-परायण तथा अपने कर्मका त्याग करनेवाला है, उसको दिया हुआ दान निष्फल हो जाता है। जो परायी स्त्रीमें आसक्त, पराये धनका लोभी तथा नक्षत्रसूचक (ज्योतिषी)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

है, उसे दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जिसके मनमें दूसरोंके दोष देखनेका दुर्गुण भरा है, जो कृतघ्न, कपटी और यज्ञके अनधिकारियोंसे यज्ञ करानेवाला है, उसको दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो सदा माँगनेमें ही लगा रहता है, जो हिंसक, दुष्ट और रसका विक्रय करनेवाला है, उसे दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। ब्रह्मन्! जो वेद, स्मृति तथा धर्मका विक्रय करनेवाला है, उसको दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो गीत गाकर जीविका चलाता है, जिसकी स्त्री व्यभिचारिणी है तथा जो दूसरोंको कष्ट देनेवाला है, उसको दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो तलवारसे जीविका चलाता है, जो स्याहीसे जीवन-निर्वाह करता है, जो जीविकाके लिये देवताकी पूजा स्वीकार करता है, जो समूचे गाँवका पुरोहित है तथा जो धावनका काम करता है, ऐसे लोगोंको दिया हुआ दान निष्फल होता है। जो दूसरोंके लिये रसोई बनानेका काम करता है, जो कविताद्वारा लोगोंकी झूठी प्रशंसा किया करता है, जो वैद्य एवं अभक्ष्य वस्तुओंका भक्षण करनेवाला है, उसको दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो शूद्रोंका अन्न खाता, शूद्रोंके मुर्दे जलाता और व्यभिचारिणी स्त्रीकी संतानका अन्न भोजन करता है, उसको दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो भगवान् विष्णुके नाम-जपको बेचता है, संध्याकर्मको त्यागनेवाला है तथा दूषित दान-ग्रहणसे दग्ध हो चुका है, उसे दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो दिनमें सोता, दिनमें मैथुन करता और संध्याकालमें खाता है, उसे दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो महापातकोंसे युक्त है, जिसे जाति-भाइयोंने समाजसे बाहर कर दिया है तथा जो कुण्ड (पतिके रहते हुए भी व्यभिचारसे उत्पन्न हुआ) और गोलक (पतिके मर जानेपर व्यभिचारसे पैदा हुआ) है, उसे दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो परिवित्ति (छोटे भाईके विवाहित हो जानेपर भी स्वयं अविवाहित), शठ, परिवेत्ता (बड़े भाईके अविवाहित रहते हुए स्वयं विवाह करनेवाला), स्त्रीके वशमें रहनेवाला और अत्यन्त दुष्ट है, उसको दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। जो शराबी, मांसखोर, स्त्रीलम्पट, अत्यन्त लोभी, चोर और चुगली खानेवाला है, उसको दिया हुआ दान भी निष्फल होता है। द्विजश्रेष्ठ! जो कोई भी पापपरायण और सज्जन पुरुषोंद्वारा सदा निन्दित हों, उनसे न तो दान लेना चाहिये और न दान देना ही चाहिये।

नारदजी! जो ब्राह्मण सत्कर्ममें लगा हुआ हो, उसे यत्नपूर्वक दान देना चाहिये। जो दान श्रद्धापूर्वक तथा भगवान् विष्णुके समर्पणपूर्वक दिया गया हो एवं जो उत्तम पात्रके याचना करनेपर दिया गया हो, वह दान अत्यन्त उत्तम है। नारदजी! इहलोक या परलोकके लाभका उद्देश्य रखकर जो सुपात्रको दान दिया जाता है, वह सकाम दान मध्यम माना गया है। जो दम्भसे, दूसरोंकी हिंसाके लिये, अविधिपूर्वक, क्रोधसे, अश्रद्धासे और अपात्रको दिया जाता है, वह दान अधम माना गया है। राजा बलिको संतुष्ट करनेके लिये यानी अपवित्र भावसे तथा अपात्रको किया हुआ दान अधम, स्वार्थ-सिद्धिके लिये किया हुआ दान मध्यम तथा भगवान्‌की प्रसन्नताके लिये किया हुआ दान उत्तम है—यह वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ ज्ञानी पुरुष कहते हैं। दान, भोग और नाश—ये धनकी तीन प्रकारकी गतियाँ हैं। जो न दान करता है और न उपभोगमें लाता है, उसका धन केवल उसके नाशका कारण होता है। ब्रह्मन्! धनका फल है धर्म और धर्म वही है

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जो भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला है। क्या वृक्ष जीवन धारण नहीं करते? वे भी इस जगत्में दूसरोंके हितके लिये जीते हैं। विप्रवर नारद! जहाँ वृक्ष भी अपनी जड़ों और फलोंके द्वारा दूसरोंका हित-साधन करते हैं, वहाँ यदि मनुष्य परोपकारी न हों तो वे मरे हुएके ही समान हैं। जो मरणशील मानव शरीरसे, धनसे अथवा मन और वाणीसे भी दूसरोंका उपकार नहीं करते, उन्हें महान् पापी समझना चाहिये। नारदजी! इस विषयमें मैं एक यथार्थ इतिहास सुनाता हूँ, सुनिये। उसमें दान आदिका लक्षण भी बताया जायगा, साथ ही उसमें गङ्गाजीका माहात्म्य भी आ जायगा, जो सब पापोंका नाश करनेवाला है। इस इतिहासमें भगीरथ और धर्मका पुण्यकारक संवाद है।

सगरके कुलमें भगीरथ नामवाले राजा हुए, जो सातों द्वीपों और समुद्रोंसहित इस पृथ्वीका शासन करते थे। वे सदा सब धर्मोंमें तत्पर, सत्य-प्रतिज्ञ और प्रतापी थे। कामदेवके समान रूपवान्, महान् यज्ञकर्ता और विद्वान् थे। वे राजा भगीरथ धैर्यमें हिमालय और धर्ममें धर्मराजकी समानता करते थे। उनमें सभी प्रकारके शुभ लक्षण भरे थे। मुने! वे सम्पूर्ण शास्त्रोंके पारगामी विद्वान्, सब सम्पत्तियोंसे युक्त और सबको आनन्द देनेवाले थे। अतिथियोंके सत्कारमें यत्नपूर्वक लगे रहते और सदा भगवान् वासुदेवकी आराधनामें तत्पर रहते थे। वे बड़े पराक्रमी, सद्गुणोंके भण्डार, सबके प्रति मैत्रीभावसे युक्त, दयालु तथा उत्तम बुद्धिवाले थे। द्विजश्रेष्ठ! राजा भगीरथको ऐसे सद्गुणोंसे युक्त जानकर एक दिन साक्षात् धर्मराज उनका दर्शन करनेके लिये आये। राजाने अपने घरपर पधारे हुए धर्मराजका शास्त्रीय विधिसे पूजन किया। तत्पश्चात् धर्मराज प्रसन्न होकर राजासे बोले।

धर्मराजने कहा—धर्मज्ञोंमें श्रेष्ठ राजा भगीरथ! तुम तीनों लोकमें प्रसिद्ध हो। मैं धर्मराज होकर भी तुम्हारी कीर्ति सुनकर तुम्हारे दर्शनके लिये आया हूँ। तुम सन्मार्गमें तत्पर, सत्यवादी और सम्पूर्ण भूतोंके हितैषी हो। तुम्हारे उत्तम गुणोंके कारण देवता भी तुम्हारा दर्शन करना चाहते हैं। भूपाल! जहाँ कीर्ति, नीति और सम्पत्ति है, वहाँ निश्चय ही उत्तम गुण, साधु पुरुष तथा देवता निवास करते हैं। राजन्! महाभाग! समस्त प्राणियोंके हितमें लगे रहना आदि तुम्हारा चरित्र बहुत सुन्दर है। वह मेरे-जैसे लोगोंके लिये भी दुर्लभ है।

ऐसा कहनेवाले धर्मराजको प्रणाम करके राजा भगीरथ प्रसन्न एवं विनीत भावसे मधुर वाणीमें बोले।

भगीरथने कहा—भगवन्! आप सब धर्मोंके ज्ञाता हैं। परेश्वर! आप समदर्शी भी हैं। मैं जो कुछ पूछता हूँ, उसे मुझपर बड़ी भारी कृपा करके बताइये। धर्म कितने प्रकारके कहे गये हैं? धर्मात्मा पुरुषोंके कौन-से लोक हैं? यमलोकमें

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कितनी यातनाएँ बतायी गयी हैं और वे किन्हें प्राप्त होती हैं? महाभाग! कैसे लोग आपके द्वारा सम्मानित होते हैं और कौन लोग किस प्रकार आपके द्वारा दण्डनीय हैं? यह सब मुझे विस्तारपूर्वक बतानेकी कृपा करें।

धर्मराजने कहा—महाबुद्धे! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। तुम्हारी बुद्धि निर्मल तथा ओजस्विनी है। मैं धर्म और अधर्मका यथार्थ वर्णन करता हूँ, तुम भक्तिपूर्वक सुनो! धर्म अनेक प्रकारके बताये गये हैं, जो पुण्यलोक प्रदान करनेवाले हैं। इसी प्रकार अधर्मजनित यातनाएँ भी असंख्य कही गयी हैं, जिनका दर्शन भी भयंकर है। अतः मैं संक्षेपसे ही धर्म और अधर्मका दिग्दर्शन कराऊँगा। ब्राह्मणोंको जीविका देना अत्यन्त पुण्यमय कहा गया है। इसी प्रकार अध्यात्मतत्त्वके ज्ञाता पुरुषको दिया हुआ दान अक्षय होता है। ब्राह्मण सम्पूर्ण देवताओंका स्वरूप बताया गया है, उसको जीविका देनेवाले मनुष्यके पुण्यका वर्णन करनेमें कौन समर्थ है? जो नित्य (सदाचारी) ब्राह्मणका हित करता है, उसने सम्पूर्ण यज्ञोंका अनुष्ठान कर लिया, वह सब तीर्थोंमें नहा चुका और उसने सब तपस्या पूरी कर ली। जो ब्राह्मणको जीविका देनेके लिये 'दो' कहकर दूसरेको प्रेरित करता है, वह भी उसके दानका फल प्राप्त कर लेता है।

जो स्वयं अथवा दूसरेके द्वारा तालाब बनवाता है, उसके पुण्यकी संख्या बताना असम्भव है। राजन्! यदि एक राही भी पोखरेका जल पी ले तो उसके बनानेवाले पुरुषके सब पाप अवश्य नष्ट हो जाते हैं। जो मनुष्य एक दिन भी भूमिपर जलका संग्रह एवं संरक्षण कर लेता है, वह सब पापोंसे छूटकर सौ वर्षोंतक स्वर्गलोकमें निवास करता है। जो मानव अपनी शक्तिभर तालाब खुदानेमें सहायता करता है, जो उससे संतुष्ट होकर उसको प्रेरणा देता है, वह भी पोखरे बनानेका पुण्यफल पा लेता है। जो सरसों बराबर मिट्टी भी तालाबसे निकालकर बाहर फेंकता है, वह अनेकों पापोंसे मुक्त हो सौ वर्षोंतक स्वर्गमें निवास करता है। नृपश्रेष्ठ! जिसपर देवता अथवा गुरुजन संतुष्ट होते हैं, वह पोखरा खुदानेके पुण्यका भागी होता है—यह सनातन श्रुति है।

नृपश्रेष्ठ! इस विषयमें मैं तुम्हें एक इतिहास बतलाता हूँ, जिसे सुनकर मनुष्य सब पापोंसे छुटकारा पा जाता है—इसमें संशय नहीं है। गौड़देशमें अत्यन्त विख्यात वीरभद्र नामके एक राजा हो गये हैं। वे बड़े प्रतापी, विद्वान् तथा सदैव ब्राह्मणोंकी पूजा करनेवाले थे। वेद और शास्त्रोंकी आज्ञाके अनुसार कुलोचित सदाचारका वे सदा पालन करते और मित्रोंके अभ्युदयमें योग देते थे। उनकी परम सौभाग्यवती रानीका नाम चम्पकमञ्जरी था। उनके मुख्य मन्त्रीगण कर्तव्य और अकर्तव्यके विचारमें कुशल थे। वे सदा धर्मशास्त्रोंद्वारा धर्मका निर्णय किया करते थे। 'जो प्रायश्चित्त, चिकित्सा, ज्यौतिष तथा धर्मका निर्णय बिना शास्त्रके करता है, उसे ब्राह्मणघाती बताया गया है'—मन-ही-मन ऐसा सोचकर राजा सदा अपने आचार्योंसे मनु आदिके बताये हुए धर्मोंका विधिपूर्वक श्रवण किया करते थे। उनके राज्यमें कोई छोटे-से-छोटा मनुष्य भी अन्यायका आचरण नहीं करता था। उस राजाका धर्मपूर्वक पालित होनेवाला देश स्वर्गकी समता धारण करता था। वह शुभकारक उत्तम राज्यका आदर्श था।

एक दिन राजा वीरभद्र मन्त्री आदिके साथ शिकार खेलनेके लिये बहुत बड़े वनमें गये और दोपहरतक इधर-उधर घूमते रहे। वे अत्यन्त थक गये थे। भगीरथ! उस समय वहाँ राजाको एक छोटी-सी पोखरी दिखायी दी। वह भी सूखी हुई थी। उसे देखकर मन्त्रीने सोचा—

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पृथ्वीके ऊपर इस शिखरपर यह पोखरी किसने बनायी है? यहाँ कैसे जल सुलभ होगा, जिससे ये राजा वीरभद्र प्यास बुझाकर जीवन धारण करेंगे। नृपश्रेष्ठ! तदनन्तर मन्त्रीके मनमें उस पोखरीको खोदनेका विचार हुआ। उसने एक हाथका गड्ढा खोदकर उसमेंसे जल प्राप्त किया। राजन्! उस जलको पीनेसे राजा और उनके बुद्धिसागर नामक मन्त्रीको भी तृप्ति हुई। तब धर्म-अर्थके ज्ञाता बुद्धिसागरने राजासे कहा—'राजन्! यह पोखरी पहले वर्षाके जलसे भरी थी। अब इसके चारों ओर बाँध बना दें—ऐसी मेरी सम्मति है। देव! निष्पाप राजन्! आप इसका अनुमोदन करें और इसके लिये मुझे आज्ञा दें।' नृपश्रेष्ठ वीरभद्र अपने मन्त्रीकी यह बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और इस कामको करनेके लिये तैयार हो गये। उन्होंने अपने मन्त्री बुद्धिसागरको ही इस शुभ कार्यमें नियुक्त किया। तब राजाकी आज्ञासे अतिशय पुण्यात्मा बुद्धिसागर उस पोखरीको सरोवर बनानेके कार्यमें लग गये। उसकी लंबाई और चौड़ाई चारों ओरसे पचास धनुषकी हो गयी। उसके चारों ओर पत्थरके घाट बन गये और उसमें अगाध जलराशि संचित हो गयी। ऐसी पोखरी बनाकर मन्त्रीने राजाको सब समाचार निवेदन किया। तबसे सब वनचर जीव और प्यासे पथिक उस पोखरीसे उत्तम जल पान करने लगे। फिर आयुकी समाप्ति होनेपर किसी समय मन्त्री बुद्धिसागरकी मृत्यु हो गयी। राजन्! वे मुझ धर्मराजके लोकमें गये। उनके लिये मैंने चित्रगुप्तसे धर्म पूछा, तब चित्रगुप्तने उनके पोखरी बनानेका सब कार्य मुझे बताया। साथ ही यह भी कहा कि ये राजाको धर्म-कार्यका स्वयं उपदेश करते थे, इसलिये इस धर्मविमानपर चढ़नेके अधिकारी हैं। राजन्! चित्रगुप्तके ऐसा कहनेपर मैंने बुद्धिसागरको धर्मविमानपर चढ़नेकी आज्ञा दे दी। भगीरथ! फिर कालान्तरमें राजा वीरभद्र भी मृत्युके पश्चात् मेरे स्थानपर गये और प्रसन्नतापूर्वक मुझे नमस्कार किया। तब मैंने वहाँ उनके सम्पूर्ण धर्मोंके विषयमें भी प्रश्न किया राजन्! मेरे पूछनेपर चित्रगुप्तने राजाके लिये भी पोखरे खुदानेसे होनेवाले धर्मकी बात बतायी। तब मैंने राजाको जिस प्रकार भलीभाँति समझाया, वह सुनो। (मैंने कहा—)

'भूपाल भगीरथ! पूर्वकालमें सैकतगिरिके शिखरपर उस लावक (एक प्रकारकी चिड़िया) पक्षीने जलके लिये अपनी चोंचसे दो अङ्गुल भूमि खोद ली थी। नृपश्रेष्ठ! तत्पश्चात् कालान्तरमें उस वाराहने अपनी थूथुनसे एक हाथ गहरा गड्ढा खोदा। तबसे उसमें हाथभर जल रहता था। उसके बाद किसी समय उस काली (एक पक्षी)-ने उसे पानीमें खोदकर दो हाथ गहरा कर दिया। महाराज! तबसे उसमें दो महीनेतक जल टिकने लगा। वनके छोटे-छोटे जीव प्याससे व्याकुल होनेपर उस जलको पीते थे। सुव्रत! उसके तीन वर्षके बाद इस हाथीने उस गड्ढेको तीन हाथ गहरा कर दिया। अब उसमें अधिक जल संचित होकर तीन महीनेतक टिकने लगा। जंगली जीव-जन्तु उसको पीया करते थे। फिर जल सूख जानेके बाद आप उस स्थानपर आये। वहाँ एक हाथ मिट्टी खोदकर आपने जल प्राप्त किया। नरपते! तदनन्तर मन्त्री बुद्धिसागरके उपदेशसे आपने पचास धनुषकी लंबाई-चौड़ाईमें उसे उतना ही गहरा खुदवाया। फिर तो उसमें बहुत जल संचित हो गया। इसके बाद पत्थरोंसे दृढ़तापूर्वक घाट बँध जानेपर वह महान् सरोवर बन गया। वहाँ किनारेपर सब लोगोंके लिये उपकारी वृक्ष लगा दिये गये। उस पोखरेके द्वारा अपने-अपने पुण्यसे ये पाँच जीव धर्मविमानपर

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

आरूढ़ हुए हैं। अब छठे तुम भी उसपर चढ़ जाओ।' भगीरथ! मेरा यह वचन सुनकर छठे राजा वीरभद्र भी उन पाँचके समान ही पुण्यभागी होकर उस धर्मविमानपर जा बैठे। राजन्! इस प्रकार मैंने पोखरे बनवानेसे होनेवाले सम्पूर्ण फलका वर्णन किया। इसे सुनकर मनुष्य जन्मसे लेकर मृत्युतकके पापसे मुक्त हो जाता है। जो मानव श्रद्धापूर्वक इस कथाको सुनता अथवा पढ़ता है, वह भी तालाब बनानेके सम्पूर्ण पुण्यको प्राप्त कर लेता है।

तडाग और तुलसी आदिकी महिमा, भगवान् विष्णु और शिवके स्नान-पूजनका महत्त्व एवं विविध दानों तथा देवमन्दिरमें सेवा करनेका माहात्म्य

धर्मराज कहते हैं—राजन्! कासार (कच्चे पोखरे) बनानेपर तडाग (पक्के पोखरे) बनानेकी अपेक्षा आधा फल बताया गया है। कुएँ बनानेपर एक चौथाई फल जानना चाहिये। बावड़ी बनानेपर कमलोंसे भरे हुए सरोवरके बराबर पुण्य प्राप्त होता है। भूपाल! नहर निकालनेपर बावड़ीकी अपेक्षा सौगुना फल प्राप्त होता है। धनी पुरुष पत्थरसे मन्दिर या तालाब बनावे और दरिद्र पुरुष मिट्टीसे बनावे तो उन दोनोंको समान फल प्राप्त होता है। यह ब्रह्माजीका कथन है। धनी पुरुष एक नगर दान करे और गरीब एक हाथ भूमि दे; इन दोनोंके दानका समान फल है—ऐसा वेदवेत्ता पुरुष कहते हैं। जो धनी पुरुष उत्तम फलके साधनभूत तडागका निर्माण करता है और दरिद्र एक कुआँ बनवाता है; उन दोनोंका पुण्य समान कहा गया है। जो बहुत-से प्राणियोंका उपकार करनेवाला आश्रम या धर्मशाला बनवाता है, वह तीन पीढ़ियोंके साथ ब्रह्मलोकमें जाता है। राजन्! धेनु अथवा ब्राह्मण या जो कोई भी आधे क्षण भी उस आश्रमकी छायामें स्थित होता है, वह उसके बनवानेवालेको स्वर्गलोकमें पहुँचाता है। राजन्! जो बगीचे लगाते, देवमन्दिर बनवाते, पोखरा खुदाते अथवा गाँव बसाते हैं, वे भगवान् विष्णुके साथ पूजित होते हैं। जो तुलसीके मूलभागकी मिट्टीसे, गोपीचन्दनसे, चित्रकूटकी मिट्टीसे अथवा गङ्गाजीकी मृत्तिकासे ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक लगाता है, उसे प्राप्त होनेवाले पुण्यफलका वर्णन सुनो। वह श्रेष्ठ विमानपर बैठकर गन्धर्वों और अप्सराओंके समूहद्वारा अपने चरित्रका गान सुनता हुआ भगवान् विष्णुके धाममें आनन्द भोगता है। जो तुलसीके पौधेपर चुल्लूभर भी पानी डालता है, वह क्षीरसागर-निवासी भगवान् विष्णुके साथ तबतक निवास करता है, जबतक चन्द्रमा और तारे रहते हैं, तदनन्तर विष्णुमें लय हो जाता है। जो ब्राह्मणोंको कोमल तुलसीदल अर्पित करता है, वह तीन पीढ़ियोंके साथ ब्रह्मलोकमें जाता है। जो तुलसीके लिये काँटोंका आवरण या चहारदीवारी बनवाता है, वह भी इक्कीस पीढ़ियोंके साथ भगवान् विष्णुके धाममें आनन्दका अनुभव करता है। नरेश्वर! जो तुलसीके कोमल दलोंसे भगवान् विष्णुके चरणकमलोंकी पूजा करता है, वह विष्णुलोकको प्राप्त होता है, उसका वहाँसे कभी पुनरागमन नहीं होता। पुष्प तथा चन्दनके जलसे भगवान् गोविन्दको भक्तिपूर्वक नहलाकर मनुष्य विष्णुधाममें जाता है। जो कपड़ेसे छाने हुए जलके द्वारा भगवान् लक्ष्मीपतिको स्नान कराता है, वह सब पापोंसे छूटकर भगवान् विष्णुके साथ सुखी होता है। जो सूर्यकी संक्रान्तिके दिन दूध आदिसे श्रीहरिको नहलाता है, वह इक्कीस पीढ़ियोंके साथ विष्णुलोकमें वास करता है। शुक्लपक्षमें चतुर्दशी, अष्टमी, पूर्णिमा, एकादशी, रविवार, द्वादशी, पञ्चमी तिथि, सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मन्वादि तिथि, युगादितिथि, सूर्यके आधे उदयके समय, सूर्यके पुष्यनक्षत्रपर रहते समय, रोहिणी और बुधके योगमें, शनि और रोहिणी तथा मङ्गल और अश्विनीके योगमें, शनि-अश्विनी, बुध-अश्विनी, शुक्र-रेवती योग, बुध-अनुराधा, श्रवण-सूर्य, सोमवार-श्रवण, हस्त-बृहस्पति, बुध-अष्टमी तथा बुध और आषाढ़ाके योगमें और दूसरे-दूसरे पवित्र दिनोंमें जो पुरुष शान्तचित्त, मौन और पवित्र होकर दूध, दही, घी और शहदसे श्रीविष्णुको स्नान कराता है, उसको प्राप्त होनेवाले फलका वर्णन सुनो। वह सब पापोंसे छूटकर सम्पूर्ण यज्ञोंका फल पाता और इक्कीस पीढ़ियोंके साथ वैकुण्ठधाममें निवास करता है। राजन्! फिर वहीं ज्ञान प्राप्त करके वह पुनरावृत्तिरहित और योगियोंके लिये भी दुर्लभ हरिका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। भूपते! जो कृष्णपक्षमें चतुर्दशी तिथि और सोमवारके दिन भगवान् शङ्करको दूधसे नहलाता है, शिवका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। अष्टमी अथवा सोमवारको भक्तिपूर्वक नारियलके जलसे भगवान् शिवको स्नान कराकर मनुष्य शिव-सायुज्यका अनुभव करता है। भूपते! शुक्लपक्षकी चतुर्दशी अथवा अष्टमीको घृत और मधुके द्वारा भगवान् शिवको स्नान कराकर मनुष्य उनका सारूप्य प्राप्त कर लेता है। तिलके तेलसे भगवान् विष्णु अथवा शिवको स्नान कराकर मनुष्य सात पीढ़ियोंके साथ उनका सारूप्य प्राप्त कर लेता है। जो शिवको भक्तिपूर्वक ईखके रससे स्नान कराता है, वह सात पीढ़ियोंके साथ एक कल्पतक भगवान् शिवके लोकमें निवास करता है। (फिर शिवका सायुज्य प्राप्त कर लेता है।)

नरेश! एकादशीके दिन सुगन्धित फूलोंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करके मनुष्य दस हजार जन्मके पापोंसे छूट जाता और उनके परम धामको प्राप्त कर लेता है। महाराज! चम्पाके फूलोंसे भगवान् विष्णुकी और आकके फूलोंसे भगवान् शङ्करकी पूजा करके मनुष्य उन-उनका सालोक्य प्राप्त करता है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक भगवान् शङ्कर अथवा विष्णुको धूपमें घृतयुक्त गुग्गुल मिलाकर देता है, वह सब पापोंसे छूट जाता है। नृपश्रेष्ठ! जो भगवान् विष्णु अथवा शङ्करको तिलके तेलसे युक्त दीपदान करता है, वह समस्त कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। जो भगवान् शिव अथवा विष्णुको घीका दीपक देता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो गङ्गा-स्नानका फल पाता है।

जो-जो अभीष्ट वस्तुएँ हैं, वह सब ब्राह्मणको दान कर दे—ऐसा मनुष्य पुनर्जन्मसे रहित भगवान् विष्णुके धाममें जाता है। अन्न और जलके समान दूसरा कोई दान न हुआ है; न होगा। अन्नदान करनेवाला प्राणदाता कहा गया है और जो प्राणदाता है, वह सब कुछ देनेवाला है। नृपश्रेष्ठ! इसलिये अन्नदान करनेवालेको सम्पूर्ण दानोंका फल मिलता है। जलदान तत्काल संतुष्ट करनेवाला माना गया है। नृपश्रेष्ठ! इसलिये ब्रह्मवादी मनुष्योंने जलदानको अन्नदानसे श्रेष्ठ बताया है। महापातक अथवा उपपातकोंसे युक्त मनुष्य भी यदि जलदान करनेवाला है तो वह उन सब पापोंसे मुक्त हो जाता है, यह ब्रह्माजीका कथन है। शरीरको अन्नसे उत्पन्न कहा गया है। प्राणोंको भी अन्नजनित ही मानते हैं; अतः पृथ्वीपते! जो अन्नदान देनेवाला है, उसे प्राणदाता समझना चाहिये; क्योंकि जो-जो तृप्तिकारक दान है, वह समस्त मनोवाञ्छित फलोंको देनेवाला है; अतः भूपाल! इस पृथ्वीपर अन्नदानके समान दूसरा कोई दान नहीं है। जो दरिद्र अथवा रोगी मनुष्यकी रक्षा करता है, उसपर प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु उसकी सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण कर देते हैं। जो मन, वाणी और क्रियाद्वारा

CC-0. In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रोगीकी रक्षा करता है, वह सब पापोंसे छूटकर सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। महीपाल! जो ब्राह्मणको निवास-स्थान देता है, उसपर प्रसन्न हो देवेश्वर भगवान् विष्णु उसे अपना लोक देते हैं। जो ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मणको दूध देनेवाली गाय दान करता है, वह ब्रह्मलोकमें जाता है तथा जो वेदवेत्ता ब्राह्मणको कपिला गाय दान देता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो रुद्रस्वरूप हो जाता है। जो भयसे व्याकुलचित्तवाले पुरुषोंको अभय दान देता है, राजन्! उसके पुण्यफलका यथार्थ वर्णन करता हूँ, सुनो; एक ओर तो पूर्णरूपसे उत्तम दक्षिणा देकर सम्पन्न किये हुए सभी यज्ञ हैं और दूसरी ओर भयभीत मनुष्यकी प्राणरक्षा है (ये दोनों समान हैं)। महीपाल! जो भयविह्वल ब्राह्मणकी रक्षा करता है, वह सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान कर चुका और सम्पूर्ण यज्ञोंकी दीक्षा ले चुका। वस्त्रदान करनेवाला रुद्रलोकमें और कन्यादाता ब्रह्मलोकमें जाता है।

भूपते! कार्तिक अथवा आषाढ़की पूर्णिमाको जो मानव भगवान् शिवकी प्रसन्नताके लिये वृषोत्सर्ग कर्म करता है, उसका फल सुनो—वह सात जन्मोंके पापोंसे मुक्त हो रुद्रका स्वरूप प्राप्त कर लेता है। नृपश्रेष्ठ! जो भैंसेको शिवलिङ्गसे चिह्नित करके छोड़ता है, उसे कभी यमयातना (नरक) नहीं प्राप्त होती है। नृपसत्तम! जो शक्तिके अनुसार ताम्बूल दान करता है, उसपर प्रसन्न हो भगवान् विष्णु उसे आयु, यश तथा लक्ष्मी प्रदान करते हैं। दूध, दही, घी और मधुका दान करनेवाला मनुष्य दस हजार दिव्य वर्षोंतक स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता है। नृपोत्तम! ईख दान करनेवाला मनुष्य ब्रह्मलोकमें जाता है। गन्ध एवं पवित्र फल देनेवाला पुरुष भी ब्रह्मधाममें जाता है। गुड़ और ईखका रस देनेवाला मनुष्य क्षीरसागरको प्राप्त होता है। विद्यादान करनेसे मनुष्यको भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त होता है। विद्यादान, भूमिदान और गोदान—ये उत्तम-से-उत्तम तीन दान क्रमशः जप, जोतने-बोनेकी सुविधा और दूध दुहनेके कारण नरकसे उद्धार करनेवाले होते हैं। नृपोत्तम! सम्पूर्ण दानोंमें विद्यादान श्रेष्ठ है। विद्यादानसे मनुष्य भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। ईंधन दान करनेसे मनुष्यको उपपातकोंसे छुटकारा मिलता है। शालग्राम शिलाका दान महादान बताया गया है। उसका दान करके मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है। शिवलिङ्ग-दान भी ऐसा ही माना गया है। प्रभो! जो मनुष्य श्रेष्ठ पुरुषोंको घर दान देता है, राजन्! उसे गङ्गास्नानका फल अवश्य प्राप्त होता है।

नृपश्रेष्ठ! जो रत्नयुक्त सुवर्णका दान करता है, वह भोग और मोक्ष—दोनों प्राप्त कर लेता है; क्योंकि स्वर्णदान महादान माना गया है। माणिक्यदान करनेसे मनुष्य परममोक्षको प्राप्त होता है। वज्रमणिके दानसे मानव ध्रुवलोकमें जाता है। मूँगा दान करनेसे स्वर्ग एवं रुद्रलोककी प्राप्ति होती है। सवारी देने और मुक्तादान करनेसे दाता चन्द्रलोक प्राप्त करता है। वैदूर्य और पद्मरागमणि देनेवाला मनुष्य रुद्रलोकमें जाता है। पद्मरागमणिके दानसे सर्वत्र सुखकी प्राप्ति होती है। राजन्! घोड़ा दान करनेवाला दीर्घकालके लिये अश्विनीकुमारोंके समीप जाता है। हाथी-दान महादान है। उससे मनुष्य सब कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। सवारी दान करनेसे मनुष्य स्वर्गीय विमानमें बैठकर स्वर्गलोकमें जाता है। भैंस देनेवाला निस्संदेह अपमृत्युको जीत लेता है। गौओंको घास देनेसे रुद्रलोककी प्राप्ति होती है। महीपते! नमक देनेवाला पुरुष वरुणलोकमें जाता है।

जो अपने आश्रमोचित आचारके पालनमें संलग्न, सम्पूर्ण भूतोंके हितमें तत्पर तथा दम्भ और असूयासे रहित हैं, वे ब्रह्मलोकमें जाते हैं। जो वीतराग और ईर्ष्यारहित हो दूसरोंको परमार्थका

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उपदेश देते और स्वयं भी भगवान्‌के चरणोंकी आराधनामें लगे रहते हैं, वे वैकुण्ठधाममें जाते हैं। जो सत्सङ्गमें आनन्दका अनुभव करते, सत्कर्म करनेके लिये सदा उद्यत रहते और दूसरोंके अपवादसे मुँह मोड़ लेते हैं, वे विष्णुधाममें जाते हैं। जो सदा ब्राह्मणों और गौओंका हित साधन करते और परायी स्त्रियोंके सङ्गसे विमुख होते हैं, वे यमलोकका दर्शन नहीं करते। जिन्होंने इन्द्रियों और आहारको जीत लिया है, जो गायोंके प्रति क्षमाभाव रखनेवाले और सुशील हैं तथा जो ब्राह्मणोंपर भी क्षमाभाव रखते हैं, वे वैकुण्ठधाममें जाते हैं। जो अग्निका सेवन करनेवाले गुरुसेवक पुरुष हैं तथा जो पतिकी सेवामें तत्पर रहनेवाली स्त्रियाँ हैं, वे कभी जन्म-मरणरूप संसार-बन्धनमें नहीं पड़तीं। जो सदा देव-पूजामें तत्पर, हरिनामकी शरण लेनेवाले तथा प्रतिग्रहसे दूर रहते हैं, वे परम पदको प्राप्त होते हैं। नृपश्रेष्ठ! जो ब्राह्मणके अनाथ शवका दाह करते हैं, वे सहस्र अश्वमेध यज्ञोंका फल भोगते हैं। मनुजेश्वर! जो पूजारहित शिवलिङ्गका पत्र, पुष्प, फल अथवा जलसे पूजन करता है, उसका फल सुनो—वह विमानपर बैठकर भगवान् शिवके समीप जाता है। जनेश्वर! जो भक्ष्य-भोज्य और फलोंद्वारा निर्जन स्थानमें स्थित शिवलिङ्गका पूजन करता है, वह पुनरावृत्तिरहित शिव-सायुज्यको प्राप्त करता है। सूर्यवंशी भगीरथ! जो पूजारहित विष्णु-प्रतिमाका जलसे भी पूजन करता है, उसे विष्णुका सालोक्य प्राप्त होता है। राजन्! जो देवालयमें गोचर्मके बराबर भू-भागको भी जलसे सींचता है, वह स्वर्गलोक पाता है। जो देवमन्दिरकी भूमिको चन्दनमिश्रित जलसे सींचता है, वह जितने कणोंको भिगोता है, उतने कल्पतक उस देवताके समीप निवास करता है। जो मनुष्य पत्थरके चूनेसे देवमन्दिरको लीपता है या उसमें

स्वस्तिक आदिके चिह्न बनाता है, उसको अनन्त पुण्य प्राप्त होता है। जो भगवान् विष्णु या शङ्करके समीप अखण्ड दीपकी व्यवस्था करता है, उसको एक-एक क्षणमें अश्वमेध यज्ञका फल सुलभ होता है। भूमिपाल! जो देवीके मन्दिरकी एक बार, सूर्यके मन्दिरकी सात बार, गणेशके मन्दिरकी तीन बार और विष्णु-मन्दिरकी चार बार परिक्रमा करता है, वह उन-उनके धाममें जाकर लाखों युगोंतक सुख भोगता है। जो भक्तिभावसे भगवान् विष्णु, गौ तथा ब्राह्मणकी प्रदक्षिणा करता है, उसे पग-पगपर अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। जो काशीमें भगवान् शिवके लिङ्गका पूजन करके प्रणाम करता है, उसके लिये कोई कर्तव्य शेष नहीं रह जाता, उसका फिर संसारमें जन्म नहीं होता। जो विधिपूर्वक भगवान् शङ्करकी दक्षिण और वाम परिक्रमा करता है, वह मनुष्य उनकी कृपासे स्वर्गसे नीचे नहीं आता। जो रोग-शोकसे रहित भगवान् नारायणकी स्तोत्रोंद्वारा स्तुति करता है, वह मनसे जो-जो चाहता है, उन सब कामनाओंको

CC-0. Vasishtha Tripathi Collection. Prof. Indra Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hindi Marg Discord Server - https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

प्राप्त कर लेता है। भूपाल! जो भक्तिभावसे युक्त हो देवमन्दिरमें नृत्य अथवा गान करता है, वह रुद्रलोकमें जाकर मोक्षका भागी होता है। जो मनुष्य देवमन्दिरमें बाजा बजाते हैं, वे हंसयुक्त विमानपर आरूढ़ हो ब्रह्माजीके धाममें जाते हैं। जो लोग देवालयमें करताल बजाते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त हो दस हजार युगोंतक विमानचारी होते हैं। जो लोग भेरी, मृदङ्ग, पटह, मुरज और डिंडिम आदि बाजोंद्वारा देवेश्वर भगवान् शिवको प्रसन्न करते हैं, उन्हें प्राप्त होनेवाले पुण्यफलका वर्णन सुनो। वे सम्पूर्ण कामनाओंसे पूजित हो स्वर्गलोकमें जाकर पाँच कल्पोंतक सुख भोगते हैं। राजन्! जो मनुष्य देवमन्दिरमें शङ्खध्वनि करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके साथ सुख भोगता है। जो भगवान् विष्णुके मन्दिरमें ताल और झाँझ आदिका शब्द करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है। जो सबके साक्षी, निरञ्जन एवं ज्ञानस्वरूप भगवान् विष्णु हैं, वे संतुष्ट होनेपर सब धर्मोंका यथायोग्य सम्पूर्ण फल देते हैं। भूपते! जिन देवाधिदेव सुदर्शनचक्रधारी श्रीहरिके स्मरण मात्रसे सम्पूर्ण कर्म सफल होते हैं, वे जगदीश्वर परमात्मा ही समस्त कर्मोंके फल हैं। पुण्यकर्म करनेवाले पुरुषोंद्वारा सदा स्मरण किये जानेपर वे भगवान् उनकी सब पीड़ाओंका नाश करते हैं। भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे जो कुछ किया जाता है, वह अक्षय मोक्षका कारण होता है। भगवान् विष्णु ही धर्म हैं। धर्मके फल भी भगवान् विष्णु ही हैं। इसी प्रकार कर्म, कर्मोंके फल और उनके भोक्ता भी भगवान् विष्णु ही हैं। कार्य भी विष्णु हैं, करण भी विष्णु हैं। उनसे भिन्न कोई भी वस्तु नहीं है*।

विविध प्रायश्चित्तका वर्णन, इष्टापूर्त्तका फल और सूतक, श्राद्ध तथा तर्पणका विवेचन

धर्मराज कहते हैं—नृपश्रेष्ठ! अब मैं चारों वर्णोंके लिये वेदों और स्मृतियोंमें बताये हुए धर्मका क्रमशः वर्णन करता हूँ, एकाग्रचित्त होकर सुनो। जो भोजन करते समय क्रोधमें या अज्ञानवश किसी अपवित्र वस्तुको या चाण्डाल एवं पतितको छू लेता है, उसके लिये प्रायश्चित्त बतलाता हूँ। वह क्रमानुसार अर्थात् अपवित्र वस्तुके स्पर्श करनेपर तीन रात और चाण्डाल या पतितका स्पर्श कर लेनेपर छः राततक पञ्चगव्यसे तीनों समय स्नान करे तो शुद्ध होता है। यदि कदाचित् भोजन करते समय ब्राह्मणके गुदासे मलस्राव हो जाय अथवा जूठे मुँह या अपवित्र रहनेपर ऐसी बात हो जाय तो उसकी शुद्धिका उपाय बतलाता हूँ। पहले वह ब्राह्मण शौच जाकर जलसे पवित्र होवे (अर्थात् शौच जाकर जलसे हाथ-पैरकी शुद्धि करके कुल्ला और स्नान करे)। तदनन्तर दिन-रात उपवास करके पञ्चगव्य पीनेसे शुद्ध होता है। यदि भोजन करते समय पेशाब हो जाय अथवा पेशाब करनेपर बिना शुद्ध हुए ही भोजन कर ले तो दिन-रात उपवास करे और अग्निमें

* यो देवः सर्वदृग्विष्णुर्ज्ञानरूपी निरञ्जनः। सर्वधर्मफलं पूर्णं संतुष्टः प्रददाति च॥
यस्य स्मरणमात्रेण देवदेवस्य चक्रिणः। सफलानि भवन्त्येव सर्वकर्माणि भूपते॥
परमात्मा जगन्नाथः सर्वकर्मफलप्रदः। सत्कर्मकर्तृभिर्नित्यं स्मृतः सर्वार्तिनाशनः।
तमुद्दिश्य कृतं यच्च तदानन्त्याय कल्पते॥
धर्माणि विष्णुश्च फलानि विष्णुः कर्माणि विष्णुश्च फलानि भोक्ता। कार्यं च विष्णुः करणानि विष्णुरस्मान्न किंचिद् व्यतिरिक्तमस्ति॥
(ना० पूर्व० १३। ५०—५३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth 1183 Naradpuran_Section_4_2_Back

घीकी आहुति दे। यदि भोजनके समय ब्राह्मण किसी भी निमित्तसे अपवित्र हो जाय तो उस समय ग्रासको जमीनपर रखकर स्नान करनेके पश्चात् शुद्ध होता है। यदि उस ग्रासको खा ले तो उपवास करनेपर शुद्ध होता है और यदि अपवित्र अवस्थामें वह सारा अन्न भोजन करके उठे तो तीन राततक वह अशुद्ध रहता है (अर्थात् तीन रात्रितक उपवास करनेसे शुद्ध होता है)। यदि भोजन करते-करते वमन हो जाय तो अस्वस्थ मनुष्य तीन सौ गायत्री-मन्त्रका जप करे और स्वस्थ मनुष्य तीन हजार गायत्री जपे, यही उसके लिये उत्तम प्रायश्चित्त है। यदि द्विज मल-मूत्र करनेपर चाण्डाल या डोमसे छू जाय तो वह त्रिरात्र व्रत करे और यदि भोजन करके जूठे मुँह छू जाय तो छः राततक व्रत करे। यदि रजस्वला और सूतिका स्त्रीको चाण्डाल छू ले तो तीन राततक व्रत करनेपर उसकी शुद्धि होती है—यह शातातप मुनिका वचन[1] है। यदि रजस्वला स्त्री कुत्तों, चाण्डालों अथवा कौओंसे छू जाय तो वह अशुद्ध अवस्थातक निराहार रहे; फिर समयपर (चौथे दिन) स्नान करनेसे वह शुद्ध होती है। यदि दो रजस्वलाएँ आपसमें एक दूसरीका स्पर्श कर लेती हैं तो ब्रह्मकूर्च[2] पीनेसे उनकी शुद्धि होती है और ऊपरसे भी ब्रह्मकूर्चद्वारा उन्हें स्नान कराना चाहिये। जो जूठेसे छू जानेपर तुरंत स्नान नहीं कर लेता, उसके लिये भी यही प्रायश्चित्त है। ऋतुकालमें मैथुन करनेवाले पुरुषको गर्भाधान होनेकी आशङ्कासे स्नान करनेका विधान है। बिना ऋतुके स्त्रीसङ्गम करनेपर मल-मूत्रकी ही भाँति शुद्धि मानी गयी है। अर्थात् हाथ, मुँह आदि धोकर कुल्ला करना चाहिये। मैथुनकर्ममें लगे हुए पति-पत्नी दोनों ही अशुद्ध होते हैं, परंतु शय्यासे उठनेपर स्त्री तो शुद्ध हो जाती है, किंतु पुरुष स्नानके पूर्वतक अशुद्ध ही बना रहता है। जो लोग पतित न होनेपर भी अपने बन्धुजनोंका त्याग करते हैं, (राजाको उचित है कि) उन्हें उत्तम साहस[3] का दण्ड दे। यदि पिता पतित हो जाय तो उसके साथ इच्छानुसार बर्ताव करे।

---

१. इस प्रसङ्गके प्रायः अधिक श्लोक यम-स्मृतिसे और कुछ श्लोक वृद्धशातातप-स्मृतिसे भी मिलते हैं।

२. पञ्चगव्य और कुशोदक मिलानेसे ब्रह्मकूर्च बनता है। उसकी विधि इस प्रकार है—पलाश या कमलके पत्तेमें अथवा ताँबे या सुवर्णके पात्रमें पञ्चगव्य संग्रह करना चाहिये। गायत्री-मन्त्रसे गोमूत्रका, 'गन्धद्वारा०' इस मन्त्रसे गोबरका, 'आप्यायस्व०' इस मन्त्रसे दूधका, 'दधिक्राव्णो०' इस मन्त्रसे दहीका, 'तेजोऽसि शुक्रं०' इस मन्त्रसे घीका और 'देवस्य त्वा०' इस मन्त्रसे कुशोदकका संग्रह करे। चतुर्दशीको उपवास करके अमावास्याको उपर्युक्त वस्तुओंका संग्रह करे। गोमूत्र एक पल होना चाहिये। गोबर आधे अँगूठेके बराबर हो। दूधका मान सात पल और दहीका तीन पल है। घी और कुशोदक एक-एक पल बताये गये हैं। इस प्रकार इन सबको एकत्र करके परस्पर मिला दे। तत्पश्चात् सात-सात पत्तोंके तीन कुश लेकर जिनके अग्रभाग कटे न हों, उनसे उस पञ्चगव्यकी अग्निमें आहुति दे। आहुतिसे बचे हुए पञ्चगव्यको प्रणवसे आलोडन और प्रणवसे ही मन्थन करके प्रणवसे ही हाथमें ले तथा फिर प्रणवका ही उच्चारण करके उसे पी जाय। इस प्रकार तैयार किये हुए पञ्चगव्यको ब्रह्मकूर्च कहते हैं। स्त्री-शूद्रोंको ब्राह्मणके द्वारा पञ्चगव्य बनवाकर प्रणव उच्चारणके बिना ही पीना चाहिये। सर्वसाधारणके लिये ब्रह्मकूर्च-पानका मन्त्र यह है—

यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति देहिनाम्। ब्रह्मकूर्चो दहेत्सर्वं प्रदीप्ताग्निरिवेन्धनम्॥

(वृद्धशातातप० १२)

अर्थात् 'देहधारियोंके शरीरमें चमड़े और हड्डीतकमें जो पाप विद्यमान है, वह सब ब्रह्मकूर्च इस प्रकार जला दे, जैसे प्रज्वलित आग ईंधनको जला डालती है।'

३. मनुष्य बलके अभिमानसे जो क्रूरतापूर्ण कर्म करता है, उसे 'साहस' कहते हैं। उसके तीन भेद हैं—प्रथम, मध्यम और उत्तम। फल, मूल, जल आदि और खेतकी सामग्रीको नष्ट करना 'प्रथम साहस' माना गया है। वस्त्र,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अर्थात् अपनी रुचिके अनुसार उसका त्याग और ग्रहण दोनों कर सकते हैं; किंतु माताका त्याग कभी न करे। जो रस्सी आदि साधनोंद्वारा फाँसी लगाकर आत्मघात करता है, वह यदि मर जाय तो उसके शरीरमें पवित्र वस्तुका लेप करा दे और यदि जीवित बच जाय तो राजा उससे दो सौ मुद्रा दण्ड ले। उसके पुत्र और मित्रोंपर एक-एक मुद्रा दण्ड लगावे और वे लोग शास्त्रीय विधिके अनुसार प्रायश्चित्त करें। जो मनुष्य मरनेके लिये जलमें प्रवेश करके अथवा फाँसी लगाकर मरनेसे बच जाते हैं, जो संन्यास ग्रहण करके और उपवास व्रत प्रारम्भ करके उसे त्याग देते हैं, जो विष पीकर अथवा ऊँचे स्थानसे गिरकर मरनेकी चेष्टा करनेपर भी जीवित बच जाते हैं तथा जो शस्त्रका अपने ऊपर आघात करके भी मृत्युसे वञ्चित रह जाते हैं, वे सब सम्पूर्ण लोकसे बहिष्कृत हैं। इनके साथ भोजन या निवास नहीं करना चाहिये। ये सब-के-सब एक चान्द्रायण अथवा दो तप्तकृच्छ्रव्रत करनेसे शुद्ध होते हैं। कुत्ते, सियार और वानर आदि जन्तुओंके काटनेपर तथा मनुष्यद्वारा दाँतसे काटे जानेपर भी मनुष्य दिन, रात अथवा संध्या कोई भी समय क्यों न हो, तुरंत स्नान कर लेनेपर शुद्ध हो जाता है। जो ब्राह्मण अज्ञानसे—अनजानमें किसी प्रकार चाण्डालका अन्न खा लेता है, वह गोमूत्र और यावकका आहार करके पंद्रह दिनमें शुद्ध होता है। गौ अथवा ब्राह्मणका घर जलाकर, फाँसी आदि लगाकर मरे हुए मनुष्यका स्पर्श करके तथा उसके बन्धनोंको काटकर ब्राह्मण अपनी शुद्धिके लिये एक कृच्छ्रव्रतका आचरण करे। माता, गुरुपत्नी, पुत्री, बहिन और पुत्रवधूसे समागम करनेवाला तो प्रज्वलित अग्निमें प्रवेश कर जाय। उसके लिये दूसरा कोई शुद्धिका उपाय नहीं है। रानी, संन्यासिनी, धाय, अपनेसे श्रेष्ठ वर्णकी स्त्री तथा समान गोत्रवाली स्त्रीके साथ समागम करनेपर मनुष्य दो कृच्छ्रव्रतका अनुष्ठान करे। पिताके गोत्र अथवा माताके गोत्रमें उत्पन्न होनेवाली अन्यान्य स्त्रियों तथा सभी परस्त्रियोंसे अनुचित सम्बन्ध रखनेवाला पुरुष उस पापसे हटकर अपनी शुद्धिके लिये कृच्छ्रशान्तपनव्रत करे। द्विजगण खूब तपाये हुए कुशोदकको केवल एक बार पाँच राततक पीकर वेश्यागमनके पापका निवारण करते हैं। गुरुतल्पगामीके लिये जो व्रत है, वही कुछ लोग गोघातकके लिये भी बताते हैं और कुछ विद्वान् अवकीर्णी (धर्मभ्रष्ट)-के लिये भी उसी व्रतका विधान करते हैं। जो डंडेसे गौके ऊपर प्रहार करके उसे मार गिराता है, उसके लिये गोवधका जो सामान्य प्रायश्चित्त है, उससे दूना व्रत करनेका विधान है। तभी वह व्रत उसके पापको शुद्ध कर सकता है।

पशु, अन्न,पान और घरकी सामग्री आदिकी लूट-खसोट करना 'मध्यम साहस' कहा गया है। जहर देकर या हथियारसे किसीको मारना, परायी स्त्रियोंसे बलात्कार करना तथा अन्यान्य प्राणनाशक कार्य करना 'उत्तम साहस' के अन्तर्गत है। 'प्रथम साहस' का दण्ड है कम-से-कम सौ पण, 'मध्यम साहस' का दण्ड कम-से-कम पाँच सौ पण हैं। 'उत्तम साहस' में कम-से-कम एक हजार पण दण्ड लगाया जाता है। इसके सिवा, अपराधीका वध या अङ्ग-भङ्ग अथवा सर्वस्व-हरण या नगरसे निर्वासन आदि भी 'उत्तम साहस' के दण्ड बताये गये हैं; जैसा कि नारद-स्मृतिमें कहा गया है—

तस्य दण्डः क्रियापेक्षः प्रथमस्य शतावरः। मध्यमस्य तु शास्त्रज्ञैर्दृष्टः पञ्चशतावरः॥
उत्तमे साहसे दण्डः सहस्रावर इष्यते। वधः सर्वस्वहरणं पुरान्निर्वासनाङ्कने॥
तदङ्गच्छेद इत्युक्तो दण्ड उत्तमसाहसे॥

(विवादपद ७—९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

गौको हाँकनेके लिये अँगूठेके बराबर मोटी, बाँहके बराबर बड़ी पल्लवयुक्त और गीली पतली डालका डंडा उचित बताया गया है। यदि गौओंके मारनेपर उनका गर्भ भी हो और वह मर जाय तो उनके लिये पृथक्-पृथक् एक-एक कृच्छ्रव्रत करे। यदि कोई काठ, ढेला, पत्थर अथवा किसी प्रकारके शस्त्रद्वारा गौओंको मार डाले तो भिन्न-भिन्न शस्त्रके लिये शास्त्रमें इस प्रकार प्रायश्चित्त बताया गया है। काष्ठसे मारनेपर शान्तपनव्रतका विधान है। ढेलेसे मारनेपर प्राजापत्यव्रत करना चाहिये। पत्थरसे आघात करनेपर तप्तकृच्छ्रव्रत और किसी शस्त्रसे मारनेपर अतिकृच्छ्रव्रत करना चाहिये। यदि कोई गौओं और ब्राह्मणोंके लिये (अच्छी नीयतसे) ओषधि, तेल एवं भोजन दे और उसके देनेके बाद उसकी मृत्यु हो जाय तो उस दशामें कोई प्रायश्चित्त नहीं है। तेल और दवा पीनेपर अथवा दवा खानेपर या शरीरमें धँसे हुए लोहे या काँटे आदिको निकालनेका प्रयत्न करनेपर मृत्यु हो जाय तो भी कोई प्रायश्चित्त नहीं है। चिकित्सा या दवा करनेके लिये बछड़ोंका कण्ठ बाँधनेसे अथवा शामको उनकी रक्षाके लिये उन्हें घरमें रोकने या बाँधनसे भी कोई दोष नहीं होता।

(उपर्युक्त पापोंका प्रायश्चित्त करते समय मनुष्यको इस विधिसे मुण्डन कराना चाहिये)—एक पाद (चौथाई) प्रायश्चित्त करनेपर कुछ रोममात्र कटा देने चाहिये। दो पादके प्रायश्चित्तमें केवल दाढ़ी-मूँछ मुड़ा ले, तीन पादका प्रायश्चित्त करते समय शिखाके सिवा और सब बाल बनवा दे और पूरा प्रायश्चित्त करनेपर सब कुछ मुड़ा देना चाहिये। यदि स्त्रियोंको प्रायश्चित्त करना पड़े तो उनके सब केश समेटकर दो अंगुल कटा देना चाहिये। इसी प्रकार स्त्रियोंके सिर मुड़ानेका विधान है। स्त्रीके लिये सारे बाल कटाने और वीरासनसे बैठनेका नियम नहीं है। उनके लिये गोशालामें निवास करनेकी विधि नहीं है। यदि गौ कहीं जाती हो तो उसके पीछे नहीं जाना चाहिये। राजा, राजकुमार अथवा बहुत-से शास्त्रोंका ज्ञाता ब्राह्मण हो तो उन सबके लिये केश मुड़ाये बिना ही प्रायश्चित्त बताना चाहिये। उन्हें केशोंकी रक्षाके लिये दूने व्रतका पालन करनेकी आज्ञा दे। दूना व्रत करनेपर उसके लिये दक्षिणा भी दूनी ही होनी चाहिये। यदि ऐसा न करे तो हत्या करनेवालेका पाप नष्ट नहीं होता और दाता नरकमें पड़ता है। जो लोग वेद और स्मृतिके विरुद्ध व्रत-प्रायश्चित्त बताते हैं, वे धर्मपालनमें विघ्न डालनेवाले हैं। राजा उन्हें दण्डद्वारा पीड़ित करे, परंतु किसी कामना या स्वार्थसे मोहित होकर राजा उन्हें कदापि दण्ड न दे; नहीं तो उनका पाप सौगुना होकर उस राजापर ही पड़ता है। तदनन्तर प्रायश्चित्त पूरा कर लेनेपर ब्राह्मणोंको भोजन करावे। बीस गाय और एक बैल उन्हें दक्षिणामें दे। यदि गौओंके अङ्गोंमें घाव होकर उसमें कीड़े पड़ जायँ अथवा मक्खी आदि लगने लगें और इन कारणोंसे उन गौओंकी मृत्यु हो जाय तो उन गायोंको रखनेवाला पुरुष आधे कृच्छ्रव्रतका अनुष्ठान करे और अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा दे। इस प्रकार प्रायश्चित्त करके श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर कम-से-कम एक माशा सुवर्ण दान करे तो शुद्धि होती है।

जलके भीतरकी, बाँबीकी, चूहोंके बिलकी, ऊसर भूमिकी, रास्तेकी, श्मशान-भूमिकी तथा शौचसे बची हुई—ये सात प्रकारकी मृत्तिका काममें नहीं लानी चाहिये। ब्राह्मणको प्रयत्नपूर्वक इष्टापूर्त कर्म करने चाहिये। इष्ट (यज्ञ-याग आदि) से वह स्वर्ग पाता है और पूर्त कर्मसे वह मोक्षसुखका भागी होता है। धनकी अपेक्षा रखनेवाले यज्ञ, दान आदि कर्म इष्ट कहलाते हैं और जलाशय

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

बनवाना आदि कार्य पूर्त कहा जाता है। विशेषतः बगीचा, किसी देवताके लिये बने हुए तालाब, बावड़ी, कुआँ, पोखरा और देवमन्दिर—ये यदि गिरते या नष्ट होते हों तो जो इनका उद्धार करता है, वह पूर्त कर्मका फल भोगता है; क्योंकि ये सब पूर्त कर्म हैं। सफेद गायका मूत्र, काली गौका गोबर, ताँबेके रंगवाली गायका दूध, सफेद गायका दही और कपिला गायका घी—इन सब वस्तुओंको लेकर एकत्र करे तो वह पञ्चगव्य बड़े-बड़े पातकोंका नाश करनेवाला होता है। कुशोंद्वारा लाये हुए तीर्थ-जल और नदी-जलके साथ उक्त सभी द्रव्योंको पृथक्-पृथक् प्रणवमन्त्रसे लाकर प्रणवद्वारा ही उन्हें उठावे, प्रणव-जप करते हुए ही उनका आलोडन करे और प्रणवके उच्चारणपूर्वक ही पीये। पलाश वृक्षके बिचले पत्तेमें अथवा ताँबेके शुभ पात्रमें अथवा कमलके पत्तेमें या मिट्टीके बर्तनमें कुशोदकसहित उस पञ्चगव्यको पीना चाहिये।

एक सूतकमें दूसरा सूतक उपस्थित हो जाय तो दूसरेमें दोष नहीं लगता। पहले सूतकके साथ ही उसकी शुद्धि हो जाती है। एक जननाशौचके साथ दूसरा जननाशौच और एक मरणाशौचके साथ दूसरा मरणाशौच भी शुद्ध हो जाता है। एक मासके भीतर गर्भस्राव हो तो तीन दिनका अशौच बताये। दो माससे ऊपर होनेपर जितने महीनेमें गर्भस्राव हो, उतनी ही रात्रियोंमें उसके अशौचकी निवृत्ति होती है। साध्वी रजस्वला स्त्री रज बंद हो जानेपर स्नानमात्रसे शुद्ध होती है। विवाहसे सातवें पदपर अर्थात् सप्तपदीकी क्रिया पूरी होनेपर अपने पितृ-सम्बन्धी गोत्रसे च्युत हो जाती है यानी उसके पतिका गोत्र हो जाता है; अतः उसके लिये श्राद्ध और तर्पण पतिके गोत्रसे ही करने चाहिये। पिण्डदानमें पति और पत्नी दोनोंका उद्देश्य होता है; अतः प्रत्येक पिण्डमें दो नामसे संकल्प होना चाहिये। तात्पर्य यह है कि पिता या पितामह आदिको सपत्नीक विशेषण लगाकर पिण्डदान करना चाहिये। इस प्रकार छः व्यक्तियोंके लिये तीन पिण्ड देने योग्य हैं। ऐसा दाता मोहमें नहीं पड़ता। माता अपने पतिके साथ विश्वेदेवपूर्वक श्राद्धका उपभोग करती है। इसी प्रकार पितामही और प्रपितामही भी अपने-अपने पतिके ही साथ श्राद्ध-भोग करती हैं। प्रत्येक वर्षमें माता-पिताका एकोद्दिष्टश्राद्धद्वारा सत्कार करे। उस वार्षिक श्राद्धमें विश्वेदेवका पूजन नहीं किया जाता। अतः उनके बिना ही वह श्राद्धभोजन करावे। उसमें एक ही पिण्ड दे। नित्य, नैमित्तिक, काम्य, वृद्धिश्राद्ध तथा पार्वण—विद्वान् पुरुषोंको ये पाँच प्रकारके श्राद्ध जानने चाहिये। ग्रहण, संक्रान्ति, पूर्णिमा या अमावास्या पर्व, उत्सवकाल तथा महालयके अवसरपर मनुष्य तीन पिण्ड दे और मृत्युतिथिको एक ही पिण्ड दे। जिस कन्याका विवाह नहीं हुआ है, वह पिण्ड, गोत्र और सूतकके विषयमें पिताके गोत्रसे पृथक् नहीं है। पाणिग्रहण और मन्त्रोंद्वारा वह अपने पिताके गोत्रसे पृथक् होती है। जिस कन्याका विवाह जिस वर्णके साथ होता है, उसके समान उसे सूतक भी लगता है। उसके लिये पिण्ड और तर्पण भी उसी वर्णके अनुसार होने चाहिये। विवाह हो जानेपर चौथी रातमें वह पिण्ड, गोत्र और सूतकके विषयमें अपने पतिके साथ एक हो जाती है। मृत व्यक्तिके प्रति हितबुद्धि रखनेवाले बन्धुजनोंको शवदाहके प्रथम, द्वितीय, तृतीय अथवा चतुर्थ दिन अस्थि-संचय करना चाहिये अथवा ब्राह्मण आदि चारों वर्णोंका अस्थि-संचय क्रमशः चौथे, पाँचवें, सातवें और नवें दिन भी कर्तव्य बताया गया है। जिस मृत व्यक्तिके लिये ग्यारहवें दिन वृषोत्सर्ग किया जाता है, वह प्रेतलोकसे मुक्त और स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

है। नाभिके बराबर जलमें खड़ा होकर मन-ही-मन यह चिन्तन करे कि मेरे पितर आवें और यह जलाञ्जलि ग्रहण करें। दोनों हाथोंको संयुक्त करके जलसे पूर्ण करे और गोशृङ्गमात्र जल उठाकर उसे पुनः जलमें डाल दे। जलमें दक्षिणकी ओर मुँह करके खड़ा हो आकाशमें जल गिराना चाहिये; क्योंकि पितरोंका स्थान आकाश और दिशा दक्षिण है। देवता आप (जल) कहे गये हैं और पितरोंका नाम भी आप है; अतः पितरोंके हितकी इच्छा रखनेवाला पुरुष उनके लिये जलमें ही जल दे। जो दिनमें सूर्यकी किरणोंसे तपता है, रातमें नक्षत्रोंके तेज तथा वायुका स्पर्श पाता है और दोनों संध्याओंके समय भी उक्त दोनों वस्तुओंका सम्पर्क लाभ करता है, वह जल सदा पवित्र माना गया है। जो अपने स्वाभाविक रूपमें हो, जिसमें किसी अपवित्र वस्तुका मेल न हुआ हो, वह जल सदा पवित्र है। ऐसा जल किसी पात्रमें हो या पृथ्वीपर, सदा शुद्ध माना गया है। देवताओं और पितरोंके लिये जलमें ही जलाञ्जलि दे और जो बिना संस्कारके ही मरे हैं, उनके लिये विद्वान् पुरुष भूमिपर जलाञ्जलि दे। श्राद्ध और होमके समय एक हाथसे पिण्ड एवं आहुति दे; किंतु तर्पणमें दोनों हाथोंसे जल देना चाहिये। यह शास्त्रोंद्वारा निश्चित धर्म है।

पापियोंको प्राप्त होनेवाली नरकोंकी यातनाओंका वर्णन, भगवद्भक्तिका निरूपण तथा धर्मराजके उपदेशसे भगीरथका गङ्गाजीको लानेके लिये उद्योग

धर्मराज कहते हैं—राजा भगीरथ! अब मैं पापोंके भेद और स्थूल यातनाओंका वर्णन करूँगा। तुम धैर्य धारण करके सुनो; क्योंकि नरक बड़े भयंकर होते हैं। जो दुरात्मा पापी सदा जिन नरकाग्नियोंमें पकाये जाते हैं, वे नरक पापका भयंकर फल देनेवाले हैं। मैं उन सबका वर्णन करता हूँ। उनके नाम इस प्रकार हैं—तपन, बालुका, रौरव, महारौरव, कुम्भ, कुम्भीपाक, निरुच्छ्वास, कालसूत्र, प्रमर्दन, भयंकर असिपत्रवन, लालाभक्ष, हिमोत्कट, मूषावस्था, वसारूप, वैतरणी नदी, श्वभक्ष्य, मूत्रपान, पुरीषह्रद, तप्तशूल, तप्तशिला, शाल्मली वृक्ष, शोणित कूप, भयानक शोणितभोजन, वह्निज्वालानिवेशन, शिलावृष्टि, शस्त्रवृष्टि, अग्निवृष्टि, क्षारोदक, उष्णतोय, तप्तायःपिण्डभक्षण, अधःशिरः-शोषण, मरुप्रतपन, पाषाणवर्षा, कृमिभोजन, क्षारोदपान, भ्रमन, क्रकचदारण, पुरीष-लेपन, पुरीष-भोजन, महाघोर रेतःपान, सर्वसन्धिदाहन, धूमपान, पाशबन्ध, नानाशूलानुलेपन, अङ्गार-शयन, मुसलमर्दन, विविधकाष्ठयन्त्र, कर्षण, छेदन, पतनोत्पतन, गदादण्डादिपीडन, गजदन्तप्रहरण, नानासर्पदंशन, नासामुखशीताम्बुसेचन, घोरक्षाराम्बुपान, लवणभक्षण, स्नायुच्छेद, स्नायुबन्ध, अस्थिच्छेद, क्षाराम्बुपूर्णरन्ध्रप्रवेश, मांस-भोजन, महाघोर पित्तपान, श्लेष्म-भोजन, वृक्षाग्रपातन, जलान्तर्मज्जन, पाषाणधारण, कण्टकोपरिशयन, पिपीलिकादंशन, वृश्चिकपीडन, व्याघ्रपीडा, शृगालीपीडा, महिष-पीडन, कर्दमशयन, दुर्गन्धपरिपूर्ण, बहुशस्त्रास्त्रशयन, महातिक्तनिषेवण, अत्युष्णतैलपान, महाकटुनिषेवण, कषायोदक-पान, तप्तपाषाण-तक्षण, अत्युष्णशीत-स्नान, दशनशीर्णन, तप्तायःशयन और अयोभार-बन्धन। महाभाग! इस तरह करोड़ों प्रकारकी नरक-यातनाएँ होती हैं। जिनका सहस्रों वर्षोंमें भी मैं वर्णन नहीं कर सकता।

भूपाल! इन नरकोंमेंसे जिस पापीको जो प्राप्त होता है, वह सब मैं बतलाऊँगा। यह सब मेरे मुखसे सुनो। ब्रह्महत्यारा, शराबी, सुवर्णकी चोरी करनेवाला, गुरुपत्नीगामी—ये महापातकी हैं। इनसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

संसर्ग रखनेवाला पाँचवाँ महापातकी है*। जो पङ्क्तिभेद करता, बलिवैश्वदेवहीन होनेके कारण व्यर्थ (केवल शरीरपोषणके लिये ही) पाक बनाता, सदा ब्राह्मणोंको लाञ्छित करता, ब्राह्मणों या गुरुजनोंपर हुक्म चलाता और वेद बेचता है, ये पाँच प्रकारके पापी ब्रह्मघातक कहे गये हैं। 'मैं आपको धन आदि दूँगा' यह आज्ञा देकर जो ब्राह्मणको बुलाता है और पीछे 'नहीं है' ऐसा कहकर उसे सूखा जवाब दे देता है, उसे ब्रह्म-हत्यारा कहा गया है। जो स्नान अथवा पूजनके लिये जाते हुए ब्राह्मणके कार्यमें विघ्न डालता है, उसे भी ब्रह्मघाती कहते हैं। जो परायी निन्दा और अपनी प्रशंसामें लगा रहता है तथा जो असत्यभाषणमें रत रहता है, वह ब्रह्महत्यारा कहा गया है। अधर्मका अनुमोदन करनेवालेको भी ब्रह्मघाती कहते हैं। जो दूसरोंको उद्वेगमें डालता, दूसरोंके दोषोंकी चुगली खाता और पाखण्डपूर्ण आचारमें तत्पर रहता है, उसे ब्रह्महत्यारा बताया गया है। जो प्रतिदिन दान लेता, प्राणियोंके वधमें तत्पर रहता तथा अधर्मका अनुमोदन करता है, उसे भी ब्रह्मघाती कहा गया है। राजन्! इस तरह नाना प्रकारके पाप ब्रह्महत्याके तुल्य बताये गये हैं।

अब मदिरापानके समान पापका संक्षेपसे वर्णन करता हूँ। गणान्न-भोजन (कई जगहसे भोजन लेकर खाना), वेश्यासेवन करना और पतित पुरुषोंका अन्न भोजन करना सुरापानके तुल्य माना गया है। उपासनाका त्याग, देवल पुरुष (मन्दिरके पुजारी)-का अन्न खाना तथा शराब पीनेवाली स्त्रीसे सम्बन्ध रखना मदिरापानके समान माना गया है। जो द्विज शूद्रके यहाँ भोजन करता है, उसे सब धर्मोंसे बहिष्कृत शराबी ही समझना चाहिये। जो शूद्रके आज्ञानुसार दासका कर्म करता है, वह नराधम ब्राह्मण मदिरापानके समान पापका भागी होता है। इस तरह अनेक प्रकारके पाप मदिरापानके तुल्य माने गये हैं।

अब मैं सुवर्णकी चोरीके समान पापका वर्णन करता हूँ, सुनो। कंद, मूल, फल, कस्तूरी, रेशमी वस्त्र तथा रत्नोंकी चोरीको सदा सुवर्णकी चोरीके ही समान माना गया है। ताँबा, लोहा, राँगा, काँस, घी, शहद और सुगन्धित द्रव्योंका अपहरण करना सुवर्णकी चोरीके समान माना गया है। सुपारी, जल, चन्दन तथा कपूरका अपहरण भी सुवर्णकी चोरीके समान है। श्राद्धका त्याग, धर्मकार्यका लोप करना और यति पुरुषोंकी निन्दा करना भी सुवर्णकी चोरीके समान माना गया है। भोजनके योग्य पदार्थोंका अपहरण, विविध प्रकारके अनाजोंकी चोरी तथा रुद्राक्षका अपहरण भी सुवर्णकी चोरीके समान माना गया है।

अब गुरुपत्नीगमनके समान पापका वर्णन किया जाता है। भगिनी, पुत्र-वधू तथा रजस्वला स्त्रीके साथ संगम करना गुरुपत्नीगमनके समान माना गया है। नीच जातिकी स्त्रीसे सम्बन्ध रखना, मदिरा पीनेवाली स्त्रीसे सहवास करना तथा परायी स्त्रीके साथ सम्भोग करना गुरुतल्पगमनके समान माना गया है। भाईकी स्त्रीके साथ गमन, मित्रकी स्त्रीका सेवन तथा अपनेपर विश्वास करनेवाली स्त्रीके सतीत्वका अपहरण भी गुरुतल्पगमनके समान माना गया है। असमयमें मैथुन कर्म करना, पुत्रीगमन करना तथा धर्मका लोप और शास्त्रकी निन्दा करना—यह सब गुरुपत्नीगमनके समान माना गया है। राजन्! इस प्रकारके पाप महापातक कहे गये हैं। इनमेंसे किसी एकके साथ भी संसर्ग रखनेवाला पुरुष

* ब्रह्महा च सुरापी च स्तेयी च गुरुतल्पगः॥ महापातकिनस्त्वेते तत्संसर्गी च पञ्चमः।

(ना० पूर्व० १५। २२-२३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उसके समान हो जाता है। शान्तचित्त महर्षियोंने जिस किसी प्रकार प्रायश्चित्त आदिकी व्यवस्थाद्वारा इन पापोंके निवारणका उपाय देखा है।

भूपते! जो पाप प्रायश्चित्तसे रहित हैं, उनका वर्णन सुनो। वे पाप समस्त पापोंके तुल्य तथा बड़े भारी नरक देनेवाले हैं। ब्रह्महत्या आदि पापोंके निवारणका उपाय तो किसी प्रकार हो सकता है; परंतु जो ब्राह्मणसे द्वेष करता है, उसका कहीं भी निस्तार नहीं होता। नरेश्वर! जो विश्वासघाती, कृतघ्न तथा शूद्रजातीय स्त्रीका सङ्ग करनेवाले हैं, उनका उद्धार कभी नहीं होता। जिनका शरीर निन्दित अन्नसे पुष्ट हुआ है तथा जिनका चित्त वेदोंकी निन्दामें ही रत है और जो भगवत्-कथा-वार्ता आदिकी निन्दा करते हैं, उनका इहलोक तथा परलोकमें कहीं भी उद्धार नहीं होता। प्रायश्चित्तहीन और भी बहुत-से पाप हैं, उनका परिचय मेरे नरक-वर्णनके साथ सुनो। जो महापातकी बताये गये हैं, वे उन प्रत्येक नरकमें एक-एक युग रहते हैं और अन्तमें इस पृथ्वीपर आकर वे सात जन्मोंतक गदहे होते हैं, तदनन्तर वे पापी दस जन्मोंतक घावसे भरे शरीरवाले कुत्ते होते हैं, फिर सौ वर्षोंतक उन्हें विष्ठाका कीड़ा होना पड़ता है। तदनन्तर बारह जन्मोंतक वे सर्प होते हैं। राजन्! इसके बाद एक हजार जन्मोंतक वे मृग आदि पशु होते हैं। फिर सौ वर्षोंतक स्थावर (वृक्ष आदि) योनिमें जन्म लेते हैं। तत्पश्चात् उन्हें गोधा (गोह)-का शरीर प्राप्त होता है। फिर सात जन्मोंतक वे पापाचारी चाण्डाल होते हैं। इसके बाद सोलह जन्मोंतक उन्हें नीच जातियोंमें जन्म लेना पड़ता है। फिर दो जन्मतक वे दरिद्र, रोगपीड़ित तथा सदा प्रतिग्रह लेनेवाले होते हैं, इससे उन्हें फिर नरकगामी होना पड़ता है। जिनका चित्त असूया (गुणोंमें दोषदृष्टि)-से व्याप्त है, उनके लिये रौरव नरककी प्राप्ति बतायी गयी है। वहाँ दो कल्पोंतक स्थित रहकर वे सौ जन्मोंतक चाण्डाल होते हैं। जो गाय, अग्नि और ब्राह्मणके लिये 'न दो' ऐसा कहकर बाधा डालते हैं, वे सौ बार कुत्तोंकी योनिमें जन्म लेकर अन्तमें चाण्डालोंके घर उत्पन्न होते हैं। इसके बाद वे विष्ठाके कीड़े होते हैं। फिर तीन जन्मोंतक व्याघ्र होकर अन्तमें इक्कीस युगोंतक नरकमें पड़े रहते हैं। जो परायी निन्दामें तत्पर, कटु भाषी और दानमें विघ्न डालनेवाले होते हैं, उनके पापका यह फल है। चोर मुसल और ओखलीके द्वारा चूर्ण किये जाते हैं। उसके बाद उन्हें तीन वर्षोंतक तपाया हुआ पत्थर उठाना पड़ता है, तदनन्तर वे सात वर्षोंतक कालसूत्रसे विदीर्ण किये जाते हैं। उस समय पराये धनका अपहरण करनेवाले वे चोर अपने पाप-कर्मके लिये शोक करते हुए कर्मके फलसे निरन्तर नरकाग्निमें पकाये जाते हैं। जो दूसरोंके दोष बताते या चुगुली खाते हैं, उन्हें जिस भयंकर नरककी प्राप्ति होती है, वह सुनो। उन्हें एक सहस्र युगतक तपाये हुए लोहेका पिण्ड भक्षण करना पड़ता है। अत्यन्त भयानक सँड़सोंसे उनकी जीभको पीड़ा दी जाती है और वे अत्यन्त घोर निरुच्छ्वास नामक नरकमें आधे कल्पतक निवास करते हैं। अब पर-स्त्री-लम्पट पुरुषोंको प्राप्त होनेवाले नरकका तुमसे वर्णन करता हूँ। तपाये हुए ताँबेकी स्त्रियाँ सुन्दर रूप और आभरणोंसे युक्त होकर उनके साथ हठपूर्वक दीर्घकालतक रमण करती हैं। उनका रूप वैसा ही होता है, जैसी स्त्रियोंके साथ वे इस लोकमें सम्बन्ध रखते रहे हैं। वह पुरुष उनके भयसे भागता है और वे बलपूर्वक उसे पकड़ लेती हैं तथा उसके पाप-कर्मका परिचय देती हुई उन्हें क्रमशः विभिन्न

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

नरकोंमें पहुँचाती हैं। भूपाल! इस लोकमें जो स्त्रियाँ अपने पतिको त्यागकर दूसरे पुरुषकी सेवा स्वीकार करती हैं, उन्हें यमलोकमें तपाये हुए लोहेके बलवान् पुरुष लोहेकी तपी हुई शय्यापर बलपूर्वक गिराकर उनके साथ बहुत समयतक रमण करते हैं। उनसे छूटनेपर वे स्त्रियाँ अग्निके समान प्रज्वलित लोहेके खंभेका आलिङ्गन करके एक हजार वर्षतक खड़ी रहती हैं। तत्पश्चात् उन्हें नमक मिलाये जलसे नहलाया जाता है और खारे पानीका ही सेवन कराया जाता है। उसके बाद वे सौ वर्षोंतक सभी नरकोंकी यातनाएँ भोगती हैं। जो मनुष्य ब्राह्मण, गौ और श्रेष्ठ क्षत्रिय राजाका इस लोकमें वध करता है, वह भी पाँच कल्पोंतक सम्पूर्ण यातनाओंको भोगता है। जो महापुरुषोंकी निन्दाको आदरपूर्वक सुनता है, उसका फल सुनो; ऐसे लोगोंके कानोंमें तपाये हुए लोहेकी बहुत-सी कीलें ठोंक दी जाती हैं। तत्पश्चात् कानोंके उन छिद्रोंमें अत्यन्त गरम किया हुआ तेल भर दिया जाता है। फिर वे कुम्भीपाक नरकमें पड़ते हैं। जो लोग भगवान् शिव और विष्णुसे विमुख एवं नास्तिक हैं, उनको मिलनेवाले फलोंका वर्णन करता हूँ। वे यमलोकमें करोड़ों वर्षोंतक केवल नमक खाते हैं। उसके बाद एक कल्पतक तपी हुई बालूसे पूर्ण रौरव नरकमें डाले जाते हैं। राजन्! इसी प्रकार अन्य नरकोंमें भी वे पापाचारी जीव अपने पापोंका फल भोगते हैं। जो नराधम कोपपूर्ण दृष्टिसे ब्राह्मणोंकी ओर देखते हैं, उनकी आँखमें हजारों तपी हुई सूइयाँ चुभो दी जाती हैं। नृपश्रेष्ठ! तदनन्तर वे नमकीन पानीकी धारासे भिगोये जाते हैं, इसके बाद उन पापकर्मियोंको भयंकर क्रकचों (आरों) से चीरा जाता है। राजन्! जो लोग विश्वासघाती, मर्यादा तोड़नेवाले तथा पराये अन्नके लोभी हैं, उन्हें जिस भयंकर नरककी प्राप्ति होती है, वह सुनो। वे अपना ही मांस खाते हैं और उनके शरीरको वहाँ प्रतिदिन

कुत्ते नोच खाते हैं। उन्हें सभी नरकोंमें एक-एक वर्ष निवास करना पड़ता है। जो सदा दान ही लिया करते हैं, जो केवल नक्षत्रोंके ही पढ़नेवाले (नक्षत्र-विद्यासे जीविका करनेवाले) हैं तथा जो सदा देवलक (पुजारी)- का अन्न भोजन करते हैं, उनकी क्या दशा होती है, वह भी मुझसे सुनो। राजन्! वे पापसे पूर्ण जीव एक कल्पतक इन सभी यातनाओंमें पकाये जाते हैं और वे सदा दुःखी रहकर निरन्तर कष्ट भोगते रहते हैं। तत्पश्चात् कालसूत्रसे पीड़ित हो तेलमें डुबोये जाते हैं। फिर उन्हें नमकीन जलसे नहलाया जाता है और उन्हें मल-मूत्र खाना पड़ता है। इसके बाद वे पृथ्वीपर आकर म्लेच्छ जातिमें जन्म लेते हैं। जो सदा दूसरोंको उद्वेगमें डालनेवाले हैं, वे वैतरणी नदीमें जाते हैं। पञ्च महायज्ञोंका त्याग करनेवाले पुरुष लालाभक्ष नरकमें पड़ते हैं। वहाँ उन्हें लार खाना पड़ता है। उपासनाका त्याग करनेवाला पुरुष रौरव नरकमें जाता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भूपाल! जो ब्राह्मणोंके गाँवसे 'कर' लेते हैं, वे जबतक चन्द्रमा और तारोंकी स्थिति रहती है, तबतक इन नरकयातनाओंमें पकाये जाते हैं। जो राजा गाँवोंमें अधिक 'कर' लगाता है, वह पाँच कल्पोंतक सहस्रों पीढ़ियोंके साथ नरक भोगता है। राजन्! जो पापी ब्राह्मणोंके गाँवसे 'कर' लेनेकी अनुमति देता है, उसने मानो सहस्रों ब्रह्महत्याएँ कर डालीं। वह दो चतुर्युगीतक महाघोर कालसूत्रमें निवास करता है।

जो महापापी अयोनि (योनिसे भिन्न स्थान), वियोनि (विजातीय योनि) और पशुयोनिमें वीर्यत्याग करता है, वह यमलोकमें वीर्य ही भोजनके लिये पाता है। तत्पश्चात् चर्बीसे भरे हुए कुएँमें डाला जाकर वहाँ सात दिव्य वर्षोंतक केवल वीर्य भोजन करके रहता है। उसके बाद मनुष्य होकर सम्पूर्ण लोकोंमें निन्दाका पात्र बनता है। राजन्! जो उपवासके दिन दाँतुन करता है, वह चार युगोंतक व्याघ्रभक्ष नामक घोर नरकमें पड़ा रहता है; जिसमें व्याघ्र उसका मांस खाते हैं। जो अपने कर्मोंका परित्याग करनेवाला है, उसे विद्वान् पुरुष पाखण्डी कहते हैं। उसका साथ करनेवाला भी उसीके समान हो जाता है। वे दोनों अत्यन्त पापी हैं और सहस्रों कल्पोंतक क्रमशः नरक-यातनाएँ भोगते हैं। राजन्! जो देवता-सम्बन्धी द्रव्यका अपहरण करनेवाले और गुरुका धन चुरानेवाले हैं, वे ब्रह्महत्याके समान पापका फल भोगते हैं। जो अनाथका धन हड़प लेते और अनाथसे द्वेष करते हैं, वे कोटिकल्पसहस्रोंतक नरकमें निवास करते हैं। जो स्त्रियों और शूद्रोंके समीप वेदाध्ययन करते हैं, उनके पापका फल बतलाता हूँ, ध्यान देकर सुनो। उनका सिर नीचे करके पैर ऊपर कर दिया जाता है और दोनों पैरोंको दो खंभोंमें काँटेसे जड़ दिया जाता है। फिर वे ब्रह्माजीके एक वर्षतक प्रतिदिन धुआँ पीकर रहते हैं। जो जल और देवमन्दिरमें तथा उनके समीप अपने शारीरिक मलका त्याग करता है, वह भ्रूणहत्याके समान अत्यन्त भयानक पापको प्राप्त होता है। जो ब्राह्मणका धन तथा सुगन्धित काष्ठ चुराते हैं, वे चन्द्रमा और तारोंकी स्थितिपर्यन्त घोर नरकमें पड़े रहते हैं। राजन्! ब्राह्मणके धनका अपहरण इहलोक और परलोकमें भी दुःख देनेवाला है। इस लोकमें तो वह धनका नाश करता है और परलोकमें नरककी प्राप्ति कराता है।

जो झूठी गवाही देता है, उसके पापका फल सुनो। वह जबतक चौदह इन्द्रोंका राज्य समाप्त होता है, तबतक सम्पूर्ण यातनाओंको भोगता रहता है। इस लोकमें उसके पुत्र-पौत्र नष्ट हो जाते हैं और परलोकमें वह रौरव तथा अन्य नरकोंको क्रमशः भोगता है। जो मनुष्य अत्यन्त कामी और मिथ्यावादी हैं, उनके मुँहमें सर्पके समान जोकें भर दी जाती हैं। इस अवस्थामें उन्हें साठ हजार वर्षोंतक रहना पड़ता है। तत्पश्चात् उन्हें खारे पानीसे नहलाया जाता है। मनुजेश्वर! जो ऋतुकालमें अपनी स्त्रीसे सहवास नहीं करते, वे ब्रह्महत्याका फल पाते और घोर नरकमें जाते हैं। जो किसीको अत्याचार करते देखकर शक्ति होते हुए भी उसका निवारण नहीं करता, वह भी उस अत्याचारके पापका भागी होता है और वे दोनों नरकमें पड़ते हैं। जो लोग पापियोंके पापोंकी गिनती करके दूसरोंको बताते हैं, वे पाप सत्य होनेपर भी उनके पापके भागी होते हैं। राजन्! यदि वे पाप झूठे निकले तो कहनेवालेको दूने पापका भागी होना पड़ता है। जो पापहीन पुरुषमें पापका आरोप करके उसकी निन्दा करता है, वह चन्द्रमा और तारोंके स्थितिकालतक घोर नरकमें रहता है। जो व्रत लेकर उन्हें पूर्ण किये बिना ही त्याग देता है, वह असिपत्रवनमें पीड़ा भोगकर पृथ्वीपर किसी अङ्गसे हीन होकर जन्म

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लेता है। जो मनुष्य दूसरोंद्वारा किये जानेवाले व्रतोंमें विघ्न डालता है, वह मनुष्य अत्यन्त दुःखदायक और भयंकर श्लेष्म भोजन नामक नरकमें, जहाँ कफ भोजन करना पड़ता है, जाता है। जो न्याय करने तथा धर्मकी शिक्षा देनेमें पक्षपात करता है, वह दस हजार प्रायश्चित्त कर ले तो भी उस पापसे उसका उद्धार नहीं होता*। जो अपने कटुवचनोंसे ब्राह्मणोंका अपमान करता है, वह ब्रह्महत्याको प्राप्त होता है और सम्पूर्ण नरकोंकी यातनाएँ भोगकर दस जन्मोंतक चाण्डाल होता है। जो ब्राह्मणको कोई चीज देते समय विघ्न डालता है, उसे ब्रह्महत्याके समान प्रायश्चित्त करना चाहिये। जो दूसरेका धन चुराकर दूसरोंको दान देता है, वह चुरानेवाला तो नरकमें जाता है और जिसका धन होता है, उसीको उस दानका फल मिलता है। जो कुछ देनेकी प्रतिज्ञा करके नहीं देता है, वह लालाभक्ष नरकमें जाता है। राजन्! जो संन्यासीकी निन्दा करता है, वह शिलायन्त्र नामक नरकमें जाता है। बगीचा काटनेवाले लोग इक्कीस युगोंतक श्वभोजन नामक नरकमें रहते हैं, जहाँ कुत्ते उनका मांस नोचकर खाते हैं। फिर क्रमशः वह सभी नरकोंकी यातनाएँ भोगता है।

भूपते! जो देवमन्दिर तोड़ते, पोखरा नष्ट करते और फुलवारी उजाड़ देते हैं, वे जिस गतिको प्राप्त होते हैं, वह सुनो। वे इन सब यातनाओं (नरकों)-में पृथक्-पृथक् पकाये जाते हैं। अन्तमें इक्कीस कल्पोंतक वे विष्ठाके कीड़े होते हैं। राजन्! उसके बाद वे सौ बार चाण्डालकी योनिमें जन्म लेते हैं। जो जूठा खाते और मित्रोंसे द्रोह करते हैं, उन्हें चन्द्रमा और सूर्यके स्थितिकालतक भयंकर नरकयातनाएँ भोगनी पड़ती हैं। जो पितृयज्ञ और देवयज्ञका उच्छेद करते तथा वैदिक मार्गसे बाहर हो जाते हैं, वे पाखण्डीके नामसे प्रसिद्ध हैं। उन्हें सब प्रकारकी यातनाएँ भोगनी पड़ती हैं। राजा भगीरथ! इस प्रकार पापियोंके लिये अनेक प्रकारकी यातनाएँ हैं। प्रभो! मैं नरकों और उनकी यातनाओंकी गणना करनेमें असमर्थ हूँ। भूपते! पापों, यातनाओं तथा धर्मोंकी संख्या बतलानेके लिये संसारमें भगवान् विष्णुके सिवा दूसरा कौन समर्थ है? इन सब पापोंका धर्मशास्त्रकी विधिसे प्रायश्चित्त कर लेनेपर पापराशि नष्ट हो जाती है। धार्मिक कृत्योंमें जो न्यूनाधिकता रह जाती है, उसकी पूर्तिके लिये लक्ष्मीपति भगवान् विष्णुके समीप पूर्वोक्त पापोंके प्रायश्चित्त करने चाहिये। गङ्गा, तुलसी, सत्सङ्ग, हरिकीर्तन, किसीके दोष न देखना और हिंसासे दूर रहना—

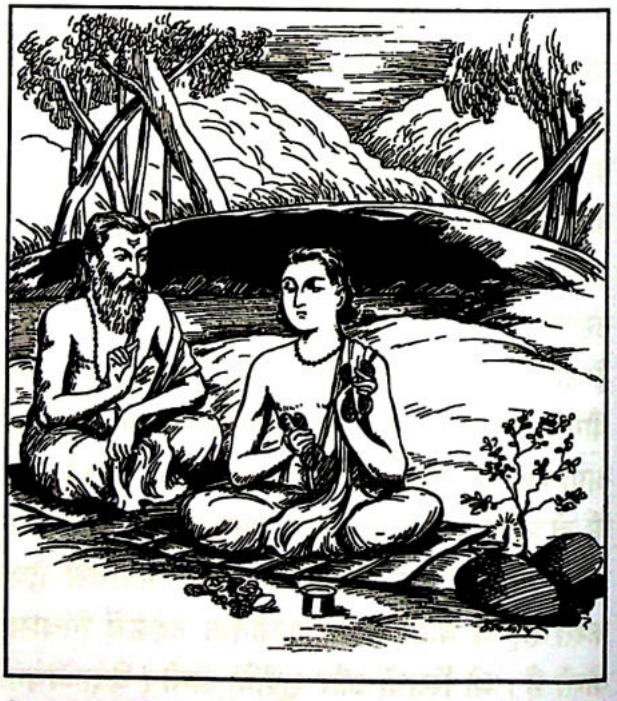

ये सब बातें पापोंका नाश करनेवाली होती हैं। भगवान् विष्णुको अर्पित किये हुए कर्म निश्चय ही सफल होते हैं। जो कर्म उन्हें अर्पित नहीं

* न्याये च धर्मशिक्षायां पक्षपातं करोति यः। न तस्य निष्कृतिर्भूयः प्रायश्चित्तायुतैरपि॥
(ना० पूर्व० १५। ११९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

किये जाते, वे राखमें डाली हुई आहुतिके समान व्यर्थ होते हैं। नित्य, नैमित्तिक, काम्य तथा जो मोक्षके साधनभूत कर्म हैं, वे सब भगवान् विष्णुके समर्पित होनेपर सात्त्विक और सफल होते हैं।

भगवान् विष्णुकी उत्तम भक्ति सब पापोंका नाश करनेवाली है। नृपश्रेष्ठ! सात्त्विक, राजस और तामस आदि भेदोंसे भक्ति दस[१] प्रकारकी जाननी चाहिये। वह पापरूपी वनको जलानेके लिये दावानलके समान है। राजन्! जो दूसरेका विनाश करनेके लिये भगवान् लक्ष्मीपतिका भजन किया जाता है, वह 'अधमा तामसी' भक्ति है; क्योंकि वह दुष्टभाव धारण करनेवाली है। जो मनमें कपटबुद्धि रखकर, जैसे व्यभिचारिणी स्त्री अपने पतिकी सेवा करती है, उस प्रकार जगदीश्वर भगवान् नारायणका पूजन करता है, उसकी वह 'मध्यमा तामसी' भक्ति है। पृथ्वीपाल! जो दूसरोंको भगवान्की आराधनामें तत्पर देखकर ईर्ष्यावश स्वयं भी भगवान् श्रीहरिकी पूजा करता है, उसकी वह क्रिया 'उत्तमा तामसी' भक्ति मानी गयी है। जो धन-धान्य आदिकी याचना करते हुए परम श्रद्धाके साथ श्रीहरिकी अर्चना करता है, वह पूजा 'अधमा राजसी' भक्ति मानी गयी है। जो सम्पूर्ण लोकोंमें विख्यात कीर्तिका उद्देश्य रखकर परम भक्तिभावसे भगवान्की आराधना करता है, उसकी वह क्रिया 'मध्यमा राजसी' भक्ति कही गयी है। पृथ्वीपते! जो सालोक्य और सारूप्य आदि पद प्राप्त करनेकी इच्छासे भगवान् विष्णुकी अर्चना करता है, उसके द्वारा की हुई वह पूजा 'उत्तमा राजसी' भक्ति कही गयी है। जो अपने किये हुए पापोंका नाश करनेके लिये पूर्ण श्रद्धाके साथ श्रीहरिकी पूजा करता है, उसकी की हुई वह पूजा 'अधमा सात्त्विकी' भक्ति मानी गयी है। 'यह भगवान् विष्णुको प्रिय है' ऐसा मानकर जो श्रद्धापूर्वक सेवा-शुश्रूषा करता है, उसकी वह सेवा 'मध्यमा सात्त्विकी' भक्ति है। राजन्! 'शास्त्रकी ऐसी ही आज्ञा है' यह मानकर जो दासकी भाँति भगवान् लक्ष्मीपतिकी पूजा-अर्चा करता है, उसकी वह भक्ति सब प्रकारकी भक्तियोंमें श्रेष्ठ 'उत्तमा सात्त्विकी' भक्ति मानी गयी है। जो भगवान् विष्णुकी थोड़ी-सी भी महिमा सुनकर परम संतुष्ट हो उनके ध्यानमें तन्मय हो जाता है, उसकी वह भक्ति 'उत्तमोत्तमा' मानी गयी है। 'मैं ही परम विष्णुरूप हूँ, मुझमें यह सम्पूर्ण जगत् स्थित है।' इस प्रकार जो सदा भगवान्से अपनेको अभिन्न देखता है, उसे उत्तमोत्तम भक्त समझना चाहिये[२]। यह दस प्रकारकी भक्ति संसार-बन्धनका नाश करनेवाली है। उसमें भी

१. पहले सात्त्विक, राजस और तामस—भेदसे भक्तिके तीन भेद हैं। फिर प्रत्येकके उत्तम, मध्यम और अधम—ये तीन भेद और होते हैं। इस प्रकार नौ भेद हुए। दसवीं 'उत्तमोत्तमा परा भक्ति' है।

२. यच्चान्यस्य विनाशार्थं भजनं श्रीपतेर्नृप। सा तामस्यधमा भक्तिः खलभावधरा यतः॥
योऽर्चयेत्कैतवधिया स्वैरिणी स्वपतिं यथा। नारायणं जगन्नाथं तामसी मध्यमा तु सा॥
देवपूजापरान् दृष्ट्वा मात्सर्याद् योऽर्चयेद्धरिम्। सा भक्तिः पृथ्वीपाल तामसी चोत्तमा स्मृता॥
धनधान्यादिकं यस्तु प्रार्थयन्नर्चयेद्धरिम्। श्रद्धया परया युक्तः सा राजस्यधमा स्मृता॥
यः सर्वलोकविख्यातकीर्तिमुद्दिश्य माधवम्। अर्चयेत्परया भक्त्या सा मध्या राजसी मता॥
सालोक्यादि पदं यस्तु समुद्दिश्यार्चयेद्धरिम्। सा राजस्युत्तमा भक्तिः कीर्तिता पृथिवीपते॥
यस्तु स्वकृतपापानां क्षयार्थं प्रार्चयेद्धरिम्। श्रद्धया परयोपेतः सा सात्त्विक्यधमा स्मृता॥
हरेरिदं प्रियमिति शुश्रूषां कुरुते तुयः। श्रद्धया संयुतो भूयः सात्त्विकी मध्यमा तु सा॥
विधिबुद्ध्यार्चयेद्यस्तु दासवच्छ्रीपतिं नृप। भक्तीनां प्रवरा सा तु उत्तमा सात्त्विकी स्मृता॥

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

सात्त्विकी भक्ति सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फल देनेवाली है। इसलिये भूपाल! सुनो—संसारको जीतनेकी इच्छावाले उपासकको अपने कर्मका त्याग न करते हुए भगवान् जनार्दनकी भक्ति करनी चाहिये। जो स्वधर्मका परित्याग करके भक्तिमात्रसे जीवन धारण करता है, उसपर भगवान् विष्णु संतुष्ट नहीं होते। वे तो धर्माचरणसे संतुष्ट होते हैं। सम्पूर्ण आगमोंमें आचारको प्रथम स्थान दिया गया है। आचारसे धर्म प्रकट होता है और धर्मके स्वामी साक्षात् भगवान् विष्णु हैं*। इसलिये स्वधर्मका विरोध न करते हुए श्रीहरिकी भक्ति करनी चाहिये। सदाचारशून्य मनुष्योंके धर्म भी सुख देनेवाले नहीं होते। स्वधर्मपालनके बिना की हुई भक्ति भी नहीं की हुईके समान कही गयी है। राजन्! तुमने जो कुछ पूछा था, वह सब मैंने कह दिया। अतः तुम अपने धर्ममें तत्पर रहकर सूक्ष्म-से-सूक्ष्म स्वरूपवाले जनार्दनभगवान् नारायणका पूजन करो। इससे तुम्हें सनातन सुखकी प्राप्ति होगी। भगवान् शिव ही साक्षात् श्रीहरि हैं और श्रीहरि ही स्वयं शिव हैं। इन दोनोंमें भेद देखनेवाला दुष्ट पुरुष करोड़ों नरकोंमें जाता है। इसलिये भगवान् विष्णु और शिवको समान समझकर उनकी आराधना करो। इनमें भेददृष्टि करनेवाला मनुष्य इहलोक और परलोकमें भी दुःख पाता है।

जनेश्वर! मैं जिस कार्यके लिये तुम्हारे पास आया था, वह तुम्हें बतलाता हूँ। सुमते! सावधान होकर सुनो। राजन्! आत्मघातका पाप करनेवाले तुम्हारे पितामहगण महात्मा कपिलके क्रोधसे दग्ध हो गये हैं और इस समय वे नरकमें निवास करते हैं। महाभाग! गङ्गाजीको लानेका पराक्रम करके तुम उनका उद्धार करो। भूपते! गङ्गाजी निश्चय ही सब पापोंका नाश कर देती हैं। नृपश्रेष्ठ! मनुष्यके केश, हड्डी, नख, दाँत तथा शरीरकी भस्म भी यदि गङ्गाजीके शरीरसे छू जायँ तो वे भगवान् विष्णुके धाममें पहुँचा देती हैं। राजन्! जिसकी हड्डी अथवा भस्मको मनुष्य गङ्गाजीमें डाल देते हैं, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् श्रीहरिके धाममें चला जाता है। भूपते! अबतक जितने भी पाप तुम्हें बताये गये हैं, वे सब गङ्गाजीके एक बिन्दुका अभिषेक होनेसे नष्ट हो जाते हैं।

श्रीसनकजी कहते हैं—मुनिश्रेष्ठ नारद! धर्मात्मा महाराज भगीरथसे ऐसा कहकर धर्मराज तत्काल अन्तर्धान हो गये। तब सब शास्त्रोंके पारगामी महाबुद्धिमान् राजा भगीरथ सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य मन्त्रियोंको सौंपकर स्वयं वनको चले गये। वहाँसे हिमालयपर जाकर नर-नारायणके आश्रमसे पश्चिमकी तरफ बर्फसे ढके हुए एक शिखरपर, जो सोलह योजन विस्तृत है, उन्होंने तपस्या की और त्रिभुवनपावनी गङ्गाको वे इस भूतलपर ले आये।

महिमानं हरेर्यस्तु किंचिच्छ्रुत्वापि यो नरः। तन्मयत्वेन संतुष्टः सा भक्तिरुत्तमोत्तमा॥
अहमेव परो विष्णुर्मयि सर्वमिदं जगत्। इति यः सततं पश्येत्तं विद्यादुत्तमोत्तमम्॥
(ना० पूर्व० १५। १४०—१५०)

* सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते। आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः॥
(ना० पूर्व० १५। १५४)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

राजा भगीरथका भृगुजीके आश्रमपर जाकर सत्सङ्ग-लाभ करना तथा हिमालयपर घोर तपस्या करके भगवान् विष्णु और शिवकी कृपासे गङ्गाजीको लाकर पितरोंका उद्धार करना

नारदजीने पूछा—मुने! हिमालय पर्वतपर जाकर राजा भगीरथने क्या किया? वे गङ्गाजीको किस प्रकार ले आये? यह मुझे बतानेकी कृपा करें।

श्रीसनकजीने कहा—मुने! महाराज भगीरथ जटा और चीर धारण करके तपस्याके लिये हिमालयपर जाते हुए गोदावरी नदीके तटपर पहुँचे*। वहाँ उन्होंने महान् वनमें महर्षि भृगुका उत्तम आश्रम देखा, जो कृष्णसार मृगोंसे भरा हुआ था और चमरी गायोंका समुदाय अपनी पूँछ हिलाकर मानो उस आश्रमको चँवर डुला रहा था। मालती, जूही, कुन्द, चम्पा और अश्वत्थ—उस आश्रमको विभूषित कर रहे थे। वहाँ चारों ओर भाँति-भाँतिके फूल खिले हुए थे। ऋषि-मुनियोंका समुदाय वहाँ निवास करता था। वेदों और शास्त्रोंका महान् घोष आकाशमें गूँज रहा था। महर्षि भृगुके ऐसे आश्रममें राजा भगीरथने प्रवेश किया। भृगुजी परब्रह्मके स्वरूपका प्रतिपादन कर रहे थे। शिष्योंकी मण्डली उन्हें घेरकर बैठी थी। तेजमें वे भगवान् सूर्यके समान थे। राजा भगीरथने वहाँ उनका दर्शन किया और उनके चरण-ग्रहण आदि विधिसे उन ब्राह्मणशिरोमणिकी वन्दना की; साथ ही भृगुजीने भी सम्मानपूर्वक राजाका आतिथ्य-सत्कार किया। महर्षि भृगुके द्वारा आतिथ्य-सत्कार हो जानेपर राजा भगीरथ उन मुनीश्वरसे हाथ जोड़कर विनयपूर्वक बोले।

भगीरथने कहा—भगवन्! आप सब धर्मोंके ज्ञाता तथा सम्पूर्ण शास्त्रोंके विद्वान् हैं। मैं संसार-बन्धनके भयसे डरकर आपसे मनुष्योंके उद्धारका उपाय पूछता हूँ। सर्वज्ञ मुनिसत्तम! यदि मैं आपका कृपापात्र होऊँ तो जिस कर्मसे भगवान् संतुष्ट होते हैं, वह मुझे बताइये।

भृगुने कहा—राजन्! तुम्हारी अभिलाषा क्या है, यह मुझे मालूम हो गयी। तुम पुण्यात्माओंमें श्रेष्ठ हो। अन्यथा अपने समस्त कुलका उद्धार करनेकी योग्यता तुममें कैसे आती? भूपाल! जो कोई भी क्यों न हो, यदि वह शुभ कर्मके द्वारा अपने कुलके उद्धारकी इच्छा रखता है तो उसे नररूपमें साक्षात् नारायण ही समझना चाहिये। राजेन्द्र! जिस कर्मसे प्रसन्न होकर देवेश्वर भगवान् विष्णु मनुष्योंको अभीष्ट फल प्रदान करते हैं, वह

* इस प्रसंगको देखनेसे यह जान पड़ता है कि उन दिनों राजा भगीरथ दक्षिण भारतमें गोदावरीसे भी कुछ दूर दक्षिणके किसी स्थानमें रहा करते थे। तभी उनके मार्गमें गोदावरी नदी आ सकी। सूर्यवंशियोंकी सुप्रसिद्ध राजधानी अयोध्यासे हिमालय जानेमें तो गोदावरीका मार्गमें आना सम्भव नहीं है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

बतलाता हूँ, एकाग्रचित्त होकर सुनो। राजन्! तुम सदा सत्यका पालन करो और अहिंसाधर्ममें स्थित रहो। सदा सम्पूर्ण प्राणियोंके हितमें लगे रहकर कभी भी झूठ न बोलो। दुष्टोंका साथ छोड़ दो। सत्सङ्गका सेवन करो। पुण्य करो और दिन-रात सनातन भगवान् विष्णुका स्मरण करते रहो। भगवान् महाविष्णुकी पूजा करो और उत्तम शान्तिका आश्रय लो। द्वादशाक्षर अथवा अष्टाक्षर-मन्त्र जपो। इससे तुम्हारा कल्याण होगा।

भगीरथने पूछा—मुने? सत्य कैसा कहा गया है? सम्पूर्ण भूतोंका हित क्या है? अनृत (झूठ) किसे कहते हैं? दुष्ट कैसे होते हैं? कैसे लोगोंको साधु कहा गया है? तथा पुण्य कैसा होता है? भगवान् विष्णुका स्मरण कैसे करना चाहिये और उनकी पूजा कैसे होती है? मुने! शान्ति किसे कहा गया है? अष्टाक्षर-मन्त्र क्या है? तत्त्वार्थके ज्ञाता महर्षे! द्वादशाक्षर-मन्त्र क्या होता है? मुझपर बड़ी भारी कृपा करके इन सबकी व्याख्या करें।

भृगुने कहा—महाप्राज्ञ! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। तुम्हारी बुद्धि बहुत उत्तम है। भूपाल! तुमने मुझसे जो कुछ पूछा है, वह सब तुम्हें बतलाता हूँ। विद्वान् पुरुष यथार्थ कथनको 'सत्य' कहते हैं। धर्मपरायण मनुष्योंको इस प्रकार सत्य बोलना चाहिये कि धर्मका विरोध न होने पाये। इसलिये साधु पुरुष देश, काल आदिका विचार करके स्वधर्मका विरोध न करते हुए जो यथार्थ वचन बोलते हैं, वह 'सत्य' कहलाता है। राजन्! सम्पूर्ण जीवोंमेंसे किसीको भी जो क्लेश न देना है, उसीका नाम 'अहिंसा' है। वह सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाली बतायी गयी है। धर्मके कार्यमें सहायता पहुँचाना और अधर्मके कार्यका विरोध करना—इसे धर्मज्ञ पुरुष सम्पूर्ण लोकोंका हितसाधन कहते हैं। धर्म और अधर्मका विचार न करके केवल अपनी इच्छाके अनुसार कहना असत्य है। उसे सब प्रकारके कल्याणका विरोधी समझना चाहिये। राजन्! जिनकी बुद्धि सदा कुमार्गमें लगी रहती है, जो सब लोगोंसे द्वेष रखनेवाले और मूर्ख हैं, उन्हें सम्पूर्ण धर्मोंसे बहिष्कृत दुष्ट पुरुष जानना चाहिये। जो लोग धर्म और अधर्मका विवेक करके वेदोक्त मार्गपर चलते हैं तथा सब लोगोंके हितमें संलग्न रहते हैं, उन्हें 'साधु' कहा गया है*। जो भगवान्की भक्तिमें सहायक है, साधु पुरुष जिसका पालन करते हैं तथा जो अपने लिये भी आनन्ददायक है, उसे 'धर्म' कहते हैं। यह सम्पूर्ण जगत् भगवान् विष्णुका स्वरूप है, विष्णु सबके कारण हैं और मैं भी विष्णु हूँ—यह जो ज्ञान है, उसीको 'भगवान् विष्णुका स्मरण' समझना चाहिये। भगवान् विष्णु सर्वदेवमय हैं, मैं विधिपूर्वक उनकी पूजा करूँगा; इस प्रकारसे जो श्रद्धा होती है, वह उनकी 'भक्ति' कही गयी है। श्रीविष्णु सर्वभूतस्वरूप हैं, सर्वत्र परिपूर्ण सनातन परमेश्वर हैं; इस प्रकार जो भगवान्के प्रति अभेद बुद्धि होती है, उसीका नाम 'समता' है। राजन् ! शत्रु और मित्रोंके प्रति समान भाव हो, सम्पूर्ण इन्द्रियाँ अपने वशमें हों और दैववश जो कुछ मिल जाय, उसीमें संतोष रहे तो इस स्थितिको 'शान्ति' कहते हैं। राजन्! इस प्रकार तुम्हारे इन सभी प्रश्नोंकी व्याख्या हो गयी। ये सब विषय मनुष्योंको सिद्धि प्रदान करनेवाले हैं और समस्त पापराशियोंका वेगपूर्वक नाश करनेके साधन हैं।

अष्टाक्षर-मन्त्र सब पापोंका नाश करनेवाला है। राजेन्द्र! मैं उसका स्वरूप तुम्हें बतलाता हूँ।

* धर्माधर्मविवेकेन वेदमार्गानुसारिणः॥ सर्वलोकहितासक्ताः साधवः परिकीर्तिताः।
(ना० पूर्व० १६।२९-३०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वह समस्त पुरुषार्थोंका एकमात्र साधन, भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला तथा सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाला है। **'ॐ नमो नारायणाय'** यही अष्टाक्षर-मन्त्र है। इसका जप करना चाहिये। महाराज! **'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'** यह द्वादशाक्षर-मन्त्र कहा गया है। राजन्! इन अष्टाक्षर और द्वादशाक्षर—दोनों मन्त्रोंका समान फल है। इनकी प्रवृत्ति और निवृत्ति—इन दोनों मार्गवालोंके लिये समता बतायी गयी है। इन दोनों मन्त्रोंके जपके लिये भगवान्‌का ध्यान इस प्रकार करना चाहिये। भगवान् नारायण अपने हाथोंमें शङ्ख और चक्र धारण किये शान्तभावसे विराजमान हैं। रोग और शोक उनका कभी स्पर्श नहीं करते। उनके वामाङ्कमें लक्ष्मीजी विराज रही हैं। वे सर्वशक्तिमान् प्रभु सबको अभयदान कर रहे हैं। उनके मस्तकपर किरीट और कानोंमें कुण्डल शोभा पाते हैं। वे नाना प्रकारके अलंकारोंसे सुशोभित हैं। गलेमें कौस्तुभमणि और वनमाला धारण किये हुए हैं। उनका वक्षःस्थल श्रीवत्सचिह्नसे चिह्नित है। वे पीताम्बरधारी भगवान् देवताओं और दानवोंसे भी वन्दित हैं। उनका आदि और अन्त नहीं है। वे सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फलोंके देनेवाले हैं। इस प्रकार भगवान्‌का ध्यान करना चाहिये। वे अन्तर्यामी, ज्ञानस्वरूप, सर्वव्यापी तथा सनातन हैं। राजा भगीरथ! तुमने जो कुछ पूछा, वह सब इस रूपमें बताया गया है। तुम्हारा कल्याण हो। अब सुखपूर्वक तपस्यामें सिद्धि प्राप्त करनेके लिये जाओ।

महर्षि भृगुके ऐसा कहनेपर राजा भगीरथ बहुत प्रसन्न हुए और तपस्याके लिये वनमें गये। हिमालय पर्वतपर पहुँचकर वहाँके मनोहर पावन प्रदेशमें स्थित नादेश्वर महाक्षेत्रमें उन्होंने अत्यन्त दुष्कर तपस्या की। राजा तीनों काल स्नान करते। कन्द, मूल तथा फल खाकर रहते और उसीसे आये हुए अतिथियोंका सत्कार भी करते थे। वे प्रतिदिन होममें तत्पर रहते। सम्पूर्ण भूतोंके हितैषी होकर शान्तभावसे स्थित थे। उन्होंने भगवान् नारायणकी शरण ले रखी थी। पत्र, पुष्प, फल और जलसे वे तीनों काल श्रीहरिकी आराधना करते थे। इस प्रकार अत्यन्त धैर्यपूर्वक भगवान् नारायणका ध्यान करते हुए वे सूखे पत्ते खाकर रहने लगे। तदनन्तर परम धर्मात्मा राजा भगीरथने प्राणायाम करते हुए श्वास बंद करके तपस्या करना प्रारम्भ किया। जिनका कहीं अन्त नहीं है या जो किसीसे पराजित नहीं होते, उन्हीं श्रीनारायणदेवका चिन्तन करते हुए वे साठ हजार वर्षोंतक श्वास रोके रहे। उस समय राजाकी नासिकाके छिद्रसे भयंकर अग्नि प्रकट हुई। उसे देखकर सब देवता थर्रा उठे और उस अग्निसे संतप्त होने लगे। फिर वे देवेश्वरगण क्षीरसागरके उत्तर तटपर जहाँ जगदीश्वर श्रीहरि निवास करते हैं, पहुँचकर भगवान् महाविष्णुकी शरणमें गये और शरणागतोंकी रक्षा करनेवाले देवदेवेश्वर भगवान्‌की इस प्रकार स्तुति करने लगे।

देवताओंने कहा—जो जगत्‌के एकमात्र स्वामी तथा स्मरण करनेवाले भक्तजनोंकी समस्त पीड़ा दूर कर देनेवाले हैं, उन परमेश्वर श्रीविष्णुको हम नमस्कार करते हैं। ज्ञानी पुरुष उन्हें स्वभावतः शुद्ध, सर्वत्र परिपूर्ण एवं ज्ञानस्वरूप कहते हैं। श्रेष्ठ योगीजन जिनका सदा ध्यान करते हैं, जो परमात्मा अपनी इच्छाके अनुसार शरीर धारण करके देवताओंका कार्य सिद्ध करते हैं, यह सम्पूर्ण जगत् जिनका स्वरूप है तथा जो जगत्‌के आदिस्वामी हैं, उन भगवान् पुरुषोत्तमको हम प्रणाम करते हैं। जिनके नामोंका संकीर्तन करनेमात्रसे दुष्ट पुरुषोंके भी समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं; जो सबके शासक, स्तवन करने योग्य एवं पुराणपुरुष हैं, उन भगवान् विष्णुको हम पुरुषार्थसिद्धिके

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लिये नमस्कार करते हैं। सूर्य आदि जिनके तेजसे प्रकाशित होते हैं और कभी भी जिनकी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं करते, जो सम्पूर्ण देवताओंके अधीश्वर तथा पुरुषार्थरूप हैं, उन कालस्वरूप श्रीहरिको हम नमस्कार करते हैं। जिनकी आज्ञाके अनुसार ब्रह्माजी इस जगत्की सृष्टि करते हैं, रुद्र संहार करते हैं और ब्राह्मणलोग श्रुतियोंके द्वारा सब लोगोंको पवित्र करते हैं, जो गुणोंके भण्डार और सबके उपदेशक गुरु हैं, उन आदिदेव भगवान् विष्णुकी हम शरणमें आये हैं। जो सबसे श्रेष्ठ, वरण करने योग्य तथा मधु और कैटभको मारनेवाले हैं, देवता और दैत्य भी जिनकी चरणपादुकाका पूजन करते हैं, जो श्रेष्ठ भक्तोंकी मनोवाञ्छित कामनाओंकी सिद्धिके कारण हैं तथा एकमात्र ज्ञानद्वारा जिनके तत्त्वका बोध होता है, उन दिव्यशक्तिसम्पन्न भगवान्को हम प्रणाम करते हैं। जो आदि, मध्य और अन्तसे रहित, अजन्मा, अनादि, अविद्या नामक अन्धकारका नाश करनेवाले, सत्, चित्, परमानन्दघन स्वरूप तथा रूप आदिसे रहित हैं, उन भगवान् परमेश्वरको हम प्रणाम करते हैं। जो जलमें शयन करनेके कारण नारायण, सर्वव्यापी होनेसे विष्णु, अविनाशी होनेसे अनन्त और सबके शासक होनेसे ईश्वर कहलाते हैं, अपने श्रीअङ्गोंपर रेशमी पीताम्बर धारण करते हैं, ब्रह्मा तथा रुद्र आदि जिनकी सेवामें लगे रहते हैं, जो यज्ञके प्रेमी, यज्ञ करनेवाले, विशुद्ध, सर्वोत्तम एवं अव्यय हैं, उन भगवान् विष्णुको हम नमस्कार करते हैं।

इन्द्र आदि देवताओंके इस प्रकार स्तुति करनेपर भगवान् महाविष्णुने देवताओंको राजर्षि भगीरथका चरित्र बतलाया। नारदजी! फिर उन सबको आश्वासन तथा अभय देकर निरञ्जन भगवान् विष्णु उस स्थानपर गये, जहाँ राजर्षि भगीरथ तपस्या करते थे। सम्पूर्ण जगत्के गुरु शङ्ख-चक्रधारी सच्चिदानन्दस्वरूप भगवान् श्रीहरिने राजा भगीरथको प्रत्यक्ष दर्शन दिया। राजाने देखा, सामने कमलनयन भगवान् विराजमान हैं। उनकी प्रभासे सम्पूर्ण दिग्दिगन्त उद्भासित हो रहा है। उनके अङ्गोंकी कान्ति अलसीके फूलकी भाँति श्याम है। कानोंमें झलमलाते हुए कुण्डल उनकी शोभा बढ़ा रहे हैं। चिकने घुँघराले केशोंवाले मुखारविन्दसे सुशोभित हैं। मस्तकपर जगमगाता हुआ मुकुट उनके स्वरूपको और भी प्रकाशपूर्ण किये देता है। वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न और कौस्तुभमणि है। वे वनमालासे विभूषित हैं। उनकी भुजाएँ बड़ी-बड़ी हैं। अङ्ग-अङ्गसे उदारता टपक रही है। उनके चरणारविन्द लोकेश ब्रह्माजीके द्वारा पूजित हैं। भगवान्की यह झाँकी देखकर राजा भगीरथ भूतलपर दण्डकी भाँति पड़ गये। उनका कंधा झुक गया और वे बार-बार प्रणाम करने लगे। उनका हृदय अत्यन्त हर्षसे भरा हुआ था। शरीरमें रोमाञ्च हो आया था और वे गद्गद कण्ठसे 'कृष्ण, कृष्ण, कृष्ण, श्रीकृष्ण'—इस प्रकार उच्चारण कर रहे थे। अन्तर्यामी जगद्गुरु भगवान् विष्णु भगीरथपर प्रसन्न थे। उन भूतभावन भगवान्ने करुणासे भरकर कहा।

श्रीभगवान् बोले—महाभाग भगीरथ! तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध होगा, तुम्हारे पूर्व पितामह मेरे लोकमें जायँगे। राजन्! भगवान् शिव मेरे दूसरे स्वरूप हैं। तुम यथाशक्ति स्तुति-पाठ करके उनका स्तवन करो। वे तुम्हारा सम्पूर्ण मनोरथ तत्काल सिद्ध करेंगे। जिन्होंने अपनी शरणमें आये हुए चन्द्रमाको स्वीकार किया है, वे बड़े शरणागतवत्सल हैं। अतः स्तोत्रोंद्वारा स्तवन करने योग्य उन सुखदाता ईशानकी तुम आराधना करो। अनादि अनन्तदेव महेश्वर सम्पूर्ण कामनाओं तथा फलोंके दाता हैं। राजन्! तुमसे भलीभाँति पूजित

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होकर वे शीघ्र तुम्हारा कल्याण करेंगे।

मुनिश्रेष्ठ नारद! तीनों लोकोंके स्वामी देवदेवेश्वर भगवान् अच्युत ऐसा कहकर अन्तर्धान हो गये। फिर वे राजा भगीरथ भी उठे। द्विजश्रेष्ठ! राजाके मनमें बड़ा आश्चर्य हुआ। वे सोचने लगे—क्या यह सब स्वप्न था अथवा साक्षात् सत्यका ही दर्शन हुआ है। अब मैं क्या करूँ? इस प्रकार भ्रान्तचित्त हुए राजा भगीरथसे आकाशवाणीने उच्च स्वरसे कहा—'राजन्! यह सब अवश्य ही सत्य है। तुम चिन्ता न करो।' आकाशवाणी सुनकर भूपाल भगीरथने हम सबके कारण तथा समस्त देवताओंके स्वामी भगवान् शिवका भक्तिपूर्वक स्तवन किया।

भगीरथने कहा—मैं प्रणतजनोंकी पीड़ाका नाश करनेवाले विश्वनाथ शिवको प्रणाम करता हूँ। जो प्रमाणसे परे तथा प्रमाणरूप हैं, उन भगवान् ईशानको मैं नमस्कार करता हूँ। जो जगत्स्वरूप होते हुए भी नित्य और अजन्मा हैं, संसारकी सृष्टि, संहार और पालनके एकमात्र कारण हैं, उन भगवान् शिवको मैं प्रणाम करता हूँ। योगीश्वर, महात्मा जिनका आदि, मध्य और अन्तसे रहित अनन्त, अजन्मा एवं अव्ययरूपसे चिन्तन करते हैं, उन पुष्टिवर्धक शिवको मैं प्रणाम करता हूँ। पशुपति भगवान् शिवको नमस्कार है। चैतन्यस्वरूप भगवान् शंकरको नमस्कार है। असमर्थोंको सामर्थ्य देनेवाले शिवको नमस्कार है। समस्त प्राणियोंके पालक भगवान् भूतनाथको नमस्कार है। प्रभो! आप हाथमें पिनाक धारण करते हैं। आपको नमस्कार है। त्रिशूलसे शोभित हाथवाले आपको नमस्कार है। सम्पूर्ण भूत आपके स्वरूप हैं, आपको नमस्कार है। जगत्के अनेक रूप आपके ही रूप हैं। आप निर्गुण परमात्माको नमस्कार है। ध्यानस्वरूप आपको नमस्कार है। ध्यानके साक्षी आपको नमस्कार है। ध्यानमें सम्यक् रूपसे स्थित आपको नमस्कार है तथा ध्यानसे ही अनुभवमें आनेवाले आपको नमस्कार है। जो अपने ही प्रकाशसे प्रकाशित होनेवाले, महात्मा, परमज्योतिःस्वरूप तथा सनातन हैं, तत्त्वज्ञ पुरुष जिन्हें मानवनेत्रोंको प्रकाश देनेवाले सूर्य कहते हैं, जो उमाकान्त, नन्दिकेश्वर, नीलकण्ठ, सदाशिव, मृत्युञ्जय, महादेव, परात्पर एवं विभु कहे जाते हैं, परब्रह्म और शब्दब्रह्म जिनके स्वरूप हैं, उन समस्त जगत्के कारणभूत परमात्माको मैं प्रणाम करता हूँ। प्रभो! आप जटाजूट धारण करनेवाले हैं, आपको नमस्कार है। जिनसे समुद्र, नदियाँ, पर्वत, गन्धर्व, यक्ष, असुर, सिद्ध-समुदाय, स्थावर-जङ्गम, बड़े-छोटे, सत्-असत् तथा जड और चेतन—सबका प्रादुर्भाव हुआ है, योगी पुरुष जिनके चरणारविन्दोंमें नमस्कार करते हैं, जो सबके अन्तरात्मा, रूपहीन एवं ईश्वर हैं, उन स्वतन्त्र एक तथा गुणियोंके गुणस्वरूप भगवान् शिवको मैं बार-बार प्रणाम करता हूँ, बार-बार मस्तक झुकाता हूँ।

सब लोगोंका कल्याण करनेवाले महादेव भगवान् शंकर इस प्रकार अपनी स्तुति सुनकर, जिनकी तपस्या पूर्ण हो चुकी है, उन राजा भगीरथके आगे प्रकट हुए। उनके पाँच मुख और दस भुजाएँ हैं। उन्होंने अर्धचन्द्रका मुकुट धारण कर रखा है। उनके तीन नेत्र हैं। एक-एक अङ्गसे उदारता टपकती है। उन्होंने सर्पका यज्ञोपवीत पहन रखा है। उनका वक्षःस्थल विशाल तथा कान्ति हिमालयके समान उज्ज्वल है। गजचर्मका वस्त्र पहने हुए उन भगवान् शिवके चरणारविन्द समस्त देवताओंद्वारा पूजित हो रहे हैं। नारदजी! भगवान् शिवको इस रूपमें उपस्थित देख राजा भगीरथ उनके चरणोंके आगे दण्डकी भाँति पृथ्वीपर गिर पड़े। फिर सहसा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उठकर उन्होंने भगवान्‌के सम्मुख हाथ जोड़े और उनके महादेव तथा शंकर आदि नामोंका कीर्तन करते हुए प्रणाम किया। राजाकी भक्ति जानकर चन्द्रशेखर भगवान् शिव उनसे बोले—'राजन्! मैं बहुत प्रसन्न हूँ। तुम इच्छानुसार वर माँगो। तुमने स्तोत्र और तपस्याद्वारा मुझे भलीभाँति संतुष्ट किया है।' भगवान् शिवके ऐसा कहनेपर राजाका हृदय प्रसन्नतासे खिल उठा और वे हाथ जोड़कर जगदीश्वर शिवसे इस प्रकार बोले।

भगीरथने कहा—महेश्वर! यदि मैं वरदान देकर अनुगृहीत करने योग्य होऊँ तो हमारे पितरोंकी मुक्तिके लिये आप हमें गङ्गा प्रदान करें।

भगवान् शिव बोले—राजन्! मैंने तुम्हें गङ्गा दे दी। इससे तुम्हारे पितरोंको उत्तम गति प्राप्त होगी और तुम्हें भी परम मोक्ष मिलेगा।

यों कहकर भगवान् शिव अन्तर्धान हो गये। तत्पश्चात् जटाजूटधारी भगवान् शिवकी जटासे नीचे आकर जगत्‌को एकमात्र पावन करनेवाली गङ्गा समस्त जगत्‌को पवित्र करती हुई राजा भगीरथके पीछे-पीछे चलीं। मुने! तबसे परम निर्मल पापहारिणी गङ्गादेवी तीनों लोकोंमें 'भागीरथी' के नामसे विख्यात हुईं। सगरके पुत्र पूर्वकालमें अपने ही पापके कारण जहाँ दग्ध हुए थे, उस स्थानको भी सरिताओंमें श्रेष्ठ गङ्गाने अपने जलसे प्लावित कर दिया। सगर-पुत्रोंकी भस्म ज्यों ही गङ्गाजलसे प्रवाहित हुई, त्यों ही वे निष्पाप हो गये। पहले जो नरकमें डूबे हुए थे, उनका गङ्गाने उद्धार कर दिया। पूर्वकालमें यमराजने अत्यन्त कुपित होकर जिन्हें बड़ी भारी पीड़ा दी थी, वे ही गङ्गाजीके जलसे (उनके शरीरकी भस्म) आप्लावित होनेके कारण उन्हीं यमराजके द्वारा पूजित हुए। सगर-पुत्रोंको निष्पाप समझकर यमराजने उन्हें प्रणाम किया और विधिपूर्वक उनकी पूजा करके प्रसन्नतापूर्वक कहा—'राजकुमारो! आपलोग अत्यन्त भयंकर नरकसे उद्धार पा गये। अब इस विमानपर बैठकर भगवान् विष्णुके धाममें जाइये।' यमराजके ऐसा कहनेपर वे पापरहित महात्मा दिव्य देह धारण करके भगवान् विष्णुके लोकमें चले गये। भगवान् विष्णुके चरणोंके अग्रभागसे प्रकट हुई गङ्गाजीका ऐसा प्रभाव है। महापातकोंका नाश करनेवाली गङ्गा सम्पूर्ण लोकोंमें विख्यात हैं। यह पवित्र आख्यान महापातकोंका नाश करनेवाला है। जो इसे पढ़ता अथवा सुनता है, वह गङ्गास्नानका फल पाता है। जो इस पवित्र आख्यानको ब्राह्मणके सम्मुख कहता है, वह भगवान् विष्णुके पुनरावृत्तिरहित धाममें जाता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मार्गशीर्ष माससे लेकर कार्तिक मासपर्यन्त उद्यापनसहित शुक्लपक्षके द्वादशीव्रतका वर्णन

ऋषि बोले—महाभाग सूतजी! आपको साधुवाद है। आपका हृदय अत्यन्त दयालु है। आपने कृपा करके सब पापोंका नाश करनेवाला उत्तम गङ्गा-माहात्म्य हमें सुनाया है। यह गङ्गा-माहात्म्य सुनकर देवर्षि नारदजीने मुनिश्रेष्ठ सनकजीसे कौन-सा प्रश्न किया? यह बताइये।

सूतजीने कहा—आप सब ऋषि सुनें। देवर्षि नारदने फिर जिस प्रकार प्रश्न किया था, वह बतलाऊँगा।

नारदजी बोले—मुने! आप भगवान् विष्णुके उन व्रतोंका वर्णन कीजिये, जिनका अनुष्ठान करनेसे भगवान् प्रसन्न होते हैं। जो भगवत्-सम्बन्धी व्रत, पूजन और ध्यानमें तत्पर हो भगवान्‌का भजन करते हैं, उनको भगवान् विष्णु मुक्ति तो अनायास ही दे देते हैं, पर वे जल्दी किसीको भक्तियोग नहीं देते। मुनिश्रेष्ठ! आप भगवान् विष्णुके भक्त हैं। प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्तिमार्ग-सम्बन्धी जो कर्म भगवान् श्रीहरिको प्रसन्न करनेवाला हो, उसका मुझसे वर्णन कीजिये।

श्रीसनकजीने कहा—मुनिश्रेष्ठ! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। तुम भगवान् पुरुषोत्तमके भक्त हो, इसीलिये बार-बार उन शार्ङ्गधन्वा—श्रीहरिका चरित्र पूछते हो। मैं तुम्हें उन लोकोपकारी व्रतोंका उपदेश करता हूँ, जिनसे भगवान् श्रीहरि प्रसन्न होते हैं और साधकको अभय-दान देते हैं। जिस पुरुषपर यज्ञस्वरूप भगवान् जनार्दनकी प्रसन्नता हो जाती है, उसे इहलोक और परलोकमें सुख मिलता है तथा उसके तपकी वृद्धि होती है। महर्षिगण कहते हैं कि जिस किसी उपायद्वारा भी जो लोग भगवान् विष्णुकी आराधनामें लगे रहते हैं, वे परम पदको प्राप्त होते हैं। मार्गशीर्ष मासमें शुक्लपक्षकी द्वादशीको उपवास करके मनुष्य श्रद्धापूर्वक जलशायी भगवान् नारायणकी पूजा करे। मुनिश्रेष्ठ! पहले दन्तधावन करके स्नान करे, फिर श्वेतवस्त्र धारण करके मौन हो गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप और नैवेद्य आदि उपचारोंद्वारा भक्ति-भावसे श्रीहरिका पूजन करना चाहिये। **'केशवाय नमस्तुभ्यम्'** (केशव! आपको नमस्कार है।)—इस मन्त्रद्वारा श्रीविष्णुकी पूजा करनी चाहिये। उसी मन्त्रसे प्रज्वलित अग्निमें घृतमिश्रित तिलकी एक सौ आठ आहुति देकर भगवान् शालग्रामके समीप रातमें जागरण करे। उस रात्रिमें ही सेरभर दूधसे रोग-शोकरहित भगवान् श्रीनारायणको स्नान करावे और गीत-वाद्य, नैवेद्य, भक्ष्य तथा भोज्य पदार्थोंद्वारा महालक्ष्मीसहित उन भगवान् नारायणका भक्तिपूर्वक तीन समय पूजन करे। फिर सबेरे उठकर यथावश्यक शौच-स्नानादि कर्म करके पूर्ववत् मन-इन्द्रियोंको संयममें रखते हुए मौनभावसे पवित्रतापूर्वक भगवान्‌की पूजा करे। उसके बाद निम्नाङ्कित मन्त्रसे दक्षिणासहित घृतमिश्रित खीर और नारियलका फल भक्तिपूर्वक ब्राह्मणको अर्पित करे—

केशवः केशिहा देवः सर्वसम्पत्प्रदायकः॥
परमान्नप्रदानेन मम स्यादिष्टदायकः।

(ना० पूर्व० १७। २१-२२)

'जिन्होंने केशी दैत्यको मारा है तथा जो सब प्रकारकी सम्पत्ति देनेवाले हैं, वे भगवान् केशव यह उत्तम अन्न दान करनेसे मेरे लिये अभीष्ट वस्तुको देनेवाले हों।'

तदनन्तर अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणभोजन करावे। उसके बाद भगवान् नारायणका चिन्तन करते हुए मौन होकर स्वयं भी भाई-बन्धुओंसहित

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

भोजन करे। इस प्रकार जो भक्ति-भावसे भगवान् केशवकी उत्तम पूजा करता है, वह आठ पौण्डरीक यज्ञके समान फल पाता है। पौष मासके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको उपवास करके **'नमो नारायणाय'** इस मन्त्रसे पवित्रतापूर्वक श्रीहरिका पूजन करे। दूधसे भगवान्‌को नहलाकर खीरका नैवेद्य अर्पण करे। रातमें तीनों समय श्रीहरिकी पूजामें संलग्न रहकर जागता रहे। गन्ध, मनोरम पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, नृत्य, गीत-वाद्य आदि तथा स्तोत्रोंद्वारा श्रीहरिकी अर्चना करे। सबेरेकी पूजाके पश्चात् घृत और दक्षिणासहित खिचड़ी ब्राह्मणको दे। (उस समय निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़ना चाहिये—)

सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्वव्यापी सनातनः।
नारायणः प्रसन्नः स्यात् कृशरान्नप्रदानतः॥

(ना० पूर्व० १७। २८)

'जो सबके आत्मा, सम्पूर्ण लोकोंके ईश्वर तथा सर्वत्र व्यापक हैं, वे सनातन भगवान् श्रीनारायण यह खिचड़ी दान करनेसे मुझपर प्रसन्न हों।'

इस मन्त्रसे ब्राह्मणको उत्तम दान देकर यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन करावे। फिर स्वयं बन्धु-बान्धवोंसहित भोजन करे। जो इस प्रकार भक्तिपूर्वक भगवान् नारायणदेवका पूजन करता है, वह आठ अग्निष्टोम यज्ञोंका सम्पूर्ण फल प्राप्त कर लेता है। माघ शुक्ला द्वादशीको भी पूर्ववत् उपवास करके **'नमस्ते माधवाय'** इस मन्त्रसे अग्निमें आठ बार घीकी आहुति दे। उस दिन पूर्ववत् सेरभर दूधसे भगवान् माधवको स्नान करावे। फिर चित्तको एकाग्र करके गन्ध, पुष्प और अक्षत आदिसे पहलेकी तरह तीनों समय भक्तिपूर्वक पूजन करते हुए रातमें जागरण करे। तत्पश्चात् प्रातःकालका कृत्य समाप्त करके पुनः श्रीमाधवकी अर्चना करे। अन्तमें सब पापोंसे छुटकारा पानेके लिये वस्त्र और दक्षिणासहित सेरभर तिल ब्राह्मणको इस मन्त्रसे दान करे—

माधवः सर्वभूतात्मा सर्वकर्मफलप्रदः।
तिलदानेन महता सर्वान् कामान् प्रयच्छतु॥

(ना० पूर्व० १७। ३५)

'सम्पूर्ण कर्मोंका फल देनेवाले तथा समस्त भूतोंके आत्मा भगवान् लक्ष्मीपति तिलके इस महादानसे प्रसन्न होकर मेरी सब कामनाएँ पूरी करें।'

इस मन्त्रसे भक्तिपूर्वक ब्राह्मणको तिल दान देकर भगवान् माधवका स्मरण करते हुए यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन कराये। मुने! जो इस प्रकार भक्ति-भावसे तिलदानयुक्त व्रत करता है, वह सौ वाजपेय यज्ञके सम्पूर्ण फलको प्राप्त कर लेता है। फाल्गुनके शुक्लपक्षमें द्वादशीको उपवास करके व्रती पुरुष **'गोविन्दाय नमस्तुभ्यम्'** इस मन्त्रसे भगवान्‌का पूजन करे और घृतमिश्रित तिलकी एक सौ आठ आहुति देकर पूर्वोक्त मानके अनुसार एक सेर दूधसे पवित्रतापूर्वक भगवान्

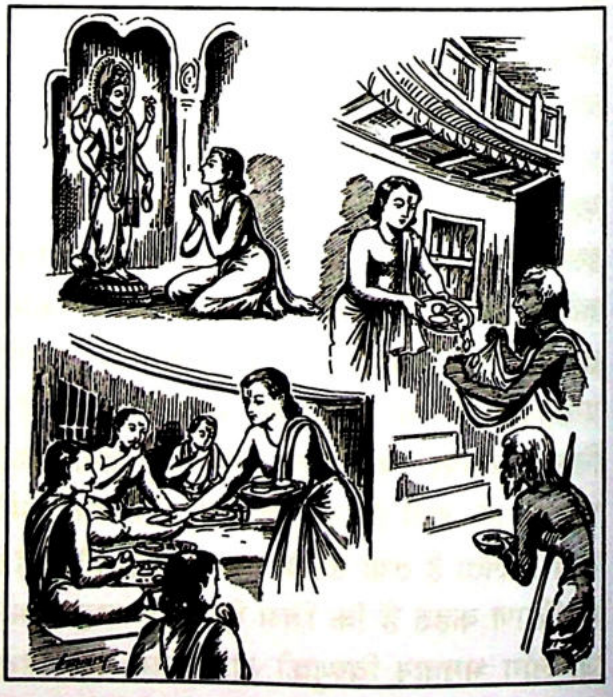

गोविन्दको स्नान करावे। पूर्ववत् रातमें जागरण

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और तीनों समय पूजा करे। फिर प्रातःकालका शौच, स्नान आदि कर्म पूरा करके पुनः भगवान् गोविन्दकी पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् वस्त्र और दक्षिणासहित एक आढक (चार सेर) धान ब्राह्मणको दे और निम्नाङ्कित मन्त्रका पाठ करे—

नमो गोविन्द सर्वेश गोपिकाजनवल्लभ॥
अनेन धान्यदानेन प्रीतो भव जगद्गुरो।

(ना० पूर्व० १७। ४१-४२)

'गोविन्द! सर्वेश्वर! गोपाङ्गनाओंके प्राणवल्लभ! जगद्गुरो! इस धान्यके दानसे आप मुझपर प्रसन्न हों।'

इस प्रकार भलीभाँति व्रतका पालन करके मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो जाता है और महान् यज्ञका पूरा पुण्य प्राप्त कर लेता है।

चैत्र मासके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको उपवास करके पहले बताये अनुसार **'नमोऽस्तु विष्णवे तुभ्यम्'**—इस मन्त्रसे भगवान्‌की पूजा करे। पूर्ववत् एक सेर दूधसे भगवान् विष्णुको स्नान करावे। विप्रवर! यदि शक्ति हो तो उसी प्रकार सेरभर घीसे भी आदरपूर्वक भगवान्‌को नहलावे तथा रातमें भी पहलेकी तरह जागरण और पूजन करे। तदनन्तर सबेरे उठकर प्रातः-कालके आवश्यक कर्म पूरा करके मधु, घी और तिलमिश्रित हवन-सामग्रीकी एक सौ आठ आहुति दे। उसके बाद ब्राह्मणको दक्षिणासहित एक आढक (चार सेर) चावल दान करे। (मन्त्र इस प्रकार है—)

प्राणरूपी महाविष्णुः प्राणदः सर्ववल्लभः॥
तण्डुलाढकदानेन प्रीयतां मे जनार्दनः।

(१७। ४७-४८)

'भगवान् महाविष्णु प्राणस्वरूप हैं। वे ही सबके प्रियतम और प्राणदाता हैं। इस एक आढक चावलके दानसे वे भगवान् जनार्दन मुझपर प्रसन्न हों।'

इस प्रकार भक्तिभावसे व्रतका पालन करके मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है और अत्यग्निष्टोम यज्ञके आठगुने फलको पाता है।

वैशाख शुक्ला द्वादशीको उपवास करके भक्तिपूर्वक देवेश्वर मधुसूदनको द्रोण (कलश) परिमित दूधसे स्नान करावे तथा रातमें तीन समय पूजन करते हुए जागरण करे। मधुसूदनकी विधिपूर्वक पूजा करके **'नमस्ते मधुहन्त्रे'**—इस मन्त्रसे घीकी एक सौ आठ आहुतिका होम करे। घीका उपयोग अपनी शक्तिके अनुसार करे। इससे पापरहित होकर मनुष्य आठ अश्वमेध यज्ञोंका फल पाता है।

ज्येष्ठ मासके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको उपवास करके एक आढक (चार सेर) दूधसे भगवान् त्रिविक्रमको स्नान करावे और **'नमस्त्रिविक्रमाय'** इस मन्त्रसे भक्तिपूर्वक भगवान्‌का पूजन करे। खीरकी एक सौ आठ आहुति देकर होम करे। फिर रातमें जागरण करके भगवान्‌की पूजा करे। फिर प्रातःकृत्य करके पूजनके पश्चात् ब्राह्मणको दक्षिणासहित बीस पूआ दान करे। (दानका मन्त्र इस प्रकार है—)

देवदेव जगन्नाथ प्रसीद परमेश्वर॥
उपायनं च संगृह्य ममाभीष्टप्रदो भव।

(ना० पूर्व० १७। ५५-५६)

'देवदेव! जगन्नाथ! परमेश्वर! आप मुझपर प्रसन्न होइये और यह भेंट ग्रहण करके मेरे अभीष्टकी सिद्धि कीजिये।'

तत्पश्चात् यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उसके बाद स्वयं भी मौन होकर भोजन करे। ब्रह्मन्! जो इस प्रकार भगवान् त्रिविक्रमका व्रत करता है, वह निष्पाप हो आठ यज्ञोंका फल पाता है।

आषाढ़ शुक्ला द्वादशीको उपवास-व्रत करनेवाला जितेन्द्रिय पुरुष पूर्ववत् एक आढक (चार सेर)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दूधसे वामनजीको स्नान करावे। '**नमस्ते वामनाय**'— इस मन्त्रसे दूर्वा और घीकी एक सौ आठ आहुति देकर रातमें जागरण और वामनजीका पूजन करे। दक्षिणासहित दही, अन्न और नारियलका फल वामनजीकी पूजा करनेवाले ब्राह्मणको भक्तिपूर्वक अर्पण करे। (मन्त्र इस प्रकार है—)

वामनो बुद्धिदो होता द्रव्यस्थो वामनः सदा।
वामनस्तारकोऽस्माच्च वामनाय नमो नमः॥

(ना० पूर्व० १७। ६१)

'वामन बुद्धिदाता हैं। वे ही होता हैं और द्रव्यमें भी सदा वामनजी स्थित रहते हैं। वामन ही इस संसार-सागरसे तारनेवाले हैं। वामनजीको बार-बार नमस्कार है।'

इस मन्त्रसे दही-अन्नका दान करके यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन करावे। ऐसा करके मनुष्य सौ अग्निष्टोम यज्ञोंका फल पा लेता है।

श्रावण मासके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको उपवास करनेवाला व्रती मधुमिश्रित दूधसे भगवान् श्रीधरको स्नान करावे और '**नमोऽस्तु श्रीधराय**'— इस मन्त्रसे गन्ध, पुष्प, धूप, दीप आदि सामग्रियोंद्वारा क्रमशः पूजन करे। मुने! तत्पश्चात् दही मिले हुए घीसे एक सौ आठ आहुति दे। फिर रातमें जागरण करके पूजाकी व्यवस्था करे और ब्राह्मणको परम उत्तम एक आढक (चार सेर) दूध दान करे। विप्रवर! साथ ही सम्पूर्ण कामनाओंकी सिद्धिके लिये वस्त्र और दक्षिणासहित सोनेके दो कुण्डल भी निम्नाङ्कित मन्त्रसे अर्पण करे।

क्षीराब्धिशायिन् देवेश रमाकान्त जगत्पते।
क्षीरदानेन सुप्रीतो भव सर्वसुखप्रदः॥

(ना० पूर्व० १७। ६७)

'क्षीरसागरमें शयन करनेवाले देवेश्वर! लक्ष्मीकान्त! जगत्पते! इस दुग्धदानसे आप अत्यन्त प्रसन्न हो सम्पूर्ण सुखोंके दाता होइये।'

ब्राह्मणभोजन सुख देनेवाला है, इसलिये व्रती पुरुष यथाशक्ति भोजन करावे। ऐसा करनेसे एक हजार अश्वमेध यज्ञोंका फल प्राप्त होता है।

भाद्रपद मासके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको उपवास करके एक द्रोण (कलश) दूधसे जगद्गुरु भगवान् हृषीकेशको स्नान करावे। '**हृषीकेश नमस्तुभ्यम्**' इस मन्त्रसे मनुष्य भगवान्का पूजन करे। फिर मधुमिश्रित चरुसे एक सौ आठ आहुति दे। फिर पूर्ववत् जागरण आदि कार्य सम्पन्न करके आत्मज्ञानी ब्राह्मणको डेढ़ आढक (छः सेर) गेहूँ और यथाशक्ति सुवर्णकी दक्षिणा दे। (मन्त्र इस प्रकार है—)

हृषीकेश नमस्तुभ्यं सर्वलोकैककहेतवे।
मह्यं सर्वसुखं देहि गोधूमस्य प्रदानतः॥

(ना० पूर्व० १७। ७२)

'इन्द्रियोंके स्वामी भगवान् हृषीकेश! आप सम्पूर्ण लोकोंके एकमात्र कारण हैं। आपको नमस्कार है। इस गोधूम-दानसे प्रसन्न हो आप मुझे सब प्रकारके सुख दीजिये।'

तत्पश्चात् यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन कराकर स्वयं भी मौन होकर भोजन करे। ऐसा करनेवाला पुरुष सब पापोंसे मुक्त हो महान् यज्ञका फल पाता है।

आश्विन मासकी शुक्ला द्वादशीको उपवास करके पवित्र हो भक्तिपूर्वक भगवान् पद्मनाभको दूधसे स्नान करावे। फिर '**नमस्ते पद्मनाभाय**'— इस मन्त्रसे यथाशक्ति तिल, चावल, जौ और घृतद्वारा होम एवं विधिपूर्वक पूजन करे। रातमें जागरणका कार्य सम्पन्न करके पुनः पूजन करे और ब्राह्मणको दक्षिणासहित एक पाव मधु दान करे। (मन्त्र इस प्रकार है—)

पद्मनाभ नमस्तुभ्यं सर्वलोकपितामह।
मधुदानेन सुप्रीतो भव सर्वसुखप्रदः॥

(ना० पूर्व० १७। ७७)

'सम्पूर्ण लोकोंके पितामह पद्मनाभ! आपको

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नमस्कार है। इस मधुदानसे अत्यन्त प्रसन्न हो आप हमें सम्पूर्ण सुख प्रदान करें।'

जो उत्तम बुद्धिवाला पुरुष इस प्रकार भक्तिभावसे पद्मनाभ-व्रतका पालन करता है, उसे निश्चय ही एक हजार महान् यज्ञोंका फल प्राप्त होता है।

कार्तिक शुक्ला द्वादशीको उपवास करके जितेन्द्रिय पुरुष एक आढक (चार सेर) दूध, दही अथवा उतने ही घीसे भक्तिपूर्वक भगवान् दामोदरको स्नान करावे। स्नान करानेका मन्त्र है—'**ॐ नमो दामोदराय।**' उसीसे मधु और घी मिलाये हुए तिलकी एक सौ आठ आहुति दे। फिर संयम-नियमपूर्वक तीनों समय श्रीहरिकी पूजामें तत्पर हो रातमें जागरण करे और प्रातःकाल आवश्यक कृत्योंसे निवृत्त हो मनोरम कमलके फूलोंद्वारा भगवान्‌की पूजा करे। उसके बाद घृतमिश्रित तिलोंके द्वारा पुनः एक सौ आठ आहुति दे और पाँच प्रकारके भक्ष्य पदार्थोंसे युक्त अन्न ब्राह्मणको भक्तिपूर्वक दे। (मन्त्र इस प्रकार है—)

दामोदर जगन्नाथ सर्वकारणकारण।
त्राहि मां कृपया देव शरणागतपालक॥

(ना० पूर्व० १७। ८३)

'दामोदर! जगन्नाथ! आप समस्त कारणोंके भी कारण हैं। शरणागतोंकी रक्षा करनेवाले देव! कृपया मेरी रक्षा कीजिये।'

इस प्रकार कुटुम्बयुक्त श्रोत्रिय ब्राह्मणको दान और यथाशक्ति दक्षिणा देकर ब्राह्मणोंको भी भोजन करावे। इस प्रकार व्रतका विधिपूर्वक पालन करके अपने बन्धुजनोंके साथ स्वयं भी भोजन करे। इससे वह दो हजार अश्वमेधयज्ञोंका फल पाता है।

मुनिश्रेष्ठ! इस प्रकार व्रतका पालन करनेवाला जो पुरुष परम उत्तम द्वादशीव्रतका एक वर्षतक पूर्वोक्त विधिसे अनुष्ठान करता है, वह परम पदको प्राप्त होता है। जो एक मास या दो मासमें भक्तिपूर्वक उक्त व्रतका पालन करता है, वह उस-उस महीनेके बताये हुए फलको पाता है और हरिके परम पदको प्राप्त हो जाता है। मुनीश्वर! व्रती पुरुषको चाहिये कि वह एक वर्ष पूरा करके मार्गशीर्ष मासके शुक्लपक्षमें द्वादशी तिथिको व्रतका उद्यापन करे। प्रातःकाल शौचादिसे निवृत्त हो दन्तधावन और स्नान करके नित्य कृत्य करे। फिर श्वेत वस्त्र तथा श्वेत पुष्पोंकी माला धारण करे। श्वेत चन्दनका अनुलेपन करे। घरके आँगनमें एक दिव्य चौकोर एवं परम सुन्दर मण्डप बनावे। उसमें घण्टा और चँवर यथास्थान लगा दे। छोटी-छोटी घण्टियोंकी ध्वनिसे उस मण्डपको सुशोभित करे। फूलोंकी मालाओंसे उसको सजावे। ऊपरसे चँदोवा लगा दे और ध्वजा-पताकासे भी उस मण्डपको विभूषित करे। वह मण्डप श्वेत वस्त्रसे आच्छादित तथा दीपमालाओंसे आच्छादित होना चाहिये। उसके मध्यभागमें सर्वतोभद्रमण्डल बनाकर उसे विविध रंगोंसे भलीभाँति अलंकृत करे। सर्वतोभद्रके ऊपर जलसे भरे हुए बारह घड़े रखे। भलीभाँति शुद्ध किये हुए एक ही श्वेत वस्त्रसे उन सभी कलशोंको ढँक दे। वे सब कलश पञ्चरत्नसे युक्त होने चाहिये। ब्रह्मन्! व्रती पुरुष अपनी शक्तिके अनुसार सोने, चाँदी अथवा ताँबेकी भगवान् लक्ष्मीनारायणकी प्रतिमा बनावे और उसे मन और इन्द्रियोंको संयममें रखते हुए कलशके ऊपर स्थापित करे। द्विजश्रेष्ठ! जो प्रतिमा न बना सके, वह अपनी शक्तिके अनुसार सुवर्ण अथवा उसका मूल्य वहाँ चढ़ा दे। बुद्धिमान् पुरुष सभी व्रतोंमें उदार रहे। धनकी कंजूसी न करे। यदि वह कृपणता करता है तो उसकी आयु और धन-सम्पत्तिका क्षय होता है। पहले शेषनागकी शय्यापर शयन करनेवाले रोग-शोकसे रहित भगवान् लक्ष्मीनारायणका ध्यान

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

करके उन्हें भक्तिपूर्वक पञ्चामृतसे स्नान करावे। फिर केशव आदि नामोंसे उनके लिये भिन्न-भिन्न उपचार चढ़ावे। रातमें पुराण-कथा-श्रवण आदिके द्वारा जागरण करे। निद्राको जीते और उपवासपूर्वक जितेन्द्रिय-भावसे रहकर अपने वैभवके अनुसार रातके प्रथम, द्वितीय और तृतीय प्रहरके अन्तमें तीन बार भगवान्‌की पूजा करे। तदनन्तर प्रातःकाल उठकर सबेरेके शौच-स्नान आदि आवश्यक कृत्य पूरे करके ब्राह्मणोंद्वारा व्याहृतिमन्त्रसे तिलकी एक हजार आहुतियाँ दिलावे। उसके बाद क्रमशः गन्ध, पुष्प आदि उपचारोंसे पुनः भगवान्‌की पूजा करे तथा भगवान्‌के समक्ष पुराणकी कथा भी सुने। फिर बारह ब्राह्मणोंमेंसे प्रत्येकको दस-दस पूआ, घृत, दधिसहित अन्न तथा खीर दान करे। उसके साथ दक्षिणा भी दे। (दानका मन्त्र इस प्रकार है—)

देवदेव जगन्नाथ भक्तानुग्रहविग्रह।
गृहाणोपायनं कृष्ण सर्वाभीष्टप्रदो भव॥

(ना० पूर्व० १७। १०३)

'भक्तोंपर कृपा करके अवतार—शरीर धारण करनेवाले देवेदव! जगदीश्वर! श्रीकृष्ण! आप यह भेंट ग्रहण कीजिये और मुझे सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुएँ दीजिये।'

इस मन्त्रसे भगवान्‌को भेंट अर्पण करके दोनों घुटने पृथ्वीपर टेककर व्रती पुरुष विनयसे नतमस्तक हो हाथ जोड़कर इस प्रकार प्रार्थना करे—

नमो नमस्ते सुरराजराज
नमोऽस्तु ते देव जगन्निवास।
कुरुष्व सम्पूर्णफलं ममाद्य
नमोऽस्तु तुभ्यं पुरुषोत्तमाय॥

(ना० पूर्व० १७। १०५)

'देवताओंके राजाधिराज! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। सम्पूर्ण जगत्‌के निवासस्थान नारायणदेव! आपको नमस्कार है। आज मेरे इस व्रतको पूर्णतः सफल बनाइये। आप पुरुषोत्तमको नमस्कार है।'

इस प्रकार ब्राह्मणों तथा भगवान् पुरुषोत्तमसे प्रार्थना करे। तत्पश्चात् महालक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुको निम्नाङ्कित मन्त्रसे अर्घ्य दे।

लक्ष्मीपते नमस्तुभ्यं क्षीरार्णवनिवासिने।
अर्घ्यं गृहाण देवेश लक्ष्म्या च सहितः प्रभो॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥

(ना० पूर्व० १७। १०७-१०८)

'लक्ष्मीपते! क्षीरसागरमें निवास करनेवाले आपको नमस्कार है। देवेश्वर! प्रभो! आप लक्ष्मीजीके साथ यह अर्घ्य स्वीकार करें। जिनके स्मरण तथा नामोच्चारण करनेसे तप तथा यज्ञकर्म आदिमें जो त्रुटि रह गयी हो, उसकी पूर्ति हो जाती है, उन भगवान् अच्युतको मैं शीघ्र मस्तक झुकाता हूँ।'

इस प्रकार देवेश्वर भगवान् विष्णुसे वह सब कुछ निवेदन करके संयमशील व्रती पुरुष दक्षिणासहित प्रतिमा आचार्यको समर्पित करे। उसके बाद ब्राह्मणोंको भोजन करावे और यथाशक्ति दक्षिणा दे। फिर स्वयं भी बन्धुजनोंके साथ मौन होकर भोजन करे। फिर सायंकालतक विद्वानोंके साथ बैठकर भगवान् विष्णुकी कथा सुने। नारदजी! जो मनुष्य इस प्रकार द्वादशीव्रत करता है, वह इहलोक और परलोकमें सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त कर लेता है तथा सब पापोंसे मुक्त हो अपनी इक्कीस पीढ़ियोंके साथ भगवान् विष्णुके धाममें जाता है, जहाँ जाकर कोई शोकका सामना नहीं करता। ब्रह्मन्! जो इस उत्तम द्वादशीव्रतको पढ़ता अथवा सुनता है, वह मनुष्य वाजपेय यज्ञका फल पाता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मार्गशीर्ष-पूर्णिमासे आरम्भ होनेवाले लक्ष्मीनारायण-व्रतकी उद्यापनसहित विधि और महिमा

श्रीसनकजी कहते हैं—मुनिश्रेष्ठ! अब मैं दूसरे उत्तम व्रतका वर्णन करता हूँ, सुनिये। वह सब पापोंको दूर करनेवाला, पुण्यजनक तथा सम्पूर्ण दुःखोंका नाशक है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा स्त्री—इन सबकी समस्त मनोवाञ्छित कामनाओंको सफल करनेवाला तथा सम्पूर्ण व्रतोंका फल देनेवाला है। उस व्रतसे बुरे-बुरे स्वप्नोंका नाश हो जाता है। वह धर्मानुकूल व्रत दुष्ट ग्रहोंकी बाधाका निवारण करनेवाला है, उसका नाम है पूर्णिमाव्रत। वह परम उत्तम तथा सम्पूर्ण जगत्में विख्यात है। उसके पालनसे पापोंकी करोड़ों राशियाँ नष्ट हो जाती हैं।

मार्गशीर्ष मासके शुक्लपक्षकी पूर्णिमा तिथिको संयम-नियमपूर्वक पवित्र हो शास्त्रीय आचारके अनुसार दन्तधावनपूर्वक स्नान करे; फिर श्वेत वस्त्र धारण करके शुद्ध हो मौनपूर्वक घर आवे। वहाँ हाथ-पैर धोकर आचमन करके भगवान् नारायणका स्मरण करे और संध्या-वन्दन, देवपूजा आदि नित्यकर्म करके संकल्पपूर्वक भक्तिभावसे भगवान् लक्ष्मीनारायणकी पूजा करे। व्रती पुरुष **'नमो नारायणाय'**—इस मन्त्रसे आवाहन, आसन तथा गन्ध, पुष्प आदि उपचारोंद्वारा भक्ति-तत्पर हो भगवान्की अर्चना करे और एकाग्रचित्त हो वह गीत, वाद्य, नृत्य, पुराण-पाठ तथा स्तोत्र

आदिके द्वारा श्रीहरिकी आराधना करे। भगवान्के सामने चौकोर वेदी बनावे, जिसकी लंबाई-चौड़ाई लगभग एक हाथ हो। उसपर गृह्यसूत्रमें बतायी हुई पद्धतिके अनुसार अग्निकी स्थापना करे और उसमें आज्यभागान्त* होम करके पुरुषसूक्तके मन्त्रोंसे चरु, तिल तथा घृतद्वारा यथाशक्ति एक, दो, तीन बार होम करे। सम्पूर्ण पापोंकी निवृत्तिके लिये प्रयत्नपूर्वक होमकार्य सम्पन्न करना चाहिये। अपनी शाखाके गृह्यसूत्रमें बतायी हुई विधिके अनुसार प्रायश्चित्त आदि सब कार्य करे। फिर विधिवत् होमकी समाप्ति करके विद्वान् पुरुष शान्तिसूक्तका

* अग्निस्थापनाके पश्चात् दायें हाथमें स्रुव लेकर दाहिना घुटना भूमिपर रखकर ब्रह्मासे अन्वारम्भ करके घृतकी जो चार आहुतियाँ दी जाती हैं, उनमेंसे दो आहुतियोंकी 'आघार' संज्ञा है और शेष दो आहुतियोंको 'आज्यभाग' कहते हैं। 'प्रजापतये स्वाहा'—इस मन्त्रसे प्रजापतिके लिये जो घृतकी अविच्छिन्न धारा दी जाती है, वह 'पूर्व आघार' है। यह अग्निके उत्तरभागमें प्रज्वलित अग्निमें ही छोड़ी जाती है। इसी प्रकार अग्निके दक्षिणभागमें 'इन्द्राय स्वाहा'—इस मन्त्रसे प्रज्वलित अग्निमें इन्द्रके लिये जो अविच्छिन्न घृतकी धारा दी जाती है, उसका नाम 'उत्तर आघार' है। इसके बाद अग्निके उत्तरार्ध-पूर्वार्धमें 'अग्नये स्वाहा'—इस मन्त्रसे अग्निके लिये जो घृतकी एक आहुति दी जाती है, उसका नाम 'आग्नेय आज्यभाग' है और अग्निके दक्षिणार्ध-पूर्वार्धमें 'सोमाय स्वाहा'—इस मन्त्रसे सोमके लिये दी जानेवाली आहुतिका नाम 'सौम्य आज्यभाग' है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जप करे। तत्पश्चात् भगवान्‌के समीप आकर पुनः उनकी पूजा करे और अपना उपवासव्रत भक्तिभावसे भगवान्‌के अर्पण करे।

पौर्णमास्यां निराहारः स्थित्वा देव तवाज्ञया।
भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष परेऽह्नि शरणं भव॥

(ना० पूर्व० १८। १३)

'देव! पुण्डरीकाक्ष! मैं पूर्णिमाको निराहार रहकर दूसरे दिन आपकी आज्ञासे भोजन करूँगा। आप मेरे लिये शरण हों।'

इस प्रकार भगवान्‌को व्रत निवेदन करके संध्याको चन्द्रोदय होनेपर पृथ्वीपर दोनों घुटने टेककर श्वेत पुष्प, अक्षत, चन्दन और जलसहित अर्घ्य हाथमें ले चन्द्रदेवको समर्पित करे—

क्षीरोदार्णवसम्भूत अत्रिगोत्रसमुद्भव।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं रोहिणीनायक प्रभो॥

(ना० पूर्व० १८। १५)

'भगवन् रोहिणीपते! आपका जन्म अत्रिकुलमें हुआ है और आप क्षीरसागरसे प्रकट हुए हैं। मेरे दिये हुए इस अर्घ्यको स्वीकार कीजिये।'

नारदजी! इस प्रकार चन्द्रदेवको अर्घ्य देकर पूर्वाभिमुख खड़ा हो चन्द्रमाकी ओर देखते हुए हाथ जोड़कर प्रार्थना करे—

नमः शुक्लांशवे तुभ्यं द्विजराजाय ते नमः।
रोहिणीपतये तुभ्यं लक्ष्मीभ्रात्रे नमोऽस्तु ते॥

(ना० पूर्व०१८। १७)

'भगवन्! आप श्वेत किरणोंसे सुशोभित होते हैं, आपको नमस्कार है। आप द्विजोंके राजा हैं, आपको नमस्कार है। आप रोहिणीके पति हैं, आपको नमस्कार है। आप लक्ष्मीजीके भाई हैं, आपको नमस्कार है।'

तदनन्तर पुराण-श्रवण आदिके द्वारा जितेन्द्रिय एवं शुद्ध भावसे रातभर जागरण करे। पाखण्डियोंकी दृष्टिसे दूर रहे। फिर प्रातःकाल उठकर अपने नित्य-नियमका विधिपूर्वक पालन करे। उसके बाद अपने वैभवके अनुसार पुनः भगवान्‌की पूजा करे। तत्पश्चात् यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन करावे और स्वयं भी शुद्धचित्त हो अपने भाई-बन्धुओं तथा भृत्य आदिके साथ भोजन करे। भोजनके समय मौन रहे। इसी प्रकार पौष आदि महीनोंमें भी पूर्णिमाको उपवास करके भक्तियुक्त हो रोग-शोकरहित भगवान् नारायणकी पूजा-अर्चा करे। इस तरह एक वर्ष पूरा करके कार्तिककी पूर्णिमाके दिन उद्यापन करे। उद्यापनका विधान तुम्हें बतलाता हूँ! व्रती पुरुष एक परम सुन्दर चौकोर मङ्गलमय मण्डप बनवावे, जो पुष्प-लताओंसे सुशोभित तथा चँदोवा और ध्वजा-पताकासे सुसज्जित हो। वह मण्डप अनेक दीपकोंके प्रकाशसे व्याप्त होना चाहिये। उसकी शोभा बढ़ानेके लिये छोटी-छोटी घण्टिकाओंसे सुशोभित झालर लगा देनी चाहिये। उसमें किनारे-किनारे बड़े-बड़े शीशे और चँवर लगा देने चाहिये। कलशोंसे वह मण्डप घिरा रहे। मण्डपके मध्य भागमें पाँच रंगोंसे सुशोभित सर्वतोभद्र मण्डल बनावे। नारदजी! उस मण्डलपर जलसे भरा हुआ एक कलश स्थापित करे। फिर सुन्दर एवं महीन वस्त्रसे उस कलशको ढक दे। उसके ऊपर सोने, चाँदी अथवा ताँबेसे भगवान् लक्ष्मीनारायणकी परम सुन्दर प्रतिमा बनाकर स्थापित करे। तदनन्तर जितेन्द्रिय पुरुष भक्तिभावसे भगवान्‌को पञ्चामृतद्वारा स्नान करावे और क्रमशः गन्ध, पुष्प, धूप, दीप आदि सामग्रियों तथा भक्ष्य, भोज्य आदि नैवेद्योंद्वारा उनकी पूजा करके उत्तम श्रद्धापूर्वक रातमें जागरण करे। दूसरे दिन प्रातःकाल पूर्ववत् भगवान् विष्णुकी विधिपूर्वक अर्चना करे। फिर दक्षिणासहित प्रतिमा आचार्यको दान कर दे और धन-वैभव हो तो ब्राह्मणोंको यथाशक्ति अवश्य भोजन करावे। उसके बाद एकाग्रचित्त हो विद्वान् पुरुष यथाशक्ति तिल दान करे और तिलका ही विधिपूर्वक अग्निमें

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होम करे। जो मनुष्य इस प्रकार भलीभाँति लक्ष्मीनारायणका व्रत करता है, वह इस लोकमें पुत्र-पौत्रोंके साथ महान् भोग भोगकर सब पापोंसे मुक्त हो अपनी बहुत-सी पीढ़ियोंके साथ भगवान्‌के वैकुण्ठधाममें जाता है, जो योगियोंके लिये भी दुर्लभ है।

श्रीविष्णुमन्दिरमें ध्वजारोपणकी विधि और महिमा

श्रीसनकजी कहते हैं—नारदजी! अब मैं ध्वजारोपण नामक दूसरे व्रतका वर्णन करूँगा, जो सब पापोंको हर लेनेवाला, पुण्यस्वरूप तथा भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताका कारण है। जो भगवान् विष्णुके मन्दिरमें ध्वजारोपणका उत्तम कार्य करता है, वह ब्रह्मा आदि देवताओंद्वारा पूजित होता है। बहुत-सी दूसरी बातें कहनेसे क्या लाभ! जो कुटुम्बयुक्त ब्राह्मणको सुवर्णका एक हजार भार दान देता है, उसके उस दानका फल ध्वजारोपण-कर्मके बराबर ही होता है। परम उत्तम गङ्गा-स्नान, तुलसीकी सेवा अथवा शिवलिङ्गका पूजन—ये सब कर्म ही ध्वजारोपणकी समानता कर सकते हैं। ब्रह्मन्! यह ध्वजारोपण नामक कर्म अद्भुत है, अपूर्व है और आश्चर्यजनक है। यह सब पापोंको दूर करनेवाला है। ध्वजारोपण कार्यमें जो-जो कार्य आवश्यक हैं, उन सबको बतलाता हूँ, आप मेरे मुखसे सुनें।

कार्तिक मासके शुक्लपक्षमें दशमी तिथिको मनुष्य अपने मन और इन्द्रियोंको संयममें रखते हुए, प्रयत्नपूर्वक दातुन करके स्नान करे। व्रत करनेवाला ब्राह्मण उस दिन एक समय भोजन करे, ब्रह्मचर्यसे रहे और धुले हुए शुद्ध वस्त्र धारण करके शुद्धतापूर्वक भगवान् नारायणके सामने उन्हींका स्मरण करते हुए रातमें शयन करे। तत्पश्चात् प्रातःकाल उठकर विधिपूर्वक स्नान और आचमन करके नित्यकर्म पूर्ण करनेके अनन्तर भगवान् विष्णुकी पूजा करे। चार ब्राह्मणोंके साथ स्वस्तिवाचन करके ध्वजारोपणके निमित्त नान्दीमुख-श्राद्ध करे। वस्त्रसहित ध्वज

और स्तम्भका गायत्री-मन्त्रद्वारा प्रोक्षण (जलसे अभिषेक) करे। फिर उस ध्वजके वस्त्रमें सूर्य, गरुड और चन्द्रमाकी पूजा करे। ध्वजके दण्डमें धाता और विधाताका पूजन करे। हल्दी अक्षत और गन्ध आदि सामग्रियोंसे विशेषतः श्वेत पुष्पोंसे पूजन करना चाहिये। तदनन्तर गोचर्म बराबर एक वेदी बनाकर उसे जल और गोबरसे लीपे। फिर अपनी शाखाके गृह्यसूत्रमें बतलायी हुई विधिके अनुसार पञ्चभू-संस्कारपूर्वक अग्निकी स्थापना करके क्रमशः आघार और आज्य-भाग आदि होमकार्य करे। फिर घृतमिश्रित खीरकी एक सौ आठ आहुति दे। यह आहुति प्रधान देवता भगवान् विष्णुके अष्टाक्षर-मन्त्रसे देनी चाहिये। (यथा '**ॐ नमो नारायणाय स्वाहा।**') ब्रह्मन्! इसके बाद पुरुषसूक्तके प्रथम

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

मन्त्र[1], विष्णोर्नुकम्[2], इरावती[3], वैनतेयाय स्वाहा, सोमो[4] धेनुम् और उदुत्यं जातवेदसम्[4]—इन मन्त्रोंसे क्रमशः आठ-आठ आहुति अग्निमें डाले। तत्पश्चात् वहाँ यथाशक्ति **'बिभ्राड् बृहत् पिबतु सोम्यं मधु'** इत्यादि (यजु० ३३। ३०) सूर्यदेवतासम्बन्धी मन्त्रों तथा **'शं नो मित्रः शं वरुणः'** (यजु० ३६। ९) इत्यादि शान्तिसूक्तके मन्त्रोंका पाठ या जप करे और पवित्रतापूर्वक भगवान् विष्णुके समीप रात्रिमें जागरण करे। दूसरे दिन प्रातःकाल नित्यकर्म समाप्त करके गन्ध, पुष्प आदिके द्वारा क्रमशः पहलेकी तरह ही भगवान्‌की पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर उस सुन्दर ध्वजको मङ्गलवाद्य, सूक्तपाठ, स्तोत्रगान और नृत्य आदि उत्सवके साथ भगवान् विष्णुके मन्दिरमें ले जाय। नारदजी! भगवान्‌के द्वारपर अथवा मन्दिरके शिखरपर खम्भेसहित उस ध्वजको प्रसन्नतापूर्वक दृढ़ताके साथ स्थापित करे। फिर गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप आदि मनोहर उपचारों तथा भक्ष्य-भोज्य आदि पदार्थयुक्त नैवेद्योंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करे। इस प्रकार उत्तम एवं सुन्दर ध्वजको देवालयमें स्थापित करके परिक्रमा करे।

इसके बाद भगवान्‌के सामने इस स्तोत्रका पाठ करे। पुण्डरीकाक्ष! कमलनयन! आपको नमस्कार है। विश्वभावन! आपको नमस्कार है। हृषीकेश! महापुरुष! सबके पूर्वज! आपको नमस्कार है। जिनसे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है, जिनमें यह सब प्रतिष्ठित है और प्रलयकाल आनेपर जिनमें ही इसका लय होगा, उन भगवान् विष्णुकी मैं शरण लेता हूँ। ब्रह्मा आदि देवता भी जिनके परम भाव (यथार्थ स्वरूप)-को नहीं जानते और योगी भी जिन्हें नहीं देख पाते, उन ज्ञानस्वरूप श्रीहरिकी मैं वन्दना करता हूँ। अन्तरिक्ष जिनकी नाभि है, द्युलोक जिनका मस्तक है और पृथ्वी जिनका चरण है, उन विश्वरूप भगवान्‌को मैं प्रणाम करता हूँ। सम्पूर्ण दिशाएँ जिनके कान हैं, सूर्य और चन्द्रमा जिनके नेत्र हैं तथा ऋक्, साम और यजुर्वेद जिनसे प्रकाशित हुए हैं, उन ब्रह्मस्वरूप भगवान् विष्णुको मैं नमस्कार करता हूँ। जिनके मुखसे ब्राह्मण उत्पन्न हुए हैं, जिनकी भुजासे क्षत्रियोंकी उत्पत्ति हुई है, जिनके ऊरुसे वैश्य प्रकट हुए हैं और जिनके चरणोंसे शूद्रका जन्म हुआ है, विद्वान् लोग मायाके संयोगमात्रसे जिन्हें पुरुष कहते हैं, जो स्वभावतः निर्मल, शुद्ध, निर्विकार तथा दोषोंसे निर्लिप्त हैं, जिनका कहीं अन्त नहीं है, जो किसीसे पराजित नहीं होते और क्षीरसागरमें शयन करते हैं, श्रेष्ठ भक्तोंपर जिनकी स्नेहधारा सदा प्रवाहित होती रहती है तथा जो भक्तिसे ही सुलभ होते हैं, उन भगवान् विष्णुको मैं प्रणाम करता हूँ। पृथ्वी आदि पाँच भूत, तन्मात्राएँ, इन्द्रियाँ तथा सूक्ष्म और स्थूल सभी पदार्थ जिनसे अस्तित्व-लाभ करते हैं, सब ओर मुखवाले उन सर्वव्यापी परमेश्वरको मैं नमस्कार करता हूँ। जिन्हें सम्पूर्ण लोकोंमें उत्तम-से-उत्तम, निर्गुण,

१. सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्। स भूमिꣳसर्वतः स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्॥ (यजु० ३१। १)

२. विष्णोर्नुकं वीर्य्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजाꣳसि। यो अस्कभायदुत्तरꣳसधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायो विष्णवे त्वा॥ (यजु० ५। १८)

३. इरावती धेनुमती हि भूतꣳसूयवसिनी मनवे दशस्या। व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवे ते दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा॥ (यजु० ५। १६)

४. सोमो धेनुꣳसोमो अर्वन्तमाशुꣳसोमो वीरं कर्मण्यं ददाति। सादन्यं विदथ्यꣳसभेयं पितृश्रवणं यो ददाशदस्मै॥ (यजु० ३४। २१)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अत्यन्त सूक्ष्म; परम प्रकाशमय परब्रह्म कहा गया है, उन श्रीहरिको मैं बारम्बार प्रणाम करता हूँ। योगीश्वरगण जिन्हें निर्विकार, अजन्मा, शुद्ध, सब ओर बाँहवाले तथा ईश्वर मानते हैं, जो समस्त कारणतत्त्वोंके भी कारण हैं, जो भगवान् सम्पूर्ण प्राणियोंके अन्तर्यामी आत्मा हैं, यह जगत् जिनका स्वरूप है तथा जो निर्गुण परमात्मा हैं, वे भगवान् विष्णु मुझपर प्रसन्न हों। जो मायासे मोहित चित्तवाले अज्ञानी पुरुषोंके लिये हृदयमें रहकर भी उनसे दूर बने हुए हैं और ज्ञानियोंके लिये जो सर्वत्र प्राप्त हैं, वे भगवान् विष्णु मुझपर प्रसन्न हों। चार[१], चार[२], दो[३], पाँच[४] और दो[५] अक्षरवाले मन्त्रोंसे जिनके लिये आहुति दी जाती है, वे विष्णुभगवान् मुझपर प्रसन्न हों। जो ज्ञानियों, कर्मयोगियों तथा भक्त पुरुषोंको उत्तम गति प्रदान करनेवाले हैं, वे विश्वपालक भगवान् मुझपर प्रसन्न हों। जगत्का कल्याण करनेके लिये श्रीहरि लीलापूर्वक जिन शरीरोंको धारण करते हैं, विद्वान् लोग उन सबकी पूजा करते हैं, वे लीलाविग्रहधारी भगवान् मुझपर प्रसन्न हों। ज्ञानी महात्मा जिन्हें सच्चिदानन्दस्वरूप निर्गुण तथा गुणोंके अधिष्ठान मानते हैं, वे भगवान् विष्णु मुझपर प्रसन्न हों।

इस प्रकार स्तुति करके भगवान् विष्णुको प्रणाम और ब्राह्मणोंका पूजन करे। तत्पश्चात् दक्षिणा और वस्त्र आदिके द्वारा आचार्यकी भी पूजा करे। विप्रवर! उसके बाद भक्तिभावसे पूर्ण होकर यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन करावे। फिर स्त्री-पुत्र और मित्र आदि बन्धुजनोंके साथ स्वयं भी भोजन करे तथा निरन्तर भगवान् नारायणके चिन्तनमें लगा रहे। नारदजी! जितने क्षणोंतक उस ध्वजाकी पताका वायुसे फहराती रहती है, आरोपण करनेवाले मनुष्यकी उतनी ही पाप-राशियाँ निस्संदेह नष्ट हो जाती हैं। महापातकोंसे युक्त अथवा सम्पूर्ण पातकोंसे दूषित पुरुष भी भगवान् विष्णुके मन्दिरमें ध्वजा फहराकर सब पातकोंसे मुक्त हो जाता है। जो धार्मिक पुरुष ध्वजाको आरोपित देखकर उसका अभिनन्दन करते हैं, वे सभी अनेकों महापातकोंसे मुक्त हो जाते हैं। भगवान् विष्णुके मन्दिरमें स्थापित किया हुआ ध्वज जब अपनी पताका फहराने लगता है, उस समय आधे पलमें ही वह उसे आरोपित करनेवाले पुरुषके सम्पूर्ण पापोंको नष्ट कर देता है।

हरिपञ्चक-व्रतकी विधि और माहात्म्य

श्रीसनकजी कहते हैं—नारदजी! अब मैं दूसरे व्रतका यथार्थरूपसे वर्णन करता हूँ, सुनिये। यह व्रत हरिपञ्चक नामसे प्रसिद्ध है और सम्पूर्ण लोकोंमें दुर्लभ है। मुनिश्रेष्ठ! स्त्रियों तथा पुरुषोंके सम्पूर्ण दुःखोंका इससे निवारण हो जाता है तथा यह धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति करानेवाला एवं सम्पूर्ण मनोरथों और समस्त व्रतोंके फलको देनेवाला है।

मार्गशीर्ष मासके शुक्लपक्षकी दशमी तिथिको मनुष्य अपने मन और इन्द्रियोंको संयममें रखते हुए शौच, दन्तधावन और स्नान करके शास्त्रविहित नित्यकर्म करे। फिर भलीभाँति देवपूजन तथा पञ्च महायज्ञोंका अनुष्ठान करके उस दिन नियमपूर्वक रहकर केवल एक समय

१. ओ श्रावय। २. अस्तु श्रोषट्। ३. यज। ४. ये यजामहे। ५. वषट्

Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भोजन करे। मुनीश्वर! दूसरे दिन एकादशीको प्रातः-काल उठकर स्नान और नित्यकर्मसे निवृत्त होकर अपने घरपर भगवान् विष्णुकी पूजा करे। पञ्चामृतकी विधिसे देवदेवेश्वर श्रीहरिको स्नान करावे। तत्पश्चात् गन्ध, पुष्प आदिसे तथा धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल और परिक्रमाद्वारा उत्तम भक्तिभावके साथ क्रमशः भगवान्‌की अर्चना करे। देवदेवेश्वर भगवान्‌की भलीभाँति पूजा करके इस मन्त्रका उच्चारण करे—

नमस्ते ज्ञानरूपाय ज्ञानदाय नमोऽस्तु ते॥
नमस्ते सर्वरूपाय सर्वसिद्धिप्रदायिने।

(ना० पूर्व० २१। ८-९)

'प्रभो! आप ज्ञानस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है। आप ज्ञानदाता हैं, आपको नमस्कार है। आप सर्वरूप तथा सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाले हैं, आपको नमस्कार है।'

इस प्रकार सर्वव्यापी देवेश्वर भगवान् जनार्दनको प्रणाम करके आगे बताये जानेवाले मन्त्रके द्वारा अपना उपवास-व्रत भगवान्‌को समर्पित करे—

पञ्चरात्रं निराहारो ह्यद्यप्रभृति केशव॥
त्वदाज्ञया जगत्स्वामिन् ममाभीष्टप्रदो भव।

(ना० पूर्व० २१। १०-११)

'सम्पूर्ण जगत्‌के स्वामी केशव! आपकी आज्ञासे मैं आजसे पाँच राततक निराहार रहूँगा। आप मुझे मेरी अभीष्ट वस्तु प्रदान करें।'

इस प्रकार भगवान्‌को उपवास समर्पित करके जितेन्द्रिय पुरुष रातमें जागरण करे। मुने! एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी तथा पूर्णिमाको इन्द्रियसंयम एवं उपवासपूर्वक इसी प्रकार भगवान् विष्णुका पूजन करना चाहिये। विप्रवर! एकादशी तथा पूर्णिमाकी रात्रिमें ही जागरण करना चाहिये। पञ्चामृत आदि सामग्रियोंसे की जानेवाली पूजा तो पाँचों दिन समानरूपसे आवश्यक है; परंतु पूर्णिमाके दिन यथाशक्ति दूधके द्वारा भगवान् विष्णुको स्नान कराना चाहिये। साथ ही तिलका होम और दान भी करना चाहिये। तत्पश्चात् छठा दिन आनेपर अपना आश्रमोचित कर्म करके पञ्चगव्य पीकर विधिपूर्वक श्रीहरिकी पूजा करे। यदि अपने पास धन हो तो ब्राह्मणोंको बेरोक-टोक भोजन करावे। तदनन्तर भाई-बन्धुओंके साथ स्वयं भी मौन होकर भोजन करे। नारदजी! इस प्रकार पौषसे लेकर कार्तिकतकके महीनोंमें भी शुक्लपक्षमें मनुष्य पूर्वोक्त विधिसे इस व्रतको करे। इस प्रकार इस पापनाशक व्रतको एक वर्षतक करे। फिर मार्गशीर्ष मास आनेपर व्रती पुरुष उसका उद्यापन करे। ब्रह्मन्! एकादशीको पहलेकी ही भाँति निराहार रहना चाहिये और द्वादशीको एकाग्रचित्त हो पञ्चगव्य पीना चाहिये। फिर गन्ध, पुष्प आदि सामग्रियोंसे देवदेव जनार्दनकी भलीभाँति पूजा करके जितेन्द्रिय पुरुष ब्राह्मणको भेंट दे। मुनीश्वर! मधु और घृतयुक्त खीर, फल, सुगन्धित जलसे भरा और वस्त्रसे ढका हुआ पञ्चरत्न और दक्षिणासहित कलश अध्यात्मतत्त्वके ज्ञाता ब्राह्मणको दान करे। (उस समय निम्नाङ्कितरूपसे प्रार्थना करे—)

सर्वात्मन् सर्वभूतेश सर्वव्यापिन् सनातन।
परमान्नप्रदानेन सुप्रीतो भव माधव॥

(ना० पूर्व० २१। २३)

'सबके आत्मा, सम्पूर्ण भूतोंके स्वामी, सर्वव्यापी, सनातन माधव! आप इस उत्तम अन्नके दानसे अत्यन्त प्रसन्न हों।'

इस मन्त्रसे खीर दान करके यथाशक्ति ब्राह्मण-भोजन करावे और स्वयं भी मौन होकर भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। जो इस हरिपञ्चक नामक व्रतका पालन करता है, उसका ब्रह्मलोक अर्थात् परमात्माके परम धामसे कभी पुनरागमन नहीं होता। उत्तम मोक्षकी इच्छा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रखनेवाले पुरुषोंको यह व्रत अवश्य करना चाहिये। ब्रह्मन्! यह व्रत सम्पूर्ण पापरूपी दुर्गम वनको जलानेके लिये दावानलके समान है। जो मानव भगवान् नारायणके चिन्तनमें तत्पर हो भक्तिपूर्वक इस प्रसंगको सुनता है, वह महाघोर पातकोंसे मुक्त हो जाता है।

मासोपवास-व्रतकी विधि और महिमा

श्रीसनकजी कहते हैं—नारदजी! अब मैं मासोपवास नामक दूसरे श्रेष्ठ व्रतका वर्णन करूँगा; एकाग्रचित्त होकर सुनिये। वह सब पापोंको हर लेनेवाला, पवित्र तथा सब लोकोंका उपकार करनेवाला है। विप्रवर! आषाढ़, श्रावण, भादों अथवा आश्विन मासमें इस व्रतको करना चाहिये। इनमेंसे किसी एक मासके शुक्ल पक्षमें जितेन्द्रिय पुरुष पञ्चगव्य पीये और भगवान् विष्णुके समीप शयन करे। तदनन्तर प्रातःकाल उठकर नित्यकर्म समाप्त करनेके पश्चात् मन और इन्द्रियोंको वशमें करके क्रोधरहित हो, श्रद्धापूर्वक भगवान् विष्णुकी पूजा करे। विद्वानोंके साथ भगवान् विष्णुका यथोचित पूजन करके स्वस्तिवाचनपूर्वक यह संकल्प करे—

मासमेकं निराहारो ह्यद्यप्रभृति केशव।
मासान्ते पारणं कुर्वे देवदेव तवाज्ञया॥
तपोरूप नमस्तुभ्यं तपसां फलदायक।
ममाभीष्टफलं देहि सर्वविघ्नान् निवारय॥

(ना० पूर्व० २२। ६-७)

'देवदेव! केशव! आजसे एक मासतक मैं निराहार रहकर मासके अन्तमें आपकी आज्ञासे पारण करूँगा। प्रभो! आप तपस्यारूप हैं और तपस्याके फल देनेवाले हैं। आपको नमस्कार है। आप मुझे अभीष्ट फल दें और मेरे सम्पूर्ण विघ्नोंका निवारण करें।'

इस प्रकार भगवान् विष्णुको शुभ मासव्रत समर्पण करके उस दिनसे लेकर महीनेके अन्ततक भगवान् विष्णुके मन्दिरमें निवास करे और प्रतिदिन पञ्चामृतकी विधिसे भगवानको स्नान करावे। उस महीनेमें निरन्तर भगवान्के मन्दिरमें दीप जलावे। नित्यप्रति अपामार्ग (ऊँगा—चिरचिरा)-की दातुन करे और भगवान् नारायणके चिन्तनमें रत हो विधिपूर्वक स्नान करे। तदनन्तर पहलेकी भाँति संयमपूर्वक भगवान् विष्णुको स्नान करावे और उनकी पूजा करे। इस प्रकार मासोपवास पूरा होनेपर भगवत्पूजनपूर्वक यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन करावे और भक्तिपूर्वक उन्हें दक्षिणा दे। फिर स्वयं भी इन्द्रियोंको वशमें करके बन्धुजनोंके साथ भोजन करे। इस प्रकार व्रती पुरुष तेरह बार मासोपवास अर्थात् प्रतिवर्ष एक मासोपवास-व्रत करता हुआ तेरह वर्षतक व्रत करे। उसके अन्तमें वेदवेत्ता ब्राह्मणको दक्षिणासहित गोदान करे। बारह ब्राह्मणोंको विधिपूर्वक भोजन करावे और अपनी शक्तिके

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hindusim Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अनुसार उन्हें वस्त्र, आभूषण तथा दक्षिणा दे।

इस प्रकार जो मनुष्य इन्द्रियसंयमपूर्वक तेरह पराक पूर्ण कर लेता है, वह परमानन्द पदको प्राप्त होता है, जहाँ जाकर कोई शोक नहीं करता। मासोपवास-व्रतमें लगे हुए, गङ्गास्नानमें तत्पर तथा धर्ममार्गका उपदेश करनेवाले मनुष्य निस्संदेह मुक्त ही हैं। विधवा स्त्रियों, संन्यासियों, ब्रह्मचारियों और विशेषतः वानप्रस्थियोंको यह मासोपवास-व्रत करना चाहिये। स्त्री हो या पुरुष, इस परम दुर्लभ व्रतका अनुष्ठान करके मोक्ष प्राप्त कर लेता है, जो योगियोंके लिये भी दुर्लभ है। गृहस्थ हो या वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी हो या संन्यासी तथा मूर्ख हो या पण्डित—इस प्रसंगको सुनकर कल्याणका भागी होता है। जो भगवान् नारायणकी शरण होकर इस पुण्यमय व्रतका वर्णन सुनता अथवा पढ़ता है, वह पापोंसे मुक्त हो जाता है।

एकादशी-व्रतकी विधि और महिमा—भद्रशीलकी कथा

श्रीसनकजी कहते हैं—नारदजी! अब मैं इस अन्य व्रतका, जो तीनों लोकोंमें विख्यात है, वर्णन करूँगा। यह सब पापोंका नाश करनेवाला तथा सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फलोंको देनेवाला है। इसका नाम है—एकादशी-व्रत। यह भगवान् विष्णुको विशेष प्रिय है। ब्रह्मन्! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और स्त्री—जो भी भक्तिपूर्वक इस व्रतका पालन करते हैं, उनको यह मोक्ष देनेवाला है। यह मनुष्योंको उनकी समस्त अभीष्ट वस्तुएँ प्रदान करता है। विप्रवर! सब प्रकारसे इस व्रतका पालन करना चाहिये; क्योंकि यह भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला है। दोनों पक्षकी एकादशीको भोजन न करे। जो भोजन कर लेता है, वह इस लोकमें बड़ा भारी पापी है। परलोकमें उसे नरककी प्राप्ति होती है। मुनीश्वर! मनुष्य यदि मुक्तिकी अभिलाषा रखता है तो वह दशमी और द्वादशीको एक समय भोजन करे और एकादशीको सर्वथा निराहार रहे। महापातकों अथवा सब प्रकारके पातकोंसे युक्त मनुष्य भी यदि एकादशीको निराहार रहे तो वह परम गतिको प्राप्त होता है। एकादशी परम पुण्यमयी तिथि है। यह भगवान् विष्णुको बहुत प्रिय है। संसार-बन्धनका उच्छेद करनेकी इच्छावाले ब्राह्मणोंको सर्वथा इसका सेवन करना चाहिये। दशमीको प्रातःकाल उठकर दन्तधावनपूर्वक स्नान करे और इन्द्रियोंको वशमें रखते हुए विधिपूर्वक भगवान् विष्णुका पूजन करे। रातमें भगवान् नारायणका चिन्तन करते हुए उन्हींके समीप शयन करे। एकादशीको सबेरे उठकर शौच-स्नानके अनन्तर गन्ध, पुष्प आदि सामग्रियोंद्वारा भगवान् विष्णुकी विधिपूर्वक पूजा करके इस प्रकार कहे—

एकादश्यां निराहारः स्थित्वाद्याहं परेऽहनि।
भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत॥

(ना० पूर्व० २३। १५)

'कमलनयन अच्युत! आज एकादशीको निराहार रहकर मैं दूसरे दिन भोजन करूँगा। आप मेरे लिये शरणदाता हों।'

सुदर्शनचक्रधारी देवदेव भगवान् विष्णुके समीप भक्तिभावसे उक्त मन्त्रका उच्चारण करके संतुष्टचित्त हो उन्हें एकादशीका उपवास समर्पित करे। व्रती पुरुष नियमपूर्वक रहकर भगवान् विष्णुके समक्ष गीत, वाद्य, नृत्य तथा पुराणश्रवण आदिके द्वारा रातमें जागरण करे। तदनन्तर द्वादशीके दिन प्रातःकाल उठकर व्रतधारी पुरुष स्नान करे और इन्द्रियोंको वशमें रखते हुए विधिपूर्वक भगवान् विष्णुकी पूजा करे। विप्रवर! जो एकादशीके दिन भगवान् जनार्दनको पञ्चामृतसे स्नान कराकर द्वादशीको दूधसे नहलाता है, वह श्रीहरिका सारूप्य प्राप्त कर लेता है। (पूजनके पश्चात् इस प्रकार प्रार्थना करे—)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अज्ञानतिमिरान्धस्य व्रतेनानेन केशव।
प्रसीद सुमुखो भूत्वा ज्ञानदृष्टिप्रदो भव॥

(ना० पूर्व० २३। २०)

'केशव! मैं अज्ञानरूपी तिमिर रोगसे अन्धा हो रहा हूँ। मेरे इस व्रतसे आप प्रसन्न हों और प्रसन्नमुख होकर मुझे ज्ञानदृष्टि प्रदान करें।'

विप्रवर! इस प्रकार द्वादशीके दिन भगवान् लक्ष्मीपतिसे निवेदन करके एकाग्रचित्त हो यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें दक्षिणा दे। तत्पश्चात् अपने भाई-बन्धुओंके साथ भगवान् नारायणका चिन्तन करते हुए पञ्चमहायज्ञ (बलिवैश्वदेव) करके स्वयं भी मौनभावसे भोजन करे। जो इस प्रकार संयमपूर्वक पवित्र एकादशी-व्रतका पालन करता है, वह पुनरावृत्तिरहित वैकुण्ठधाममें जाता है। उपवास-व्रतमें तत्पर तथा धर्मकार्यमें संलग्न मनुष्य चाण्डालों और पतितोंकी ओर कभी न देखे। जो नास्तिक हैं, जिन्होंने मर्यादा भङ्ग की है तथा जो निन्दक और चुगले हैं, ऐसे लोगोंसे उपवास-व्रत करनेवाला पुरुष कभी बातचीत न करे। जो यज्ञके अनधिकारियोंसे यज्ञ करानेवाला है, उससे भी व्रती पुरुष कभी न बोले। जो कुण्ड (पतिके जीते-जी परपुरुषसे उत्पन्न किये हुए पुरुष)-का अन्न खाता, देवता और ब्राह्मणसे विरोध रखता, पराये अन्नके लिये लालायित रहता और परायी स्त्रियोंमें आसक्त होता है, ऐसे मनुष्यका व्रती पुरुष वाणीमात्रसे भी आदर न करे। जो इस प्रकारके दोषोंसे रहित, शुद्ध, जितेन्द्रिय तथा सबके हितमें तत्पर है, वह उपवासपरायण होकर परम सिद्धिको प्राप्त कर लेता है। गङ्गाके समान कोई तीर्थ नहीं है। माताके समान कोई गुरु नहीं है। भगवान् विष्णुके समान कोई देवता नहीं है और उपवाससे बढ़कर कोई तप नहीं है। क्षमाके समान कोई माता नहीं है। कीर्तिके समान कोई धन नहीं है। ज्ञानके समान कोई लाभ नहीं है। धर्मके समान कोई पिता नहीं है। विवेकके समान कोई बन्धु नहीं है और एकादशीसे बढ़कर कोई व्रत नहीं है*।

इस विषयमें लोग भद्रशील और गालवमुनिके पुरातन इतिहासका उदाहरण दिया करते हैं। पूर्वकालकी बात है, नर्मदाके तटपर गालव नामसे प्रसिद्ध एक सत्यपरायण मुनि रहते थे। वे शम (मनोनिग्रह) और दम (इन्द्रियसंयम)-से सम्पन्न तथा तपस्याकी निधि थे। सिद्ध, चारण, गन्धर्व, यक्ष और विद्याधर आदि देवयोनिके लोग भी वहाँ विहार करते थे। वह स्थान कंद, मूल, फलोंसे परिपूर्ण था। वहाँ मुनियोंका बहुत बड़ा समुदाय निवास करता था। विप्रवर गालव वहाँ चिरकालसे निवास करते थे। उनके एक पुत्र हुआ, जो भद्रशील नामसे विख्यात हुआ। वह

* नास्ति गङ्गासमं तीर्थं नास्ति मातृसमो गुरुः। नास्ति विष्णुसमं दैवं तपो नानशनात्परम्॥
नास्ति क्षमासमा माता नास्ति कीर्तिसमं धनम्। नास्ति ज्ञानसमो लाभो न च धर्मसमः पिता॥
न विवेकसमो बन्धुर्नैकादश्याः परं व्रतम्। (ना० पूर्व० २३। ३०—३२)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

बालक अपने मन और इन्द्रियोंको वशमें रखता था। उसे अपने पूर्वजन्मकी बातोंका स्मरण था। वह महान् भाग्यशाली ऋषिकुमार निरन्तर भगवान् नारायणके भजन-चिन्तनमें ही लगा रहता था। महामति भद्रशील बालोचित्त क्रीड़ाके समय भी मिट्टीसे भगवान् विष्णुकी प्रतिमा बनाकर उसकी पूजा करता और अपने साथियोंको समझाता कि 'मनुष्योंको सदा भगवान् विष्णुकी आराधना करनी चाहिये और विद्वानोंको एकादशी-व्रतका भी पालन करना चाहिये।' मुनीश्वर! भद्रशीलद्वारा इस प्रकार समझाये जानेपर उसके साथी शिशु भी मिट्टीसे भगवान्की प्रतिमा बनाकर एकत्र या अलग-अलग बैठ जाते और प्रसन्नतापूर्वक उसकी पूजा करते थे। इस तरह वे परम सौभाग्यशाली बालक भगवान् विष्णुके भजनमें तत्पर हो गये। भद्रशील भगवान् विष्णुको नमस्कार करके यही प्रार्थना करता था कि 'सम्पूर्ण जगत्का कल्याण हो।' खेलके समय वह दो घड़ी या एक घड़ी भी ध्यानस्थ हो एकादशी-व्रतका संकल्प करके भगवान् विष्णुको समर्पित करता था। अपने पुत्रको इस प्रकार उत्तम चरित्रसे युक्त देखकर तपोनिधि गालव मुनि बड़े विस्मित हुए और उसे हृदयसे लगाकर पूछने लगे।

गालव बोले—उत्तम व्रतका पालन करनेवाले महाभाग भद्रशील! तुम अपने कल्याणमय शील-स्वभावके कारण सचमुच भद्रशील हो। तुम्हारा जो मङ्गलमय चरित्र है, वह योगियोंके लिये भी दुर्लभ है। तुम सदा भगवान्की पूजामें तत्पर, सम्पूर्ण प्राणियोंके हितमें संलग्न तथा एकादशी-व्रतके पालनमें लगे रहनेवाले हो। शास्त्रनिषिद्ध कर्मोंसे तुम सदा दूर रहते हो। तुमपर सुख-दुःख आदि द्वन्द्वोंका प्रभाव नहीं पड़ता। तुममें ममता नहीं दिखायी देती और तुम शान्तभावसे भगवान्के ध्यानमें मग्न रहते हो। बेटा! अभी तुम बहुत छोटे हो तो भी तुम्हारी बुद्धि ऐसी किस प्रकार हुई; क्योंकि महापुरुषोंकी सेवाके बिना भगवान्की भक्ति प्रायः दुर्लभ होती है। इस जीवकी बुद्धि स्वभावतः अज्ञानयुक्त सकाम कर्मोंमें लगती है। तुम्हारी सब क्रिया अलौकिक कैसे हो रही है? सत्संग होनेपर भी पूर्व पुण्यकी अधिकतासे ही मनुष्योंमें भगवद्भक्तिका उदय होता है। अतः तुम्हारी अद्भुत स्थिति देखकर मैं बड़े विस्मयमें पड़ा हूँ और प्रसन्नतापूर्वक इसका कारण पूछता हूँ। अतः तुम्हें यह बताना चाहिये।

मुनिश्रेष्ठ! पिताके द्वारा इस प्रकार पूछे जानेपर पूर्वजन्मका स्मरण रखनेवाला पुण्यात्मा भद्रशील बहुत प्रसन्न हुआ। उसके मुखपर हास्यकी छटा छा गयी। उसने अपने अनुभवमें आयी हुई सब बातें पिताको ठीक-ठीक कह सुनायीं।

भद्रशील बोला—पिताजी! सुनिये। पूर्वजन्ममें मैंने जो कुछ अनुभव किया है, वह जातिस्मर होनेके कारण अब भी जानता हूँ। मुनिश्रेष्ठ! मैं पूर्वजन्ममें चन्द्रवंशी राजा था। मेरा नाम धर्मकीर्ति था और महर्षि दत्तात्रेयने मुझे शिक्षा दी थी। मैंने नौ हजार वर्षोंतक सम्पूर्ण पृथ्वीका पालन किया। पहले मैंने पुण्यकर्म भी बहुत-से किये थे, परंतु पीछे पाखण्डियोंसे बाधित होकर मैंने वैदिकमार्गको त्याग दिया। पाखण्डियोंकी कूट युक्तिका अवलम्बन करके मैंने भी सब यज्ञोंका विध्वंस किया। मुझे अधर्ममें तत्पर देख मेरे देशकी प्रजा भी सदैव पाप-कर्म करने लगी। उसमेंसे छठा अंश और मुझे मिलने लगा। इस प्रकार मैं सदा पापाचारपरायण हो दुर्व्यसनोंमें आसक्त रहने लगा। एक दिन शिकार खेलनेकी रुचिसे मैं सेनासहित एक वनमें गया और वहाँ भूख-प्याससे पीड़ित हो थका-मादा नर्मदाके तटपर आया। सूर्यकी तीखी धूपसे संतप्त होनेके कारण मैंने नर्मदाजीके जलमें स्नान किया। सेना किधर गयी, यह मैंने नहीं देखा। अकेला ही वहाँ भूखसे बहुत कष्ट पा रहा था। संध्याके समय नर्मदा-तटके निवासी, जो एकादशी-

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

व्रत करनेवाले थे, वहाँ एकत्र हुए। उन सबको मैंने देखा। उन्हीं लोगोंके साथ निराहार रहकर बिना सेनाके ही मैं अकेला रातमें वहाँ जागरण करता रहा। और हे तात! जागरण समाप्त होनेपर मेरी वहीं मृत्यु हो गयी। तब बड़ी-बड़ी दाढ़ोंसे भय उत्पन्न करनेवाले यमराजके दूतोंने मुझे बाँध लिया और अनेक प्रकारके क्लेशसे भरे हुए मार्गद्वारा यमराजके निकट पहुँचाया। वहाँ जाकर मैंने यमराजको देखा, जो सबके प्रति समान बर्ताव करनेवाले हैं। तब यमराजने चित्रगुप्तको बुलाकर कहा—'विद्वन्! इसको दण्ड-विधान कैसे करना है, बताओ।' साधुशिरोमणे! धर्मराजके ऐसा कहनेपर चित्रगुप्तने देरतक विचार किया; फिर इस प्रकार कहा—'धर्मराज! यद्यपि यह सदा पापमें लगा रहा है, यह ठीक है, तथापि एक बात सुनिये। एकादशीको उपवास करनेवाला मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। नर्मदाके रमणीय तटपर एकादशीके दिन यह निराहार रहा है। वहाँ जागरण और उपवास करके यह सर्वथा निष्पाप हो गया है। इसने जो कोई भी बहुत-से पाप किये थे, वे सब उपवासके प्रभावसे नष्ट हो चुके हैं।' बुद्धिमान् चित्रगुप्तके ऐसा कहनेपर धर्मराज मेरे सामने काँपने लगे। उन्होंने भूमिपर दण्डकी भाँति पड़कर मुझे साष्टाङ्ग प्रणाम किया और भक्तिभावसे मेरी पूजा की। तदनन्तर धर्मराजने अपने सब दूतोंको बुलाकर इस प्रकार कहा।

धर्मराज बोले—'दूतो! मेरी बात सुनो। मैं तुम्हारे हितकी बड़ी उत्तम बात बतलाता हूँ। धर्ममार्गमें लगे हुए मनुष्योंको मेरे पास न लाया करो। जो भगवान् विष्णुके पूजनमें तत्पर, संयमी, कृतज्ञ, एकादशी-व्रतपरायण तथा जितेन्द्रिय हैं और जो 'हे नारायण! हे अच्युत! हे हरे! मुझे शरण दीजिये' इस प्रकार शान्तभावसे निरन्तर कहते रहते हैं, ऐसे लोगोंको तुम तुरंत छोड़ देना। मेरे दूतो! जो सम्पूर्ण लोकोंके हितैषी तथा परम शान्तभावसे रहनेवाले हैं और जो नारायण! अच्युत! जनार्दन! कृष्ण! विष्णो! कमलाकान्त! ब्रह्माजीके पिता! शिव! शंकर! इत्यादि नामोंका नित्य कीर्तन किया करते हैं, उन्हें दूरसे ही त्याग दिया करो। उनपर मेरा शासन नहीं चलता। मेरे सेवको! जो अपना सम्पूर्ण कर्म भगवान् विष्णुको समर्पित कर देते हैं, उन्हींके भजनमें लगे रहते हैं, अपने वर्णाश्रमोचित आचारके मार्गमें स्थित हैं, गुरुजनोंकी सेवा किया करते हैं, सत्पात्रको दान देते, दीनोंकी रक्षा करते और निरन्तर भगवन्नामके जप-कीर्तनमें संलग्न रहते हैं, उनको भी त्याग देना। दूतगण! जो पाखण्डियोंके संगसे रहित, ब्राह्मणोंके प्रति भक्ति रखनेवाले, सत्संगके लोभी, अतिथि-सत्कारके प्रेमी, भगवान् शिव और विष्णुमें समता रखनेवाले तथा लोगोंके उपकारमें तत्पर हों, उन्हें त्याग देना। मेरे दूतो! जो लोग भगवान्‌की कथारूप अमृतके सेवनसे वञ्चित हैं, भगवान् विष्णुके चिन्तनमें मन लगाये रखनेवाले साधु-महात्माओंसे जो दूर रहते हैं, उन पापियोंको ही मेरे घरपर लाया करो। मेरे किङ्करो! जो माता और पिताको डाँटनेवाले, लोगोंसे द्वेष रखनेवाले, हितैषी-जनोंका भी अहित करनेवाले, देवताकी सम्पत्तिके लोभी, दूसरे लोगोंका नाश करनेवाले तथा सदैव दूसरोंके अपराधमें ही तत्पर रहनेवाले हैं, उनको यहाँ पकड़कर लाओ। मेरे दूतो! जो एकादशी-व्रतसे विमुख, क्रूर स्वभाववाले, लोगोंको कलङ्क लगानेवाले, परनिन्दामें तत्पर, ग्रामका विनाश करनेवाले, श्रेष्ठ पुरुषोंसे वैर रखनेवाले तथा ब्राह्मणके धनका लोभ करनेवाले हैं, उनको यहाँ ले आओ। जो भगवान् विष्णुकी भक्तिसे मुँह मोड़ चुके हैं, शरणागतपालक भगवान् नारायणको प्रणाम नहीं करते हैं तथा जो मूर्ख मनुष्य कभी भगवान् विष्णुके मन्दिरमें नहीं जाते हैं, उन अतिशय पापमें रत रहनेवाले दुष्ट लोगोंको ही

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

तुम बलपूर्वक पकड़कर यहाँ ले आओ।

इस प्रकार जब मैंने यमराजकी कही हुई बातें सुनीं तो पश्चात्तापसे दग्ध होकर अपने किये हुए उस निन्दित कर्मको स्मरण किया। पापकर्मके लिये पश्चात्ताप और श्रेष्ठ धर्मका श्रवण करनेसे मेरे सब पाप वहीं नष्ट हो गये। उसके बाद मैं उस पुण्यकर्मके प्रभावसे इन्द्रलोकमें गया। वहाँपर मैं सब प्रकारके भोगोंसे सम्पन्न रहा। सम्पूर्ण देवता मुझे नमस्कार करते थे। बहुत कालतक स्वर्गमें रहकर फिर वहाँसे मैं भूलोकमें आया। यहाँ भी आप-जैसे विष्णु-भक्तोंके कुलमें मेरा जन्म हुआ। मुनीश्वर! जातिस्मर होनेके कारण मैं यह सब बातें जानता हूँ। इसलिये मैं बालकोंके साथ भगवान् विष्णुके पूजनकी चेष्टा करता हूँ। पूर्वजन्ममें एकादशी-व्रतका ऐसा माहात्म्य है, यह बात मैं नहीं जान सका था। इस समय पूर्वजन्मकी बातोंकी स्मृतिके प्रभावसे मैने एकादशी-व्रतको जान लिया है। पहले विवश होकर भी जो व्रत किया गया था, उसका यह फल मिला है। प्रभो! फिर जो भक्तिपूर्वक एकादशी-व्रत करते हैं, उनको क्या नहीं मिल सकता। अतः विप्रेन्द्र! 'मैं शुभ एकादशी-व्रतका पालन तथा प्रतिदिन भगवान् विष्णुकी पूजा करूँगा। भगवान्के परम धामको पानेकी आकाङ्क्षा ही इसमें हेतु है। जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक एकादशी-व्रत करते हैं, उन्हें निश्चय ही परमानन्ददायक वैकुण्ठधाम प्राप्त होता है।' अपने पुत्रका ऐसा वचन सुनकर गालव मुनि बहुत प्रसन्न हुए। उन्हें बड़ा संतोष प्राप्त हुआ। उनका हृदय अत्यन्त हर्षसे भर गया। वे बोले—'वत्स! मेरा जन्म सफल हो गया। मेरा कुल भी पवित्र हो गया; क्योंकि तुम्हारे-जैसा विष्णुभक्त पुरुष मेरे घरमें पैदा हुआ है।' इस प्रकार पुत्रके उत्तम कर्मसे मन-ही-मन संतुष्ट होकर महर्षि गालवने उसे भगवान्की पूजाका विधान ठीक-ठीक समझाया। मुनिश्रेष्ठ नारद! तुम्हारे प्रश्नके अनुसार मैंने ये सब बातें कुछ विस्तारके साथ तुम्हें बता दी हैं। तुम और क्या सुनना चाहते हो?

चारों वर्णों और द्विजका परिचय तथा विभिन्न वर्णोंके विशेष और सामान्य धर्मका वर्णन

सूतजी कहते हैं—महर्षियो! सनकजीके मुखसे एकादशी-व्रतका यह माहात्म्य जो अप्रमेय, पवित्र, सर्वोत्तम तथा पापराशिको शान्त करनेवाला है, सुनकर ब्रह्मपुत्र नारदजी बड़े प्रसन्न हुए और फिर इस प्रकार बोले।

नारदजीने कहा—महर्षे! आप बड़े तत्त्वज्ञ हैं। आपने भगवान्की भक्ति देनेवाले तथा परम पुण्यमय व्रत-सम्बन्धी इस आख्यानका यथार्थरूपसे पूरा-पूरा वर्णन किया है। मुने! अब मैं चारों वर्णोंके आचारकी विधि और सम्पूर्ण आश्रमोंके आचार तथा प्रायश्चित्तकी विधि सुनना चाहता हूँ। महाभाग! मुझपर बड़ी भारी कृपा करके यह सब मुझे यथार्थरूपसे बताइये।

श्रीसनकजी बोले—मुनिश्रेष्ठ! सुनिये। भक्तोंका प्रिय करनेवाले अविनाशी श्रीहरि वर्णाश्रम-धर्मका पालन करनेवाले पुरुषोंद्वारा जिस प्रकार पूजित होते हैं, वह सब बतलाता हूँ। मनु आदि स्मृतिकारोंने वर्ण और आश्रम-सम्बन्धी धर्मका जैसा वर्णन किया है, वह सब आपको विधिपूर्वक बतलाता हूँ; क्योंकि आप भगवान्के भक्त हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—ये चार ही वर्ण कहे गये हैं। इन सबमें ब्राह्मण श्रेष्ठ है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—ये तीन द्विज कहे गये हैं। पहला जन्म मातासे और दूसरा उपनयन-संस्कारसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होता है। इन्हीं दो कारणोंसे तीनों वर्णोंके लोग द्विजत्व प्राप्त करते हैं। इन वर्णोंके लोगोंको अपने-अपने वर्णके अनुरूप सब धर्मोंका पालन करना चाहिये। अपने वर्णधर्मका त्याग करनेसे विद्वान् पुरुष उसे पाखण्डी कहते हैं। अपनी शाखाके गृह्यसूत्रमें बताये हुए कर्मका अनुष्ठान करनेवाला द्विज कृतकृत्य होता है, अन्यथा वह सब धर्मोंसे बहिष्कृत एवं पतित हो जाता है। इन वर्णोंको यथोचित युगधर्मका धारण करना चाहिये तथा स्मृतिधर्मके विरुद्ध न होनेपर देशाचार भी अवश्य ग्रहण करना चाहिये। मन, वाणी और क्रियाद्वारा यत्नपूर्वक धर्मका पालन करना चाहिये।

द्विजश्रेष्ठ! अब मैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंके सामान्य कर्तव्योंका वर्णन करता हूँ, एकाग्रचित्त होकर सुनो। ब्राह्मण ब्राह्मणोंको दान दे, यज्ञोंद्वारा देवताओंका यजन करे, जीविकाके लिये दूसरोंका यज्ञ करावे तथा दूसरोंको पढ़ावे। जो यज्ञके अधिकारी हों, उन्हींका यज्ञ करावे।

ब्राह्मणको नित्य जलसम्बन्धी क्रिया—स्नान-संध्या और तर्पण करना चाहिये। वह वेदोंका स्वाध्याय तथा अग्निहोत्र करे। सम्पूर्ण लोकोंका हित करे, सदा मीठे वचन बोले और सदा भगवान् विष्णुकी पूजामें तत्पर रहे। द्विजश्रेष्ठ! क्षत्रिय भी ब्राह्मणोंको दान दे। वह भी वेदोंका स्वाध्याय और यज्ञोंद्वारा देवताओंका यजन करे। वह शस्त्रग्रहणके द्वारा जीविका चलावे और धर्मपूर्वक पृथ्वीका पालन करे। दुष्टोंको दण्ड दे और शिष्ट पुरुषोंकी रक्षा करे। द्विजसत्तम! वैश्यके लिये भी वेदोंका अध्ययन आवश्यक बताया गया है। इसके सिवा वह पशुओंका पालन, व्यापार तथा कृषिकर्म करे। सजातीय स्त्रीसे विवाह करे और धर्मोंका भलीभाँति पालन करता रहे। वह क्रय-विक्रय अथवा शिल्पकर्मद्वारा प्राप्त हुए धनसे जीविका चलावे। शूद्र भी ब्राह्मणोंको दान दे, किंतु पाकयज्ञोंद्वारा* यजन न करे। वह ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्योंकी सेवामें तत्पर रहे और अपनी स्त्रीसे ऋतुकालमें सहवास करे।

सब लोगोंका हित चाहना, सबका मङ्गल-साधन करना, प्रिय वचन बोलना, किसीको कष्ट न पहुँचाना, मनको प्रसन्न रखना, सहनशील होना तथा घमंड न करना—यह सब मुनियोंने समस्त वर्णोंका सामान्य धर्म बतलाया है। अपने आश्रमोचित कर्मके पालनसे सब लोग मुनितुल्य हो जाते हैं। ब्रह्मन्! आपत्तिकालमें ब्राह्मण क्षत्रियोचित आचारका आश्रय ले सकता है। इसी प्रकार अत्यन्त आपत्ति आनेपर क्षत्रिय भी वैश्यवृत्तिको ग्रहण कर सकता है; परंतु भारी-से-भारी आपत्ति आनेपर भी ब्राह्मण कभी शूद्रवृत्तिका आश्रय न ले। यदि कोई मूढ़ ब्राह्मण शूद्रवृत्ति ग्रहण करता है तो वह चाण्डालभावको प्राप्त होता है। मुनिश्रेष्ठ! ब्राह्मण,

* तैयार की हुई रसोईसे जो यज्ञ होते हैं, उन्हें 'पाकयज्ञ' कहते हैं। मनुस्मृतिमें चार प्रकारके पाकयज्ञोंका उल्लेख है—वैश्वदेवहोम, बलिकर्म, नित्यश्राद्ध और अतिथि-भोजन।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

क्षत्रिय और वैश्य—इन तीनों वर्णोंके लिये ही चार आश्रम बताये गये हैं। कोई पाँचवाँ आश्रम सिद्ध नहीं होता। साधुशिरोमणे! ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास—ये ही चार आश्रम हैं। विप्रवर! इन्हीं चार आश्रमोंद्वारा उत्तम धर्मका आचरण किया जाता है। जिसका चित्त कर्मयोगमें लगा हुआ है, उसपर भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं। जिनके मनमें कोई कामना नहीं है, जिनका चित्त शान्त है तथा जो अपने वर्ण-आश्रमोचित कर्तव्यके पालनमें लगे रहते हैं, वे उस परम धामको प्राप्त होते हैं, जहाँसे पुनः इस संसारमें लौटकर आना नहीं पड़ता।

संस्कारोंके नियत काल, ब्रह्मचारीके धर्म, अनध्याय तथा वेदाध्ययनकी आवश्यकताका वर्णन

श्रीसनकजी कहते हैं—मुनिश्रेष्ठ! अब मैं विशेष-रूपसे वर्ण और आश्रम-सम्बन्धी आचार और विधिका वर्णन करता हूँ, तुम सावधान होकर सुनो। जो स्वधर्मका त्याग करके परधर्मका पालन करता है, उसे पाखण्डी समझना चाहिये। द्विजोंके गर्भाधान आदि संस्कार वैदिक मन्त्रोक्त विधिसे करने चाहिये। स्त्रियोंके संस्कार यथासमय बिना मन्त्रके ही विधिपूर्वक करने चाहिये। प्रथम बार गर्भाधान होनेपर चौथे मासमें सीमन्तकर्म करना उत्तम माना गया है अथवा उसे छठे, सातवें या आठवें महीनेमें कराना चाहिये। पुत्रका जन्म होनेपर पिता वस्त्रसहित स्नान करके स्वस्तिवाचनपूर्वक नान्दीश्राद्ध तथा जातकर्म-संस्कार करे। पुत्र-जन्मके अवसरपर किया जानेवाला वृद्धिश्राद्ध सुवर्ण या रजतसे करना चाहिये। सूतक व्यतीत होनेपर पिता मौन होकर आभ्युदयिक श्राद्ध करनेके अनन्तर पुत्रका विधिपूर्वक नामकरण-संस्कार करे। विप्रवर! जो स्पष्ट न हो, जिसका कोई अर्थ न बनता हो, जिसमें अधिक गुरु अक्षर आते हों अथवा जिसमें अक्षरोंकी संख्या विषम होती हो, ऐसा नाम न रखे। तीसरे वर्षमें चूड़ा-संस्कार उत्तम है। यदि उस समय न हो तो पाँचवें, छठे, सातवें अथवा आठवें वर्षमें भी गृह्यसूत्रमें बतायी हुई विधिके अनुसार उसे सम्पन्न कर लेना चाहिये। गर्भसे आठवें वर्षमें अथवा जन्मसे आठवें वर्षमें ब्राह्मणका उपनयन-संस्कार करना चाहिये। विद्वान् पुरुष सोलहवें वर्षतक उपनयनका गौणकाल बतलाते हैं।

गर्भसे ग्यारहवें वर्षमें क्षत्रियके उपनयनका मुख्यकाल है। उसके लिये बाईसवें वर्षतक गौणकाल निश्चित करते हैं। गर्भसे बारहवें वर्षमें वैश्यका उपनयन-संस्कार उचित कहा गया है। उसके लिये चौबीसवें वर्षतक गौणकाल बतलाते हैं। ब्राह्मणकी मेखला मूँजकी और क्षत्रियकी मेखला धनुषकी प्रत्यञ्चासे बनी हुई (सूतकी) तथा वैश्यकी मेखला भेड़के ऊनकी बनी होती है। ब्राह्मणके लिये पलाशका और क्षत्रियके लिये गूलरका तथा वैश्यके लिये बिल्वदण्ड विहित है। ब्राह्मणका दण्ड केशतक, क्षत्रियका ललाटके बराबर और वैश्यके दण्डकी लंबाई नासिकाके अग्रभागतककी बतायी है। ब्राह्मण आदि ब्रह्मचारियोंके लिये क्रमशः गेरुए, लाल और पीले रंगका वस्त्र बताया गया है। विप्रवर! जिसका उपनयन-संस्कार किया गया हो, वह द्विज गुरुकी सेवामें तत्पर रहे और जबतक वेदाध्ययन समाप्त न हो जाय, तबतक गुरुके ही घरमें निवास करे। मुनीश्वर! ब्रह्मचारी प्रातःकाल स्नान करे और प्रतिदिन सबेरे ही गुरुके लिये समिधा, कुशा और फल आदि ले आवे। मुनिश्रेष्ठ! यज्ञोपवीत, मृगचर्म अथवा दण्ड जब नष्ट या अपवित्र हो

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जाय तो मन्त्रसे नूतन यज्ञोपवीत आदि धारण करके नष्ट-भ्रष्ट हुए पुराने यज्ञोपवीत आदिको जलमें फेंक दे। ब्रह्मचारीके लिये केवल भिक्षाके अन्नसे ही जीवन-निर्वाह करना बताया गया है। वह मन-इन्द्रियोंको संयममें रखकर श्रोत्रिय पुरुषके घरसे भिक्षा ले आवे। भिक्षा माँगते समय ब्राह्मण वाक्यके आदिमें, क्षत्रिय वाक्यके मध्यमें और वैश्य वाक्यके अन्तमें '**भवत्**' शब्दका प्रयोग करे। जैसे—ब्राह्मण '**भवति! भिक्षां मे देहि**' (पूजनीय देवि! मुझे भिक्षा दीजिये), क्षत्रिय '**भिक्षां भवति! मे देहि**' और वैश्य '**भिक्षां मे देहि भवति**' कहे। जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी प्रतिदिन सायंकाल और प्रातःकाल शास्त्रीय विधिके अनुसार अग्निहोत्र (ब्रह्मयज्ञ) तथा तर्पण करे। जो अग्निहोत्रका परित्याग करता है, उसे विद्वान् पुरुष पतित कहते हैं। ब्रह्मयज्ञसे रहित ब्रह्मचारी ब्रह्महत्यारा कहा गया है। वह प्रतिदिन देवताकी पूजा और गुरुकी उत्तम सेवा करे। ब्रह्मचारी नित्यप्रति भिक्षाका ही अन्न भोजन करे। किसी एक घरका अन्न कभी न खाय। वह इन्द्रियोंको वशमें रखते हुए श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके घरसे भिक्षा लाकर गुरुको समर्पित कर दे और उनकी आज्ञासे मौन होकर भोजन करे। ब्रह्मचारी मधु, मांस, स्त्री, नमक, पान, दन्तधावन, उच्छिष्ट-भोजन, दिनका सोना तथा छाता लगाना आदि न करे। पादुका, चन्दन, माला, अनुलेपन, जलक्रीड़ा, नृत्य, गीत, वाद्य, परनिन्दा, दूसरोंको सताना, बहकी-बहकी बातें करना, अंजन लगाना, पाखण्डी लोगोंका साथ करना और शूद्रोंकी संगतिमें रहना आदि न करे।

वृद्ध पुरुषोंको क्रमशः प्रणाम करे। वृद्ध तीन प्रकारके होते हैं। एक ज्ञानवृद्ध, दूसरे तपोवृद्ध और तीसरे वयोवृद्ध हैं। जो गुरु वेद-शास्त्रोंके उपदेशसे आध्यात्मिक आदि दुःखोंका निवारण करते हैं, उन्हें पहले प्रणाम करे। प्रणाम करते समय द्विज बालक 'मैं अमुक हूँ, इस प्रकार अपना परिचय भी दे। ब्राह्मण किसी प्रकार क्षत्रिय आदिको प्रणाम न करे। जो नास्तिक, धर्ममर्यादाको तोड़नेवाला, कृतघ्न, ग्राम-पुरोहित, चोर और शठ हो, उसे ब्राह्मण होनेपर भी प्रणाम न करे। पाखण्डी, पतित, संस्कार-भ्रष्ट, नक्षत्रजीवी (ज्यौतिषी) तथा पातकीको भी प्रणाम न करे। पागल, शठ, धूर्त, दौड़ते हुए, अपवित्र, सिरमें तेल लगाये हुए तथा मन्त्र-जप करते हुए पुरुषको भी प्रणाम नहीं करना चाहिये। जो झगड़ालू और क्रोधी हो, वमन कर रहा हो, पानीमें खड़ा हो, हाथमें भिक्षाका अन्न लिये हो और सो रहा हो, उसको भी प्रणाम न करे। स्त्रियोंमें जो पतिकी हत्या करनेवाली, रजस्वला, परपुरुषसे सम्बन्ध रखनेवाली, सूतिका, गर्भपात करनेवाली, कृतघ्न और क्रोधिनी हो, उसे कभी प्रणाम न करे। सभा, यज्ञशाला और देवमन्दिरमें भी एक-एक व्यक्तिके लिये किया जानेवाला नमस्कार पूर्वकृत पुण्यका नाश करता है। श्राद्ध, व्रत, दान, देवपूजा, यज्ञ और तर्पण करते हुए पुरुषको प्रणाम न करे; क्योंकि प्रणाम करनेपर जो शास्त्रीय विधिसे आशीर्वाद न दे सके, वह प्रणाम करने योग्य नहीं। बुद्धिमान् शिष्य दोनों पैर धोकर आचमन करके सदा गुरुके सामने बैठे और उनके चरण पकड़कर नमस्कार करे। फिर अध्ययन करे। अष्टमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, अमावास्या, पूर्णिमा, महाभरणी (भरणी-नक्षत्रके योगसे होनेवाले पर्वविशेष) श्रवणयुक्त द्वादशी, पितृपक्षकी द्वितीया, माघशुक्ला सप्तमी, आश्विन शुक्ला नवमी—इन तिथियोंमें तथा सूर्यके चारों ओर घेरा लगनेपर एवं किसी श्रोत्रिय विद्वान्के अपने यहाँ पधारनेपर अध्ययन बंद रखना चाहिये। जिस दिन किसी श्रेष्ठ ब्राह्मणका स्वागत-सत्कार किया गया हो या किसीके साथ कलह बढ़ गया हो, उस दिन भी अनध्याय रखना चाहिये। देवर्षे!

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

संध्याके समय, अकालमें मेघकी गर्जना होनेपर, असमयमें वर्षा होनेपर, उल्कापात तथा वज्रपात होनेपर, अपने द्वारा किसी ब्राह्मणका अपमान हो जानेपर, मन्वादि तिथियोंके आनेपर तथा युगादि चार तिथियोंके उपस्थित होनेपर सब कर्मोंके फलकी इच्छा रखनेवाला कोई भी द्विज अध्ययन न करे। वैशाख शुक्ला तृतीया, भाद्र कृष्णा त्रयोदशी, कार्तिक शुक्ला नवमी तथा माघकी पूर्णिमा—ये तिथियाँ युगादि कही गयी हैं। इनमें जो दान दिया जाता है, उसके पुण्यको ये अक्षय बनानेवाली हैं[१]। नारदजी! आश्विन शुक्ला नवमी, कार्तिक शुक्ला द्वादशी, चैत्र तथा भाद्रपदमासकी तृतीया, आषाढ़ शुक्ला दशमी, माघ शुक्ला सप्तमी, श्रावण कृष्णा अष्टमी, आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा, फाल्गुनकी अमावास्या, पौष शुक्ला एकादशी तथा कार्तिक, फाल्गुन, चैत्र और ज्येष्ठकी पूर्णिमा तिथियाँ—ये मन्वन्तरकी आदितिथियाँ बतायी गयी हैं, जो दानके पुण्यको अक्षय बनानेवाली हैं[२]। द्विजोंको मन्वादि और युगादि तिथियोंमें श्राद्ध करना चाहिये। श्राद्धका निमन्त्रण हो जानेपर, चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहणके दिन, उत्तरायण और दक्षिणायन प्रारम्भ होनेके दिन, भूकम्प होनेपर, गलग्रहमें और बादलोंके आनेसे अँधेरा हो जानेपर कभी अध्ययन न करे। नारदजी! इन सब अनध्यायोंमें जो अध्ययन करते हैं, उन मूढ़ पुरुषोंकी संतति, बुद्धि, यश, लक्ष्मी, आयु, बल तथा आरोग्यका साक्षात् यमराज नाश करते हैं। जो अनध्यायकालमें अध्ययन करता है, उसे ब्रह्म-हत्यारा समझना चाहिये। जो ब्राह्मण वेद-शास्त्रोंका अध्ययन न करके अन्य कर्मोंमें परिश्रम करता है, उसे शूद्रके तुल्य जानना चाहिये, वह नरकका प्रिय अतिथि है। वेदाध्ययनरहित ब्राह्मणके नित्य, नैमित्तिक, काम्य तथा दूसरे जो वैदिककर्म हैं, वे सब निष्फल होते हैं। भगवान् विष्णु शब्द-ब्रह्ममय हैं और वेद साक्षात् श्रीहरिका स्वरूप माना गया है। जो ब्राह्मण वेदोंका अध्ययन करता है, वह सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त कर लेता है।

---

१. तृतीया माधवे शुक्ला भाद्रे कृष्णा त्रयोदशी। कार्तिके नवमी शुद्धा माघे पञ्चदशी तिथिः॥
एता युगाद्याः कथिता दत्तस्याक्षयकारिकाः। (ना० पूर्व० २५। ५०-५१)

स्कन्दपुराणके अनुसार भिन्न-भिन्न युगकी आदितिथि इस प्रकार हैं—कार्तिक शुक्ला नवमी सत्ययुगकी, वैशाख शुक्ला तृतीया त्रेतायुगकी, माघकी पूर्णिमा द्वापरकी और भाद्रपद कृष्णा त्रयोदशी कलियुगकी आदितिथि है।

२. अश्वयुक्शुक्लनवमी कार्तिके द्वादशी सिता। तृतीया चैत्रमासस्य तथा भाद्रपदस्य च॥
आषाढशुक्लदशमी सिता माघस्य सप्तमी। श्रावणस्याष्टमी कृष्णा तथाषाढी च पूर्णिमा॥
फाल्गुनस्य त्वमावास्या पौषस्यैकादशी सिता। कार्तिकी फाल्गुनी चैत्री ज्यैष्ठी पञ्चदशी सिता॥
मन्वादयः समाख्याता दत्तस्याक्षयकारिकाः। (ना० पूर्व० २५। ५१—५५)

स्कन्दपुराणमें भी मन्वादि तिथियोंका पाठ ऐसा ही है। केवल श्लोकोंके क्रममें थोड़ा अन्तर है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विवाहके योग्य कन्या, विवाहके आठ भेद तथा गृहस्थोचित शिष्टाचारका वर्णन

श्रीसनकजी कहते हैं—नारदजी! वेदाध्ययन-कालतक ब्रह्मचारी निरन्तर गुरुकी सेवामें लगा रहे, उसके बाद उनकी आज्ञा लेकर अग्निपरिग्रह (गार्हपत्य-अग्निकी स्थापना) करे। द्विज वेद, शास्त्र और वेदाङ्गोंका अध्ययन करके गुरुको दक्षिणा देकर अपने घर जाय। वहाँ उत्तम कुलमें उत्पन्न, रूप और लावण्यसे युक्त, सद्गुणवती तथा सुशीला और धर्मपरायणा कन्याके साथ विवाह करे। जो कन्या रोगिणी हो अथवा किसी विशेष रोगसे युक्त कुलमें उत्पन्न हुई हो, जिसके केश बहुत अधिक या कम हों, जो सर्वथा केशरहित हो और बहुत बोलनेवाली हो, उससे विद्वान् पुरुष विवाह न करे। जो क्रोध करनेवाली, बहुत नाटी, बहुत बड़े शरीरवाली, कुरूपा, किसी अङ्गसे हीन या अधिक अङ्गवाली, उन्मादिनी और चुगली करनेवाली हो तथा जो कुबड़ी हो, उससे भी विवाह न करे। जो सदा दूसरेके घरमें रहती हो, झगड़ालू हो, जिसकी मति भ्रान्त हो तथा जो निष्ठुर स्वभावकी हो, जो बहुत खानेवाली हो, जिसके दाँत और ओठ मोटे हों, जिसकी नाकसे घुर्घुराहटकी आवाज होती हो और जो धूर्त हो, उससे विद्वान् पुरुष विवाह न करे। जो सदा रोनेवाली हो, जिसके शरीरकी आभा श्वेत रंगकी हो, जो निन्दित, खाँसी और दमे आदिके रोगसे पीड़ित तथा अधिक सोनेवाली हो, जो अनर्थकारी वचन बोलती हो, लोगोंसे द्वेष रखती हो और चोरी करती हो, उससे विद्वान् पुरुष विवाह न करे। जिसकी नाक बड़ी हो, जो छल-कपट करनेवाली हो, जिसके शरीरमें अधिक रोएँ बढ़ गये हों तथा जो बहुत घमंडी और बगुलावृत्तिवाली (ऊपरसे साधु और भीतरसे दुष्ट हो), उससे भी विद्वान् पुरुष विवाह न करे।

मुनिश्रेष्ठ! ब्राह्म आदि आठ प्रकारके विवाह होते हैं, यह जानना चाहिये। इनमें पहला-पहला श्रेष्ठ है। पहलेवालेके अभावमें दूसरा श्रेष्ठ एवं ग्राह्य माना गया है। ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस तथा आठवाँ पैशाच विवाह है। श्रेष्ठ द्विजको ब्राह्मविवाहकी विधिसे विवाह करना चाहिये। अथवा दैवविवाहकी रीतिसे भी विवाह किया जा सकता है। कोई-कोई आर्ष-विवाहको भी श्रेष्ठ बतलाते हैं। ब्रह्मन्! शेष प्राजापत्य आदि पाँच विवाह निन्दित हैं।

(अब गृहस्थ पुरुषका शिष्टाचार बताया जाता है—) दो यज्ञोपवीत तथा एक चादर धारण करे। कानोंमें सोनेके दो कुण्डल पहने। धोती दो रखे। सिरके बाल और नख कटाता रहे। पवित्रतापूर्वक रहे। स्वच्छ पगड़ी, छाता तथा चरणपादुका धारण करे। वेष ऐसा रखे जो देखनेमें प्रिय लगे। प्रतिदिन वेदोंका स्वाध्याय करे। शास्त्रोक्त आचारका पालन करे। दूसरोंका अन्न न खाय। दूसरोंकी निन्दा छोड़ दे। पैरसे पैरको न दबाये, जूठी चीजको न लाँघे। दोनों हाथोंसे अपना सिर न खुजलाये। पूज्य पुरुष तथा देवालयको बायें करके न चले। देवपूजा, स्वाध्याय, आचमन, स्नान, व्रत तथा श्राद्धकर्म आदिमें शिखाको खुली न रखे और एक वस्त्र धारण करके न रहे। गदहे आदिकी सवारी न करे। सूखा वाद-विवाद त्याग दे। परायी स्त्रीके पास कभी न जाय। ब्रह्मन्! गौ, पीपल तथा अग्निको भी अपनेसे बायें करके न जाय। इसी प्रकार चौराहेको, देववृक्षको, देवसम्बन्धी कुण्ड या सरोवरको तथा राजाको भी अपनेसे बायें करके न चले। दूसरोंके दोष देखना, डाह रखना और दिनमें सोना छोड़ दे। दूसरोंके पाप न कहे। अपना पुण्य प्रकट न करे। अपने

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

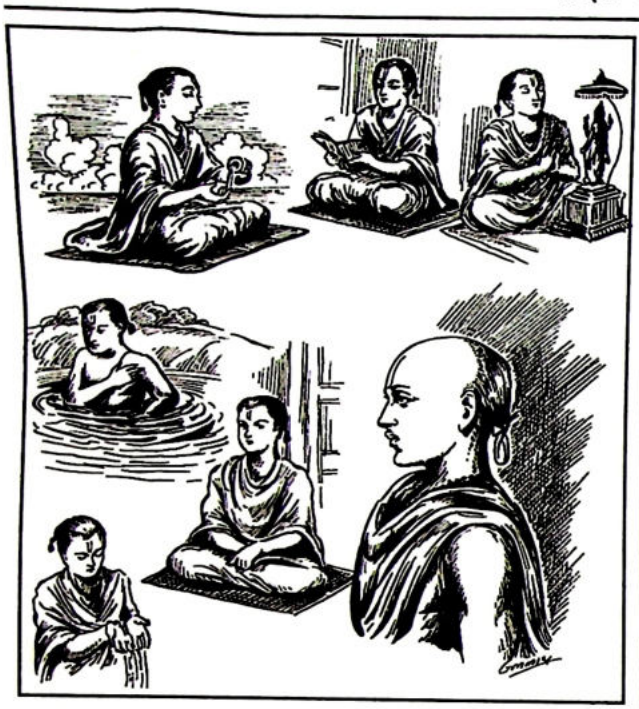

नामको, जन्म-नक्षत्रको तथा मानको अत्यन्त गुप्त रखे। दुष्टोंके साथ निवास न करे। अशास्त्रीय बात न सुने। द्विजको मद्य, जूआ तथा गीतमें कभी आसक्ति नहीं रखनी चाहिये। गीली हड्डी, जूठी वस्तु, पतित तथा मुर्दा और कुत्तेको छूकर मनुष्य वस्त्रसहित स्नान कर ले। चिता, चिताकी लकड़ी, यूप, चाण्डालका स्पर्श कर लेनेपर मनुष्य वस्त्रसहित जलमें प्रवेश करे। दीपककी, खाटकी और शरीरकी छाया, केशका, वस्त्रका और चटाईका जल तथा बकरीके, झाड़ूके और बिल्लीके नीचेकी धूल—ये सब शुभ प्रारब्धको हर लेते हैं। सूपकी हवा, प्रेतके दाहका धुआँ, शूद्रके अन्नका भोजन तथा वृषलीके पतिका साथ दूरसे ही त्याग दे। असत् शास्त्रोंके अर्थका विचार, नख और केशोंका दाँतोंसे चबाना तथा नंगे होकर सोना सर्वदा छोड़ दे। सिरमें लगानेसे बचे हुए तेलको शरीरमें न लगावे। अपवित्र ताम्बूल (बाजारके लगाये हुए पान) न खाय तथा सोतेको न जगाये। अशुद्ध हुआ मनुष्य अग्निकी सेवा, देवताओं और गुरुजनोंका पूजन न करे। बायें हाथसे अथवा केवल मुखसे जल न पीये। मुनीश्वर! गुरुकी छायापर पैर न रखे। उनकी आज्ञा भी न टाले। योगी, ब्राह्मण और यति पुरुषोंकी कभी निन्दा न करे। द्विजको चाहिये कि वह आपसकी गुप्त (रहस्य)-की बातें कभी न कहे। अमावास्या तथा पूर्णिमाको विधिपूर्वक याग करे। द्विजोंको सुबह-शाम उपासना और होम अवश्य करने चाहिये। जो उपासनाका परित्याग करता है, उसे विद्वान् पुरुष 'शराबी' कहते हैं। अयन आरम्भ होनेके दिन, विषुवयोगमें (जब दिन-रात बराबर होते हैं), चार युगादि तिथियोंमें, अमावास्याको और प्रेतपक्षमें गृहस्थ द्विजको अवश्य श्राद्ध करना चाहिये। नारदजी! मन्वादि तिथियोंमें, मृत्युकी तिथिको, तीनों अष्टकाओंमें तथा नूतन अन्न घरमें आनेपर गृहस्थ पुरुष अवश्य श्राद्ध करे। कोई श्रोत्रिय ब्राह्मण घरपर आ जाय या चन्द्रमा और सूर्यका ग्रहण लगा हो अथवा पुण्यक्षेत्र एवं तीर्थमें पहुँच जाय तो गृहस्थ पुरुष निश्चय ही श्राद्ध करे। जो उपर्युक्त सदाचारमें तत्पर हैं, उनपर भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं। द्विजश्रेष्ठ! भगवान् विष्णुके प्रसन्न हो जानेपर क्या असाध्य रह जाता है?

गृहस्थ-सम्बन्धी शौचाचार, स्नान, संध्योपासन आदि तथा वानप्रस्थ और संन्यास-आश्रमके धर्म

श्रीसनकजी कहते हैं—मुनिश्रेष्ठ! अब मैं गृहस्थका सदाचार बतलाता हूँ, सुनो। उन सदाचारोंके पालन करनेवाले पुरुषोंके सब पाप नष्ट हो जाते हैं, इसमें संशय नहीं है। ब्रह्मन्! गृहस्थ पुरुष ब्राह्ममुहूर्त (सूर्योदयसे पूर्वकी चार घड़ी)-में उठकर जो पुरुषार्थ (मोक्ष) साधनकी विरोधिनी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

न हो, ऐसी जीविकाका चिन्तन करे। दिनमें या संध्याके समय कानपर जनेऊ चढ़ाकर उत्तरकी ओर मुँह करके मल-मूत्रका त्याग करना चाहिये। यदि रातमें इसका अवसर आवे तो दक्षिणकी ओर मुँह करके बैठना चाहिये। द्विज सिरको वस्त्रसे ढककर और भूमिपर तृण बिछाकर शौचके लिये बैठे और उसके होनेतक मौन रहे। मार्गमें, गोशालामें, नदीके तटपर, पोखरे और घरके समीप, पेड़की छायामें, दुर्गम स्थानमें, अग्निके समीप, देवालयके निकट, बगीचेमें, जोते हुए खेतमें, चौराहेपर; ब्राह्मण, गाय, गुरुजन तथा स्त्रियोंके समीप; भूसी, अंगार, खप्पर या खोपड़ीमें तथा जलके भीतर—इत्यादि स्थानोंमें मल-मूत्र न करे। शौच (शुद्धि)-के लिये सदा यत्न करना चाहिये। शौच ही द्विजत्वका मूल है। जो शौचाचारसे रहित है उसके सब कर्म निष्फल होते हैं*। शौच दो प्रकारका कहा गया है—एक बाह्य शौच और दूसरा आभ्यन्तर-शौच। मिट्टी और जलसे जो ऊपर-ऊपरकी शुद्धि की जाती है, वही बाह्य-शौच है और भीतरके भावोंकी जो पवित्रता है उसे ही आभ्यन्तर-शौच कहा गया है। मलत्यागके पश्चात् उठकर शुद्धिके लिये मिट्टी लावे। चूहे आदिकी खोदी हुई, फारसे उलाटी हुई तथा बावड़ी, कुँआ और पोखरेसे निकाली हुई मिट्टी शौचके लिये न लावे। अच्छी मिट्टी लेकर यत्नसे शुद्धिका सम्पादन करे। लिङ्गमें एक बार या तीन बार मिट्टी लगाकर धोये और अण्डकोषोंमें दो बार मिट्टी लगाकर जलसे धोये। मनीषी पुरुषोंने मूत्रत्यागके पश्चात् इस प्रकार शुद्धिका विधान किया है। लिङ्गमें एक बार, गुदाद्वारमें पाँच बार, बायें हाथमें दस बार, फिर दोनों हाथोंमें सात बार तथा दोनों पैरोंमें तीन बार पृथक् मिट्टी लगानी और धोनी चाहिये। यह मल-त्यागके पश्चात् उसके लेप और दुर्गन्धको दूर करनेके लिये शुद्धिका विधान किया गया है। ब्रह्मचारियोंके लिये इससे दुगुने शौचका विधान है। वानप्रस्थियोंके लिये तिगुना और संन्यासियोंके लिये गृहस्थकी अपेक्षा चौगुना शौच बताया गया है। मुनिश्रेष्ठ! कहीं रास्तेमें हो तो आधा ही पालन करे। रोगीके लिये या बड़ी भारी विपत्ति पड़नेपर भी नियमका बन्धन नहीं रहता। स्त्रियों और उपनयनरहित द्विजकुमारोंके लिये भी लेप और दुर्गन्ध दूर होनेतक ही शौचकी सीमा है। उसके बाद किसी श्रेष्ठ वृक्षकी छिलकेसहित लकड़ी लेकर उससे दाँतुन करे। बेल, असना, अपामार्ग (ऊँगा या चिरचिरा) नीम, आम और अर्क आदि वृक्षोंका दाँतुन होना चाहिये। पहले उसे जलसे धोकर निम्नाङ्कित मन्त्रसे अभिमन्त्रित करे—

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनि च।
ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते॥

(ना० पूर्व० २७। २५)

'वनस्पते! तुम हमें आयु, यश, बल, तेज, प्रजा, पशु, धन, वेद, बुद्धि तथा धारणाशक्ति प्रदान करो।'

कनिष्ठिकाके अग्रभागके समान मोटा और दस अंगुल लंबा दाँतुन ब्राह्मण करे। क्षत्रिय नौ अंगुल, वैश्य आठ अंगुल, शूद्र और स्त्रियोंको चार अंगुलका दाँतुन करना चाहिये। दाँतुन न मिलनेपर बारह कुल्लोंसे मुख शुद्धि कर लेनी चाहिये। उसके बाद नदी आदिके निर्मल जलमें स्नान करे। वहाँ तीर्थोंको प्रणाम करके सूर्यमण्डलमें भगवान् नारायणका आवाहन करे। फिर गन्ध आदिसे मण्डल बनाकर उन्हीं भगवान् जनार्दनका ध्यान करे। नारदजी! तदनन्तर पवित्र मन्त्रों और

* शौचे यत्नः सदा कार्यः शौचमूलो द्विजः स्मृतः। शौचाचारविहीनस्य समस्तं कर्म निष्फलम्॥

(ना० पूर्व० २७। ८)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

तीर्थोंका स्मरण करते हुए स्नान करना चाहिये—

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरु॥
पुष्कराद्यानि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा।
आगच्छन्तु महाभागाः स्नानकाले सदा मम॥
अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची ह्यवन्तिका।
पुरी द्वारावती ज्ञेयाः सप्तैता मोक्षदायिकाः॥

(ना० पूर्व० २७। ३३—३५)

'गङ्गा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु तथा कावेरी नामवाली नदियाँ इस जलमें निवास करें। पुष्कर आदि तीर्थ और गङ्गा आदि परम सौभाग्यवती नदियाँ सदा मेरे स्नानकालमें यहाँ पधारें। अयोध्या, मथुरा, हरद्वार, काशी, काञ्ची, अवन्ती (उज्जैन) और द्वारकापुरी—इन सातोंको मोक्षदायिनी समझना चाहिये।'

तदनन्तर श्वासको रोके हुए पानीमें डुबकी लगावे और अघमर्षण सूक्तका जप करे। फिर स्नानाङ्ग-तर्पण करके आचमनके पश्चात् सूर्यदेवको अर्घ्य दे। नारदजी! उसके बाद सूर्यभगवान्‌का ध्यान करके जलसे बाहर निकलकर बिना फटा हुआ शुद्ध धौतवस्त्र धारण करे। ऊपरसे दूसरा वस्त्र (चादर) भी ओढ़ ले। तत्पश्चात् कुशासनपर बैठकर संध्याकर्म प्रारम्भ करे। ब्रह्मन्! ईशानकोणकी ओर मुख करके गायत्री-मन्त्रसे आचमन करे, फिर '**ऋतञ्च**' इत्यादि मन्त्रका उच्चारण करके विद्वान् पुरुष दुबारा आचमन करे। तदनन्तर अपने चारों ओर जल छिड़कर अपने-आपको उस जलसे आवेष्टित करे। अपने शरीरपर भी जल सींचे। फिर प्राणायामका संकल्प लेकर प्रणवका उच्चारण करनेके बाद प्रणवसहित सातों व्याहृतियोंके तथा गायत्री-मन्त्रके ऋषि, छन्द और देवताओंका स्मरण[1] करते हुए (विनियोग करते हुए) भूः आदि सात व्याहृतियोंद्वारा मस्तकपर जलसे अभिषेक करे। तत्पश्चात् मन्त्रज्ञ पुरुष पृथक्-पृथक् करन्यास और अङ्गन्यास करे। पहले हृदयमें प्रणवका न्यास करके मस्तकपर भूःका न्यास करे। फिर शिखामें भुवःका, कवचमें स्वःका, नेत्रोंमें भूर्भुवःका तथा दिशाओंमें भूर्भुवः स्वः—इन तीनों व्याहृतियोंका और अस्त्रका न्यास करे। तीन बार हथेलीपर ताल देना ही अस्त्रन्यास है[2]। तदनन्तर प्रातःकाल

१. ॐकारसहित व्याहृतियोंका, गायत्री-मन्त्रका तथा शिरोमन्त्रका विनियोग या उनके ऋषि, छन्द और देवताओंका स्मरण इस प्रकार है—

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्दैवी गायत्री छन्दः परमात्मा देवता, सप्तव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहती-पङ्क्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता, आपो ज्योतिरिति शिरसः प्रजापतिर्ऋषिर्यजुश्छन्दो ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवताः प्राणायामे विनियोगः।

२.आधुनिक संध्याकी प्रतियोंमें न्यासकी विधि सूर्योपस्थानके बाद दी हुई है। परंतु नारदपुराणके अनुसार प्राणायामके पहले तथा जपके पहले भी न्यास करना चाहिये। मूलमें करन्यास और अङ्गन्यास दोनोंकी चर्चा की गयी है। पर विधि केवल अङ्गन्यासकी ही दी गयी है। जिसका प्रयोग इस प्रकार होता है—

ॐ हृदयाय नमः। ॐ भूः शिरसे स्वाहा। ॐ भुवः शिखायै वषट्। ॐ स्वः कवचाय हुम्। ॐ भूर्भुवः नेत्राभ्यां वौषट्। ॐ भूर्भुवः स्वः अस्त्राय फट्।

उपर्युक्त छः मन्त्रवाक्य अङ्गन्यासके हैं। इनमेंसे पहले वाक्यका उच्चारण करके दाहिने हाथकी हथेलीसे हृदयका स्पर्श करे। दूसरे वाक्यको पढ़कर अँगूठेसे मस्तकका स्पर्श करना चाहिये। तीसरे वाक्यका उच्चारण करके अंगुलियोंके अग्रभागसे शिखाका स्पर्श करे। चतुर्थ वाक्य पढ़कर दाहिने हाथकी अंगुलियोंसे बायीं भुजाका और बायें हाथकी अंगुलियोंसे दाहिनी भुजाका स्पर्श करे। पञ्चम वाक्यसे अनामिका और अङ्गुष्ठद्वारा दोनों नेत्रोंका स्पर्श करना चाहिये। छठा वाक्य बोलकर दाहिने हाथको बायीं ओरसे पीछेकी ओर ले जाकर दाहिने ओरसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कमलके आसनपर विराजमान संध्या (गायत्री)-देवीका आवाहन करे।

सबको वर देनेवाली तीन अक्षरोंसे युक्त ब्रह्मवादिनी गायत्रीदेवी! तुम वेदोंकी माता तथा ब्रह्मयोनि हो! तुम्हें नमस्कार है[१]। मध्याह्नकालमें वृषभपर आरूढ़ हुई, श्वेतवस्त्रसमावृत सावित्रीका आवाहन करे। जो रुद्रयोनि तथा रुद्रवादिनी है[२]। सायंकालके समय गरुड़पर चढ़ी हुई पीताम्बरसे आच्छादित विष्णुयोनि एवं विष्णुवादिनी सरस्वतीदेवीका आवाहन करना चाहिये[३]। प्रणव, सात व्याहृति, त्रिपदा गायत्री तथा शिरःशिखा मन्त्र—इन सबका उच्चारण करते हुए क्रमशः पूरक, कुम्भक और विरेचन करे। प्राणायाममें बायीं नासिकाके छिद्रसे वायुको धीरे-धीरे अपने भीतर भरना चाहिये। फिर क्रमशः कुम्भक करके विरेचनद्वारा उसे बाहर निकालना चाहिये।[४] तत्पश्चात् प्रातःकालकी संध्यामें **'सूर्यश्च मा'** इत्यादि मन्त्र पढ़कर दो बार आचमन करे। मध्याह्नकालमें **'आपः पुनन्तु'** इत्यादिसे और सायं संध्यामें **'अग्निश्च मा'** इत्यादि मन्त्रसे आचमन करना चाहिये। इसके बाद **'आपो हि ष्ठा मयो भुवः'** इत्यादि तीन ऋचाओंद्वारा मार्जन करे। फिर—

आगेकी ओर ले आवे। तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियोंसे बायें हाथकी हथेलीपर ताली बजावे। अङ्गन्याससे पहले करन्यास करना चाहिये। करन्यास-वाक्य इस प्रकार हो सकते हैं—

ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ भूः तर्जनीभ्यां नमः। ॐ भुवः मध्यमाभ्यां नमः। ॐ स्वः अनामिकाभ्यां नमः। ॐ भूर्भुवः कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ भूर्भुवः स्वः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

इनमें प्रथम वाक्य बोलकर दोनों तर्जनीसे दोनों अङ्गुष्ठोंका, द्वितीय वाक्य बोलकर दोनों अङ्गुष्ठोंसे दोनों तर्जनीका, तृतीय वाक्यसे अङ्गुष्ठोंद्वारा ही दोनों मध्यमाओंका, चतुर्थ वाक्यसे दोनों अनामिकाओंका, पञ्चम वाक्यसे दोनों कनिष्ठिकाओंका और छठे वाक्यसे दोनों हथेलियों तथा उनके पृष्ठभागोंका परस्पर स्पर्श करना चाहिये।

१. आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि। गायत्रिच्छन्दसां मातर्ब्रह्मयोने नमोऽस्तु ते॥
(ना० पूर्व० २७। ४३-४४)

२. मध्याह्ने वृषभारूढां शुक्लाम्बरसमावृताम्। सावित्रीं रुद्रयोनिं चावाहयेद्रुद्रवादिनीम्॥

३. सायं तु गरुडारूढां पीताम्बरसमावृताम्। सरस्वतीं विष्णुयोनिमाह्वयेद् विष्णुवादिनीम्॥
(ना० पूर्व० २७। ४४—४६)

४. प्राणायाम-मन्त्र और उसकी विधि इस प्रकार है—

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्॥

पहले दाहिने हाथके अङ्गुष्ठसे नासिकाका दायाँ छिद्र बंद करके बायें छिद्रसे वायुको अंदर खींचे। साथ ही नाभिदेशमें नीलकमलदलके समान श्यामवर्ण चतुर्भुज भगवान् विष्णुका ध्यान करते हुए प्राणायाम-मन्त्रका तीन बार पाठ कर जाय। (यदि तीन बार पाठ न हो सके तो एक ही बार पाठ करे और अधिकके लिये अभ्यास बढ़ावे।) इसको पूरक कहते हैं। पूरकके पश्चात् अनामिका और कनिष्ठिका अंगुलियोंसे नासिकाके बायें छिद्रको भी बंद करके तबतक श्वास रोके रहे, जबतक कि प्राणायाम-मन्त्रका तीन बार (या शक्तिके अनुसार एक बार) पाठ न हो जाय। इस समय हृदयके बीच कमलासनपर विराजमान अरुण-गौरमिश्रित वर्णवाले चतुर्मुख ब्रह्माजीका ध्यान करे। यह कुम्भक क्रिया है। इसके बाद अँगूठा हटाकर नासिकाके दाहिने छिद्रसे वायुको धीरे-धीरे तबतक बाहर निकाले, जबतक प्राणायाम-मन्त्रका तीन (या एक) बार पाठ न हो जाय। इस समय शुद्ध स्फटिकके समान श्वेत वर्णवाले त्रिनेत्रधारी भगवान् शंकरका ध्यान करे। यह रेचक क्रिया है, यह सब मिलकर एक प्राणायाम कहलाता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु। दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि। यं च वयं द्विष्मः।

—इस मन्त्रको पढ़ते हुए हथेलीमें जल लेकर नासिकासे उसका स्पर्श कराये और भीतरके काम-क्रोधादि शत्रु उस जलमें आ गये, ऐसी भावना करके दूर फेंक दे। इस प्रकार शत्रुवर्गको दूर भगाकर '**द्रुपदादिव मुमुचानः**' इत्यादि मन्त्रसे अभिमन्त्रित जलको अपने सिरपर डाले। उसके बाद '**ऋतञ्च सत्यम्**' इत्यादि मन्त्रसे अघमर्षण करके '**अन्तश्चरसि**' इत्यादि मन्त्रद्वारा एक ही बार जलका आचमन करे। देवर्षे! तदनन्तर सूर्यदेवको विधिपूर्वक गन्ध, पुष्प और जलकी अञ्जलि दे। प्रातःकाल स्वस्तिकाकार अञ्जलि बाँधकर भगवान् सूर्यका उपस्थान करे। मध्याह्नकालमें दोनों भुजाओंको ऊपर उठाकर और सायंकाल बाँहें नीचे करके उपस्थान करे। इस प्रकार प्रातः आदि तीनों समयके लिये पृथक्-पृथक् विधि है। नारदजी! सूर्योपस्थानके समय '**उदुत्यं जातवेदसम्**', '**चित्रं देवानामुदगादनीकम्**', '**तच्चक्षुर्देवहितम्**' इन तीन ऋचाओंका जप करे। इसके सिवा सूर्यदेवता-सम्बन्धी अन्य मन्त्रोंका, शिव-सम्बन्धी मन्त्रोंका तथा विष्णुदेवता-सम्बन्धी मन्त्रोंका भी जप किया जा सकता है। सूर्योपस्थानके बाद '**तेजोऽसि**' तथा '**गायत्र्यस्येकपदी**' इत्यादि मन्त्रोंको पढ़कर भगवान् सविताके तेजःस्वरूप गायत्रीकी अथवा परमात्म-तेजकी स्तुति—प्रार्थना करे। तदनन्तर पुनः तीन बार अङ्गन्यास करके ब्रह्मा, रुद्र तथा विष्णुकी स्वरूपभूता शक्तियोंका चिन्तन करे। (प्रातःकाल ब्रह्माकी, मध्याह्नमें रुद्रकी और सायंकाल विष्णुकी शक्तिरूपसे क्रमशः गायत्री, सावित्री और सरस्वतीका चिन्तन करना चाहिये। उनका क्रमशः ध्यान इस प्रकार है—)

ब्रह्माणी चतुराननाक्षवलयं कुम्भं करैः स्रुक्स्रुवौ बिभ्राणा त्वरुणेन्दुकान्तिवदना ऋग्रूपिणी बालिका। हंसारोहणकेलिखण्खण्मणेर्बिम्बार्चिता भूषिता गायत्री परिभाविता भवतु नः संपत्समृद्ध्यै सदा॥

(ना० पूर्व०। २७। ५५)

'प्रातःकालमें गायत्रीदेवी ऋग्वेदस्वरूपा बालिकाके रूपमें विराज रही हैं। ये ब्रह्माजीकी शक्ति हैं। इनके चार मुख हैं। इन्होंने अपने हाथोंमें अक्षवलय, कलश, स्रुक् और स्रुवा धारण कर रखा है। इनके मुखकी कान्ति अरुण चन्द्रमाके समान कमनीय है। ये हंसपर चढ़नेकी क्रीड़ा कर रही हैं। उस समय इनके मणिमय आभूषण खनखन करने लगते हैं। मणिके बिम्बोंसे ये कूजित और विभूषित हैं। ऐसी गायत्रीदेवी हमारे ध्यानकी विषय होकर दैवी सम्पत्ति बढ़ानेमें सहायक हों।'

रुद्राणी नवयौवना त्रिनयना वैयाघ्रचर्माम्बरा खट्वाङ्गत्रिशिखाक्षसूत्रवलयाऽभीतिः श्रियै चास्तु नः। विद्युद्दामजटाकलापविलसद्बालेन्दुमौलिर्मुदा सावित्री वृषवाहना सिततनुर्ध्येया यजूरूपिणी॥

(ना० पूर्व०। २७। ५६)

'मध्याह्नकालमें वही गायत्री 'सावित्री' नाम धारण करती हैं। ये रुद्रकी शक्ति हैं। नूतन

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

यौवनसे सम्पन्न हैं। इनके तीन नेत्र हैं। व्याघ्रका चर्म इन्होंने वस्त्रके रूपमें धारण कर रखा है। इनके हाथोंमें खट्वाङ्ग, त्रिशूल, अक्षवलय और अभयकी मुद्रा है। तेजोमयी विद्युत्के समान देदीप्यमान जटामें बालचन्द्रमाका मुकुट शोभा पा रहा है। ये आनन्दमें मग्न हैं। वृषभ इनका वाहन है। शरीरका रंग (कपूरके समान) गौर है और यजुर्वेद इनका स्वरूप है। इस रूपमें ध्यान करने योग्य सावित्री हमारे ऐश्वर्यकी वृद्धि करें।'

ध्येया सा च सरस्वती भगवती पीताम्बरालङ्कृता
श्यामा श्यामतनुर्जरा परिलसद् गात्राञ्चिता वैष्णवी।
तार्क्ष्यस्था मणिनूपुराङ्गदलसद्ग्रैवेयभूषोज्ज्वला
हस्तालङ्कृतशङ्खचक्रसुगदापद्मा श्रियै चास्तु नः॥

(ना० पूर्व० २७। ५७)

'सायंकालमें वही गायत्री विष्णुशक्ति भगवती सरस्वतीका रूप धारण करती हैं। उनके श्रीअङ्ग पीताम्बरसे अलङ्कृत होते हैं। उनका रंग-रूप श्याम है। शरीरका एक-एक अवयव श्याम है। विभिन्न अङ्गोंमें जरावस्थाके लक्षण प्रकट होकर उनकी शोभा बढ़ा रहे हैं। वे गरुड़पर बैठी हैं। मणिमय नूपुर, भुजबंद और सुन्दर हार, हमेल आदि भूषणोंसे उनकी स्वाभाविक प्रभा और बढ़ गयी है। उनके हाथोंमें शङ्ख, चक्र और उत्तम गदा तथा पद्म सुशोभित हैं। इस रूपमें ध्यान करनेयोग्य सरस्वतीदेवी हमारी श्रीवृद्धि करें।'

इस प्रकार ध्यान करके गायत्री-मन्त्रका जप करे। प्रातः और मध्याह्नकालमें खड़े होकर तथा सायंकालमें बैठकर भक्तिभावसे गायत्रीके ध्यानमें ही मनको लगाये हुए जप करना चाहिये। प्रति समयकी संध्योपासनामें गायत्रीदेवीका एक हजार जप उत्तम, एक सौ जप मध्यम तथा कम-से-कम दस बार जप साधारण माना गया है। आरम्भमें प्रणव फिर '**भूर्भुवःस्वः**' उसके बाद '**तत्सवितुः**' इत्यादि त्रिपदा गायत्री—यही जपनेयोग्य गायत्री-मन्त्रका स्वरूप है। मुने! ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और यतिके द्वारा जो गायत्री-मन्त्रका जप होता है, उसमें छः प्रणव लगावे अथवा आदि-अन्तमें प्रणव लगाकर मन्त्रको उसमें सम्पुटित कर दे। परंतु गृहस्थके लिये केवल आदिमें एक प्रणव लगानेका नियम है। ऐसा ही मन्त्र उसके लिये जपनेयोग्य है। तदनन्तर यथाशक्ति जप करके उसे भगवान् सूर्यको निवेदित करे। फिर गायत्री तथा सूर्यदेवताके लिये एक-एक अञ्जलि जल छोड़े। तत्पश्चात् '**उत्तरे**[1] **शिखरे देवि**' इत्यादि मन्त्रसे गायत्रीदेवीका विसर्जन करते हुए कहे—'देवि! श्रीब्रह्मा, शिव तथा भगवान् विष्णुकी अनुमति लेकर सादर पधारो।' इसके बाद दिशाओं और दिग्देवताओंको हाथ जोड़कर प्रणाम करनेके अनन्तर प्रातःकाल आदिका दूसरा कर्म भी विधिपूर्वक सम्पन्न करे। देवर्षे! गृहस्थ पुरुष तो प्रातःकाल और मध्याह्नकालमें स्नान करे। परंतु वानप्रस्थी तथा संन्यासीको तीनों समय स्नान करना चाहिये। जो रोग आदिसे कष्ट पा रहे हों उनके लिये तथा पथिकोंके लिये एक ही बार स्नानका विधान किया गया है। मुनीश्वर! संध्योपासनके अनन्तर द्विज हाथमें कुश धारण करके ब्रह्मयज्ञ करे। यदि दिनमें बताये गये कर्म प्रमादवश न किये गये हों तो रातके पहले पहरमें उन्हें क्रमशः पूर्ण कर लेना चाहिये। जो धूर्त बुद्धिवाला द्विज आपत्तिकाल न होनेपर भी संध्योपासन नहीं करता, उसे सब धर्मोंसे भ्रष्ट एवं पाखण्डी समझना चाहिये। जो कपटपूर्ण झूठी युक्ति देनेमें चतुर होनेके कारण संध्या आदि कर्मोंको अनावश्यक बताते हुए उनका त्याग करता है, उसे महापातकियोंका सिरमौर समझना चाहिये[2]।

१. तैत्तिरीय आरण्यकमें 'उत्तमे शिखरे' ऐसा पाठ मिलता है। इस पुराणमें 'उत्तरे शिखरे' आया है।
२. यस्तु संध्यादिकर्माणि कूटयुक्तिविशारदः। परित्यजति तं विद्यान्महापातकिनां वरम्॥ (ना० पूर्व० २७। ६८)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

संध्योपासनाके बाद विधिपूर्वक देवपूजा तथा बलिवैश्वदेव-कर्म करना चाहिये। उस समय आये हुए अतिथिका अन्न आदिसे भलीभाँति सत्कार करना चाहिये। उनके आनेपर मीठे वचन बोलना चाहिये। उन्हें घरमें ठहरनेके लिये स्थान देकर

अन्न-जल अथवा कन्द-मूल-फलसे उनकी पूजा करनी चाहिये। जिसके घरसे अतिथि निराश होकर लौटता है, वह उसे अपना पाप दे बदलेमें उसका पुण्य लेकर चला जाता है। जिसका नाम और गोत्र पहलेसे ज्ञात न हो और जो दूसरे गाँवसे आया हो, ऐसे व्यक्तिको विद्वान् पुरुष 'अतिथि' कहते हैं। उसका श्रीविष्णुकी भाँति पूजन करना चाहिये[1]। ब्रह्मन्! प्रतिदिन पितरोंकी तृप्तिके उद्देश्यसे अपने ग्रामके निवासी एक श्रोत्रिय एवं वैष्णव ब्राह्मणको अन्न आदिसे तृप्त करना चाहिये। जो पञ्चमहायज्ञोंका त्यागी है, उसे विद्वान् लोग ब्रह्महत्यारा कहते हैं। इसलिये प्रतिदिन प्रयत्नपूर्वक पञ्चमहायज्ञोंका अनुष्ठान करना चाहिये। देवयज्ञ, भूतयज्ञ, पितृयज्ञ, मनुष्ययज्ञ तथा ब्रह्मयज्ञ—इनको पञ्चयज्ञ कहते हैं। भृत्य और मित्रादिवर्गके साथ स्वयं मौन होकर भोजन करना चाहिये। द्विज कभी अभक्ष्य पदार्थको न खाय। सुपात्र व्यक्तिका त्याग न करे, उसे अवश्य भोजन करावे। जो अपने आसनपर पैर रखकर अथवा आधा वस्त्र पहनकर भोजन करता है या मुखसे उगले हुए अन्नको खाता है, विद्वान् पुरुष उसे 'शराबी' कहते हैं। जो आधा खाये हुए मोदक, फल और प्रत्यक्ष नमकको पुनः खाता है, वह गोमांसभोजी कहा जाता है। द्विजको चाहिये कि वह पानी पीते, आचमन करते तथा भक्ष्य पदार्थोंका भोजन करते समय मुखसे आवाज न करे। यदि वह उस समय मुँहसे आवाज करता है तो नरकगामी होता है। मौन होकर अन्नकी निन्दा न करते हुए हितकर अन्नका भोजन करना चाहिये। भोजनके पहले एक बार जलका आचमन करे और इस प्रकार कहे '**अमृतोपस्तरणमसि**'— (हे अमृतरूप जल! तू भोजनका आश्रय अथवा आसन है)। फिर भोजनके अन्तमें एक बार जल पीये और कहे—'**अमृतापिधानमसि**' (हे अमृत! तू भोजनका आवरण—उसे ढकनेवाला है)। पहले प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान—इनके निमित्त अन्नकी पाँच आहुतियाँ अपने मुखमें डालकर आचमन कर ले[2]। उसके बाद भोजन आरम्भ करे। विप्रवर नारदजी! इस प्रकार भोजनके पश्चात् आचमन करके शास्त्रचिन्तनमें तत्पर होना चाहिये। रातमें भी आये हुए अतिथिका यथाशक्ति भोजन, आसन तथा शयनसे अथवा कन्द-मूल-फल आदिसे सत्कार करे। मुने! इस प्रकार गृहस्थ पुरुष सदा सदाचारका पालन करे। जिस समय वह सदाचारको त्याग

१. अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्तते। स तस्मै दुष्कृतं दत्त्वा पुण्यमादाय गच्छति॥
अज्ञातगोत्रनामानं अन्यग्रामादुपागतम्। विपश्चितोऽतिथिं प्राहुर्विष्णुवत् तं प्रपूजयेत्॥
(ना० पूर्व० २७। ७२-७३)

२. प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा—इस प्रकार कहता हुआ पाँच ग्रास ले।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

देता है, उस समय प्रायश्चित्तका भागी होता है।

साधुशिरोमणे! अपने शरीरको सफेद बाल आदि दोषोंसे युक्त देखकर अपनी पत्नीको पुत्रोंके संरक्षणमें छोड़ दे। स्वयं घरसे विरक्त होकर वनमें चला जाय अथवा पत्नीको भी साथ ही लेता जाय। वहाँ तीनों समय स्नान करे। नख, दाढ़ी, मूँछ और जटा धारण किये रहे। नीचे भूमिपर सोये। ब्रह्मचर्यका पालन करे और पञ्चमहायज्ञोंके अनुष्ठानमें तत्पर रहे। प्रतिदिन फल-मूलका भोजन करे और स्वाध्यायमें लगा रहे। भगवान् विष्णुके भजनमें संलग्न होकर सब प्राणियोंके प्रति दयाभाव रखे। गाँवमें पैदा हुए फल-मूलको त्याग दे। प्रतिदिन आठ ग्रास भोजन करे तथा रातमें उपवासपूर्वक रहे। वानप्रस्थ-आश्रममें रहनेवाला द्विज उबटन, तेल, मैथुन, निद्रा और आलस्य त्याग दे। वानप्रस्थी पुरुष शङ्ख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान् नारायणका चिन्तन तथा चान्द्रायण आदि तपोमय व्रत करे। सर्दी-गरमी आदि द्वन्द्वोंको सहन करे। सदा अग्निकी सेवा (अग्निहोत्र)-में संलग्न रहे।

जब मनमें सब वस्तुओंकी ओरसे वैराग्य हो जाय तभी संन्यास ग्रहण करे, अन्यथा वह पतित हो जाता है। संन्यासीको वेदान्तके अभ्यासमें तत्पर, शान्त, संयमी और जितेन्द्रिय, द्वन्द्वोंसे रहित तथा ममता और अहंकारसे शून्य रहना चाहिये। वह शम-दम आदि गुणोंसे युक्त तथा काम-क्रोधादि दोषोंसे दूर रहे। संन्यासी द्विज नग्न रहे या पुराना कौपीन पहने। उसे अपना मस्तक मुँड़ाये रहना चाहिये। वह शत्रु-मित्र तथा मान-अपमानमें समान भाव रखे। गाँवमें एक रात और नगरमें अधिक-से-अधिक तीन रात रहे। संन्यासी सदा भिक्षासे ही जीवन-निर्वाह करे। किसी एकके घरका अन्न खानेवाला न हो। जब चूल्हेकी आग बुझ जाय, घरके लोगोंका खाना-पीना हो गया हो, कोई बाकी न हो, उस समय किसी उत्तम द्विजके घरमें, जहाँ लड़ाई-झगड़ा न हो, भिक्षाके लिये संन्यासीको जाना चाहिये। संन्यासी तीनों काल स्नान और भगवान् नारायणका ध्यान करे। और मनको जीतकर इन्द्रियोंको वशमें रखते हुए प्रतिदिन प्रणवका जप करता रहे। अगर कोई लम्पट संन्यासी कभी एक व्यक्तिका अन्न खाकर रहने लगे तो दस हजार प्रायश्चित्त करनेपर भी उसका उद्धार नहीं दिखायी देता। ब्रह्मन्! यदि संन्यासी लोभवश केवल शरीरके ही पालन-पोषणमें लगा रहे तो उसे चाण्डालके समान समझना चाहिये। सभी वर्णों और आश्रमोंमें उसकी निन्दा होती है। संन्यासी अपने आत्मस्वरूप भगवान् नारायणका चिन्तन करे। जो रोग-शोकसे रहित, द्वन्द्वोंसे परे, ममताशून्य, शान्त, मायातीत, ईर्ष्यारहित, अव्यय, परिपूर्ण, सच्चिदानन्दस्वरूप ज्ञानमय, निर्मल, परम ज्योतिर्मय, सनातन, अधिकारी, अनादि, अनन्त जगत्की चिन्मयताके कारण गुणातीत तथा परात्पर परमात्मा हैं, उन्हींका नित्य ध्यान करना चाहिये। वह उपनिषद्-वाक्योंका पाठ एवं वेदान्तशास्त्रके अर्थका विचार करता रहे। जितेन्द्रिय रहकर सदा सहस्रों मस्तकवाले भगवान् श्रीहरिका ध्यान करे। जो ईर्ष्या छोड़कर इस प्रकार भगवान्के ध्यानमें तत्पर रहता है, वह परमानन्दस्वरूप उत्कृष्ट सनातन ज्योतिको प्राप्त होता है। जो द्विज इस तरह क्रमशः आश्रमसम्बन्धी आचारोंका पालन करता है, वह परम धाममें जाता है। वहाँ जाकर कोई शोक नहीं करता। वर्ण और आश्रम-सम्बन्धी धर्मके पालनमें तत्पर एवं सब पापोंसे रहित भगवद्भक्त भगवान् विष्णुके परम धामको प्राप्त होते हैं।

श्राद्धकी विधि तथा उसके विषयमें अनेक ज्ञातव्य विषयोंका वर्णन

श्रीसनकजी कहते हैं—मुनिश्रेष्ठ! मैं श्राद्धकी उत्तम विधिका वर्णन करता हूँ, सुनो। उसे सुनकर मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। पिताकी क्षयाह तिथिके पहले दिन स्नान करके एक समय

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भोजन करे। जमीनपर सोये, ब्रह्मचर्यका पालन करे तथा रातमें ब्राह्मणोंको निमन्त्रण दे। श्राद्धकर्ता पुरुष दाँतुन करना, पान खाना, तेल और उबटन लगाना, मैथुन, औषध-सेवन तथा दूसरोंके अन्नका भोजन अवश्य त्याग दे। रास्ता चलना, दूसरे गाँव जाना, कलह, क्रोध और मैथुन करना, बोझ ढोना तथा दिनमें सोना—ये सब कार्य श्राद्धकर्ता और श्राद्धभोक्ताको छोड़ देने चाहिये। यदि श्राद्धमें निमन्त्रित पुरुष मैथुन करता है तो वह ब्रह्महत्याको प्राप्त होता और नरकमें जाता है। श्राद्धमें वेदके ज्ञाता और वैष्णव ब्राह्मणको नियुक्त करना चाहिये। जो अपने वर्ण और आश्रमधर्मके पालनमें तत्पर, परम शान्त, उत्तम कुलमें उत्पन्न, राग-द्वेषसे रहित, पुराणोंके अर्थज्ञानमें निपुण, सब प्राणियोंपर दया करनेवाला, देवपूजापरायण, स्मृतियोंका तत्त्व जाननेमें कुशल, वेदान्त-तत्त्वका ज्ञाता, सम्पूर्ण लोकोंके हितमें संलग्न, कृतज्ञ, उत्तम गुणयुक्त, गुरुजनोंकी सेवामें तत्पर तथा उत्तम शास्त्रवचनोंद्वारा धर्मका उपदेश देनेवाला हो, उसे श्राद्धमें निमन्त्रित करे।

किसी अङ्गसे हीन अथवा अधिक अङ्गवाला, कदर्य, रोगी, कोढ़ी, बुरे नखोंवाला, अपने व्रतको खण्डित करनेवाला, ज्योतिषी, मुर्दा जलानेवाला, कुत्सित वचन बोलनेवाला, परिवेत्ता (बड़े भाईके अविवाहित रहते हुए स्वयं विवाह करनेवाला), देवल, दुष्ट, निन्दक, असहनशील, धूर्त, गाँवभरका पुरोहित, असत्-शास्त्रोंमें अनुराग रखनेवाला, वृषलीपति[1], कुण्डगोलक, यज्ञके अनधिकारियोंसे यज्ञ करानेवाला, पाखण्डपूर्ण आचरणवाला, अकारण सिर मुँड़ानेवाला, परायी स्त्री और पराये धनका लोभ रखनेवाला, भगवान् विष्णुकी भक्तिसे रहित, भगवान् शिवकी भक्तिसे विमुख, वेद बेचनेवाला, व्रतका विक्रय करनेवाला, स्मृतियों तथा मन्त्रोंको बेचनेवाला, गवैया, मनुष्योंकी झूठी प्रशंसाके लिये कविता करनेवाला, वैद्यक-शास्त्रसे जीविका चलानेवाला, वेदनिन्दक, गाँव और वनमें आग लगानेवाला, अत्यन्त कामी, रस बेचनेवाला, झूठी युक्ति देनेमें तत्पर रहनेवाला—ये सब ब्राह्मण यत्नपूर्वक श्राद्धमें त्याग देने योग्य हैं। श्राद्धसे एक दिन पहले या श्राद्धके दिन ब्राह्मणोंको निमन्त्रित करे। श्राद्धकर्ता पुरुष हाथमें कुश लेकर इन्द्रियोंको वशमें रखते हुए विद्वान् ब्राह्मणको निमन्त्रण दे और इस प्रकार कहे 'हे साधुशिरोमणे! श्राद्धमें अपना समय देकर मुझपर कृपा प्रसाद करें।'

तदनन्तर प्रातःकाल उठकर सबेरेका नित्यकर्म समाप्त करके विद्वान् पुरुष कुतपकालमें[2] श्राद्ध प्रारम्भ करे। दिनके आठवें मुहूर्तमें जब सूर्यका तेज कुछ मन्द हो जाता है, उस समयको 'कुतपकाल' कहते हैं। उसमें पितरोंकी तृप्तिके लिये दिया हुआ दान अक्षय होता है। ब्रह्माजीने पितरोंको अपराह्णकाल ही दिया है। मुनिश्रेष्ठ! विभिन्न द्रव्योंके साथ जो कव्य असमयमें पितरोंके लिये दिया जाता है, उसे राक्षसका भाग समझना चाहिये। वह पितरोंके पास नहीं पहुँच पाता है। सायंकालमें दिया हुआ कव्य राक्षसका भाग हो जाता है। उसे देनेवाला नरकमें पड़ता है और उसको भोजन करनेवाला भी नरकगामी होता है। ब्रह्मन्! यदि निधनतिथिका मान पहले दिन एक दण्ड ही हो और दूसरे दिन वह अपराह्णतक व्याप्त हो तो विद्वान् पुरुषको दूसरे ही दिन श्राद्ध करना चाहिये। किंतु मृत्युतिथि यदि दोनों दिन अपराह्णकालमें व्याप्त हो तो क्षयपक्षमें पूर्वतिथिको श्राद्धमें ग्रहण करना चाहिये और वृद्धिपक्षमें

१. वृषली शूद्रजातिकी स्त्रीको कहते हैं। स्मृतियोंके अनुसार जो कन्या अविवाहित अवस्थामें अपने पिताके यहाँ रजस्वला हो जाती है, उसकी भी वृषली संज्ञा होती है।

२. सम्पूर्ण दिन १५ मुहूर्तका होता है। उसमें आठवाँ मुहूर्त मध्याह्नके बाद आता है। वही पितरोंके श्राद्धके लिये उत्तम माना गया है, उसीका नाम 'कुतप' है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

परतिथिको। यदि पहले दिन क्षयाहतिथि चार घड़ी हो और दूसरे दिन वह सायंकालतक व्याप्त हो तो श्राद्धके लिये दूसरे दिनवाली तिथि ही उत्तम मानी गयी है। द्विजोत्तम! निमन्त्रित ब्राह्मणोंके एकत्र होनेपर प्रायश्चित्तसे शुद्ध हृदयवाला श्राद्धकर्ता पुरुष उनसे श्राद्धके लिये आज्ञा ले। ब्राह्मणोंसे श्राद्धके लिये आज्ञा मिल जानेपर श्राद्धकर्ता पुरुष फिर उनमेंसे दोको विश्वेदेव श्राद्धके लिये और तीनको विधिपूर्वक पितृश्राद्धके लिये पुनः निमन्त्रित करे। अथवा देवश्राद्ध तथा पितृश्राद्धके लिये एक-एक ब्राह्मणको ही निमन्त्रित करे। श्राद्धके लिये आज्ञा लेकर एक-एक मण्डल बनावे। ब्राह्मणके लिये चौकोर, क्षत्रियके लिये त्रिकोण तथा वैश्यके लिये गोल मण्डल बनाना आवश्यक समझना चाहिये और शूद्रको मण्डल न बनाकर केवल भूमिको सींच देना चाहिये। योग्य ब्राह्मणोंके अभावमें भाईको, पुत्रको अथवा अपने-आपको ही श्राद्धमें नियुक्त करे। परंतु वेदशास्त्रके ज्ञानसे रहित ब्राह्मणको श्राद्धमें नियुक्त न करे। ब्राह्मणोंके पैर धोकर उन्हें आचमन करावे और नियत आसनपर बैठाकर भगवान् विष्णुका स्मरण करते

हुए उनकी विधिपूर्वक पूजा करे। ब्राह्मणोंके बीचमें तथा श्राद्धमण्डपके द्वारदेशमें श्राद्धकर्ता पुरुष **'अपहता असुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः।'** इस ऋचाका उच्चारण करते हुए तिल बिखेरे। जौ और कुशोंद्वारा विश्वेदेवोंको आसन दे। हाथमें जौ और कुश लेकर कहे—**'विश्वेषां देवानाम् इदम् आसनम्'** ऐसा कहकर विश्वेदेवोंके बैठनेके लिये आसनरूपसे उस कुशाको रख दे और प्रार्थना करे—हे विश्वेदेवो! आपलोग इस देवश्राद्धमें अपना क्षण (समय) दें और प्रतीक्षा करें। अक्षय्योदक और आसन समर्पणके वाक्यमें विश्वेदेवों और पितरोंके लिये षष्ठी विभक्तिका प्रयोग करना चाहिये। आवाहन-वाक्यमें द्वितीया विभक्ति बतायी गयी है। अन्न समर्पणके वाक्यमें चतुर्थी विभक्तिका प्रयोग होना चाहिये। शेष कार्य सम्बोधनपूर्वक करना चाहिये। कुशकी पवित्रीसे युक्त दो पात्र लेकर उनमें **'शं नो देवी'** इत्यादि ऋचाका उच्चारण करके जल डाले। फिर **'यवोऽसि'** इत्यादि मन्त्र बोलकर उसमें जव डाले। उसके बाद चुपचाप बिना मन्त्रके ही गन्ध और पुष्प छोड़ दे। इस प्रकार अर्घ्यपात्र तैयार हो जानेपर **'विश्वेदेवाः स'** इत्यादि मन्त्रसे विश्वेदेवोंका आवाहन करे। तदनन्तर **'या दिव्या आपः'** इत्यादि मन्त्रसे अर्घ्यको अभिमन्त्रित करके एकाग्रचित्त हो पितृ और मातामह-सम्बन्धी विश्वेदेवोंको संकल्पपूर्वक क्रमशः अर्घ्य दे। उसके बाद गन्ध, पत्र, पुष्प, यज्ञोपवीत, धूप, दीप आदिके द्वारा उन देवताओंका पूजन करे। तत्पश्चात् विश्वेदेवोंसे आज्ञा लेकर पितृगणोंका पूजन करे। उनके लिये सदा तिलयुक्त कुशोंवाला आसन देना चाहिये। उन्हें अर्घ्य देनेके लिये द्विज पूर्ववत् तीन पात्र रखे। **'शं नो देवी०'** इत्यादि मन्त्रसे जल डालकर **'तिलोऽसि सोमदैवत्यो'** इत्यादि मन्त्रसे तिल डाले। फिर **'उशन्तस्त्वा'** इत्यादि मन्त्रद्वारा पितरोंका आवाहन करके ब्राह्मण एकाग्रचित्त हो **'या दिव्या आपः'** इत्यादि मन्त्रसे

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अर्घ्यको अभिमन्त्रित करके पूर्ववत् संकल्पपूर्वक पितरोंको समर्पित करे (अर्घ्यपात्रको उलटकर पितरोंके वामभागमें रखना चाहिये)। साधुशिरोमणे! तदनन्तर गन्ध, पत्र, पुष्प, धूप, दीप, वस्त्र और आभूषणसे अपनी शक्तिके अनुसार उन सबकी पूजा करे। तत्पश्चात् विद्वान् पुरुष घृतसहित अन्नका ग्रास ले '**अग्नौ करिष्ये**' (अग्निमें होम करूँगा) ऐसा कहकर उन ब्राह्मणोंसे इसके लिये आज्ञा ले। मुने! '**करवै**'—अथवा '**करवाणि**' (करूँ?) ऐसा कहकर श्राद्धकर्ताके पूछनेपर ब्राह्मण लोग '**कुरुष्व**' '**क्रियताम्**' अथवा '**कुरु**' (करो) ऐसा कहें। इसके बाद अपनी शाखाके गृह्यसूत्रमें बतायी हुई विधिके अनुसार उपासनाग्निकी स्थापना करके उसमें पूर्वोक्त अन्नके ग्रासकी दो आहुतियाँ डाले। उस समय '**सोमाय पितृमते स्वधा नमः**' ऐसा उच्चारण करे। फिर '**अग्नये कव्यवाहनाय स्वधा नमः**' ऐसा उच्चारण करे। विद्वान् पुरुष अन्तमें स्वधाकी जगह स्वाहा लगाकर भी पितृयज्ञकी भाँति आहुति दे सकते हैं। इन्हीं दो आहुतियोंसे पितरोंको अक्षय तृप्ति प्राप्त होती है। अग्निके अभावमें अर्थात् यजमानके अग्निहोत्री न होनेपर ब्राह्मणके हाथमें दानरूप होम करनेका विधान है*। ब्रह्मन्! जैसा आचार हो, उसके अनुसार ब्राह्मणके हाथ या अग्निमें उक्त होम करना चाहिये। पार्वण उपस्थित होनेपर अग्निको दूर नहीं करना चाहिये। विप्रवर! यदि पार्वण उपस्थित होनेपर अपनी उपास्य अग्नि दूर हो तो पहले नूतन अग्निकी स्थापना करके उसमें होम आदि आवश्यक कार्य करनेके पश्चात् विद्वान् पुरुष उस अग्निका विसर्जन कर दे। यदि क्षयाह (निधनदिन) तिथि प्राप्त हो और उपासनाग्नि दूर हो तो अपने अग्निहोत्री द्विज भाइयोंसे विधिपूर्वक श्राद्धकर्म सम्पन्न करावे। द्विजश्रेष्ठ! श्राद्धकर्ता प्राचीनावीती होकर (जनेऊको दाहिने कंधेपर करके) अग्निमें होम करे और होमावशिष्ट अन्नको ब्राह्मणके पात्रोंमें भगवत्स्मरणपूर्वक डाले। फिर स्वादिष्ट भक्ष्य, भोज्य, लेह्य आदिके द्वारा ब्राह्मणोंका पूजन करे। तदनन्तर एकाग्रचित्त हो विश्वेदेव और पितर—दोनोंके लिये अन्न परोसे। उस समय इस प्रकार प्रार्थना करे—

आगच्छन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबलाः॥
ये यत्र विहिताः श्राद्धे सावधाना भवन्तु ते।

(ना० पूर्व० २८। ५७-५८)

'महान् बलवान् महाभाग विश्वेदेवगण यहाँ पधारें और जो जिस श्राद्धमें विहित हों वे उसके लिये सावधान रहें।'

इस प्रकार विश्वेदेवोंसे प्रार्थना करे। '**ये देवासः**' इत्यादि मन्त्रसे भी उनकी अभ्यर्थना करनी चाहिये। देवपक्षके ब्राह्मणोंसे भी ऐसी ही प्रार्थना करे। उसके बाद '**ये चेह पितरो**' इत्यादि मन्त्रसे पितरोंकी अभ्यर्थना करके निम्नाङ्कित मन्त्रसे उनको नमस्कार करे—

अमूर्तानां च मूर्तानां पितॄणां दीप्ततेजसाम्॥
नमस्यामि सदा तेषां ध्यानिनां योगचक्षुषाम्।

(ना० पूर्व० २८। ५९-६०)

'जिनका तेज सब ओर प्रकाशित हो रहा है, जो ध्यानपरायण तथा योगदृष्टिसे सम्पन्न हैं, उन मूर्त पितरोंको तथा अमूर्त पितरोंको भी मैं सदा नमस्कार करता हूँ।'

इस प्रकार पितरोंको प्रणाम करके श्राद्धकर्ता

*आजकल अपात्रक पार्वण आदि श्राद्धोंमें अग्नौकरण होमकी दोनों आहुतियाँ पुटकस्थित जलमें डाली जाती हैं। परंतु प्राचीन मत उपासनाग्निमें ही हवन करनेका है। आश्वलायनका वचन है 'अग्नौकरणहोमं तु कुर्यादौपासनानले' और अग्निके अभावमें पितृस्वरूप ब्राह्मणोंके हाथमें हवन करनेका विधान है जैसा कि आश्वलायनका वचन है। 'जुहुयात् पितृपाणिषु' अतः नारदपुराणका मूलोक्त वचन अन्य स्मृतिकारोंके मतसे भी मिलता-जुलता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पुरुष भगवान् नारायणका चिन्तन करते हुए दिये हुए हविष्य तथा श्राद्धकर्मको भगवान् विष्णुकी सेवामें समर्पित कर दे। इसके बाद वे सब ब्राह्मण मौन होकर भोजन प्रारम्भ करें। यदि कोई ब्राह्मण उस समय हँसता या बात करता है तो वह हविष्य राक्षसका भाग हो जाता है। पाक आदिकी प्रशंसा (या निन्दा) न करे। सर्वथा मौन रहे। भोजनपात्रको हाथसे स्पर्श किये हुए ही भोजन करे। यदि कोई श्राद्धमें नियुक्त हुआ ब्राह्मण पात्रको सर्वथा छोड़ देता है तो उसे श्राद्धहन्ता जानना चाहिये। वह नरकमें पड़ता है। भोजन करनेवाले ब्राह्मणोंमेंसे कुछ लोग यदि एक-दूसरेका स्पर्श कर लें और अन्नका त्याग न करके उसे खा लें तो उस स्पर्शजनित दोषका निवारण करनेके लिये उन्हें आठ सौ गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये। जब ब्राह्मणलोग भोजन करते हों उस समय श्राद्धकर्ता पुरुष श्रद्धापूर्वक कभी पराजित न होनेवाले अविनाशी भगवान् नारायणका स्मरण करे। रक्षोघ्नमन्त्र[1], वैष्णवसूक्त[2] तथा विशेषतः पितृसम्बन्धी[3] मन्त्रोंका पाठ करे। इसके सिवा पुरुषसूक्त[4], त्रिणाचिकेत[5], त्रिमधु[6], त्रिसुपर्ण[7], पवमानसूक्त तथा यजुर्वेद और सामवेदके मन्त्रोंका जप करे। अन्यान्य पुण्यदायक प्रसंगोंका चिन्तन करे। इतिहास, पुराण तथा धर्मशास्त्रोंका भी पाठ करे। नारदजी! जबतक ब्राह्मणलोग भोजन करें, तबतक इन सबका जप या पाठ करना चाहिये। जब वे भोजन कर लें, उस समय परोसनेवाले पात्रमें बचा हुआ उच्छिष्टके समीप भूमिपर बिखेर दे। यह विकिरान्न[8] कहलाता है।

उस समय '**मधुवाता ऋतायते**' इत्यादि सूक्तका जप करे। नारदजी! इसके बाद श्राद्धकर्ता पुरुष स्वयं दोनों पैर धोकर भलीभाँति आचमन कर ले। फिर ब्राह्मणोंके आचमन कर लेनेपर पिण्डदान करे। स्वस्तिवाचन कराकर अक्षय्योदक दे (तर्पण करें)। उसे देकर एकाग्रचित्त होकर ब्राह्मणोंका अभिवादन करे। उलटे हुए अर्घ्यपात्रोंको सीधा करके ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे और उनसे स्वस्तिवाचनपूर्वक आशीर्वाद ले। जो द्विज अर्घ्यपात्रको हिलाये या सीधा किये बिना (दक्षिणा लेते और) स्वस्तिवाचन करते हैं, उनके पितर एक वर्षतक उच्छिष्ट भोजन करते हैं। स्मृति-कथित '**गोत्रं नो वर्धताम्**' '**दातारो नोऽभिवर्धन्ताम्**' इत्यादि वचन कहकर ब्राह्मणोंसे आशीर्वाद ग्रहण करे। तदनन्तर उन्हें प्रणाम करे और उन्हें यथाशक्ति

---

१. 'ॐ अपहता असुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः' इत्यादि।

२. 'इदं विष्णुर्विचक्रमे', 'विष्णोः कर्माणि पश्यत', 'विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा', 'विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचम्', 'विष्णो रराटमसि विष्णोः'।

३. 'आयन्तु नः पितरः', 'उदीरतामवर', 'ये चेह पितरो', 'ऊर्जंवहन्तीरमृतं' इत्यादि।

४. 'सहस्रशीर्षाः पुरुषः' इत्यादि।

५. द्वितीय कठके अन्तर्गत 'अयं वाव यः पवते' इत्यादि तीन अनुवाक।

६. 'मधुवाता' इत्यादि तीन ऋचाएँ।

७. 'ब्रह्ममेतु माम्' इत्यादि तीन अनुवाक।

८. विकिरान्न उन पितरोंका भाग है जो आगमें जलकर मर गये हों अथवा जिनका दाह-संस्कार न हुआ हो। पितृ-सम्बन्धी ब्राह्मणके आगे उनके जूठनके समीप दक्षिणाग्र कुश बिछाकर परोसनेकी थालीमें बचे अन्नको बिखेर देना चाहिये। फिर तिल और जल लेकर निम्नाङ्कित श्लोक पढ़ते हुए वह अन्न समर्पित करना चाहिये।

अग्निदग्धाश्च ये जीवा येऽप्यदग्धाः कुले मम। भूमौ दत्तेन तोयेन तृप्ता यान्तु परां गतिम्॥

(याज्ञ० आचार० २४१ वें श्लोककी मिताक्षरा टीका)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दक्षिणा, गन्ध एवं ताम्बूल अर्पित करे। उलटे हुए अर्घ्यपात्रको उत्तान करनेके बाद हाथमें लेकर 'स्वधा' का उच्चारण करे। फिर **'वाजे वाजे'** इत्यादि ऋचाको पढ़कर पितरोंका, देवताओंका विसर्जन करे।

श्राद्ध-भोजन करनेवाला ब्राह्मण तथा श्राद्धकर्ता यजमान दोनों उस रातमें मैथुनका त्याग करें। उस दिन स्वाध्याय तथा रास्ता चलनेका कार्य यत्नपूर्वक छोड़ दें। जो कहीं जानेके लिये यात्रा कर रहा हो, जिसे कोई रोग हो तथा जो धनहीन हो, वह पुरुष पाक न बनाकर कच्चे अन्नसे श्राद्ध करे और जिसकी पत्नी रजस्वला होनेसे स्पर्श करने योग्य न हो, वह दक्षिणारूपसे सुवर्ण देकर श्राद्धकार्य सम्पन्न करे। यदि धनका अभाव हो और ब्राह्मण भी न मिलें तो बुद्धिमान् पुरुष केवल अन्नका पाक बनाकर पितृसूक्तके मन्त्रसे उसका होम करे। ब्रह्मन्! यदि उसके पास अन्नमय हविष्यका अभाव हो तो यथाशक्ति घास ले आकर पितरोंकी तृप्तिके उद्देश्यसे गौओंको अर्पण करे। अथवा स्नान करके विधिपूर्वक तिल और जलसे पितरोंका तर्पण करे। अथवा विद्वान् पुरुष निर्जन वनमें चला जाय और मैं महापापी दरिद्र हूँ—यह कहते हुए उच्चस्वरसे रुदन करे। मुनीश्वर! जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक श्राद्ध करते हैं, वे सम्पत्तिशाली होते हैं और उनकी संतानपरम्पराका नाश नहीं होता। जो श्राद्धमें पितरोंका पूजन करते हैं, उनके द्वारा साक्षात् भगवान् विष्णु पूजित होते हैं और जगदीश्वर भगवान् विष्णुके पूजित होनेपर सब देवता संतुष्ट हो जाते हैं। देवता, पितर, गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष, सिद्ध और मनुष्यके रूपमें सनातन भगवान् विष्णु ही विराजमान हैं। उन्हींसे यह स्थावर-जंगमरूप जगत् उत्पन्न हुआ है। अतः दाता और भोक्ता सब भगवान् विष्णु ही हैं। भगवान् विष्णु सम्पूर्ण जगत्के आधार सर्वभूतस्वरूप तथा अविनाशी हैं। उनके स्वभावकी कहीं भी तुलना नहीं है, वे ही हव्य और कव्यके भोक्ता हैं। एकमात्र भगवान् जनार्दन ही परब्रह्म परमात्मा कहलाते हैं। मुनिश्रेष्ठ! इस प्रकार तुमसे श्राद्धकी उत्तम विधिका वर्णन किया गया। इस विधिसे श्राद्ध करनेवालोंका पाप तत्काल नष्ट हो जाता है। जो श्रेष्ठ द्विज श्राद्धकालमें भक्तिपूर्वक इस प्रसंगका पाठ करता है, उसके पितर संतुष्ट होते हैं और संतति बढ़ती है।

व्रत, दान और श्राद्ध आदिके लिये तिथियोंका निर्णय

श्रीसनकजी कहते हैं—ब्रह्मन्! श्रुतियों और स्मृतियोंमें कहे हुए जो व्रत, दान और अन्य वैदिक कर्म हैं वे यदि अनिर्णीत (अनिश्चित) तिथियोंमें किये जायँ तो उनका कोई फल नहीं होता। एकादशी, अष्टमी, षष्ठी, पूर्णिमा, चतुर्दशी, अमावास्या और तृतीया—ये पर-तिथिसे विद्ध (संयुक्त) होनेपर उपवास और व्रत आदिमें श्रेष्ठ मानी जाती हैं। पूर्व-तिथिसे संयुक्त होनेपर ये व्रत आदिमें ग्राह्य नहीं होती हैं। कोई-कोई आचार्य कृष्णपक्षमें सप्तमी, चतुर्दशी, तृतीया और नवमीको पूर्वतिथिसे विद्ध होनेपर भी श्रेष्ठ कहते हैं। परंतु सम्पूर्ण व्रत आदिमें शुक्लपक्ष ही उत्तम माना गया है और अपराह्णकी अपेक्षा पूर्वाह्णको व्रतमें ग्रहण करने योग्य काल बताया गया है; क्योंकि वह उससे अत्यन्त श्रेष्ठ है। रात्रि-व्रतमें सदा वही तिथि ग्रहण करनी चाहिये जो प्रदोषकालतक मौजूद रहे। दिनके व्रतमें दिनव्यापिनी तिथियाँ ही व्रतादि कर्म करनेके लिये पवित्र मानी गयी हैं। इसी प्रकार रात्रि-व्रतोंमें तिथियोंके साथ रात्रिका संयोग बड़ा श्रेष्ठ माना गया है। श्रवण

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

द्वादशीके व्रतमें सूर्योदयव्यापिनी द्वादशी ग्रहण करनी चाहिये। सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणमें जबतक ग्रहण लगा रहे, तबतककी तिथि जप आदिमें ग्रहण करने योग्य है।

अब सम्पूर्ण संक्रान्तियोंमें होनेवाले पुण्यकालका वर्णन किया जाता है। सूर्यकी संक्रान्तियोंमें स्नान, दान और जप आदि करनेवालोंको अक्षय फल प्राप्त होता है। इन संक्रान्तियोंमें कर्ककी संक्रान्तिको दक्षिणायन संक्रम जानना चाहिये। कर्ककी संक्रान्तिमें विद्वान् लोग पहलेकी तीस घड़ीको पुण्यकाल मानते हैं। वृष, वृश्चिक, सिंह और कुम्भ राशिकी संक्रान्तियोंमें पहलेके आठ मुहूर्त (सोलह घड़ी)

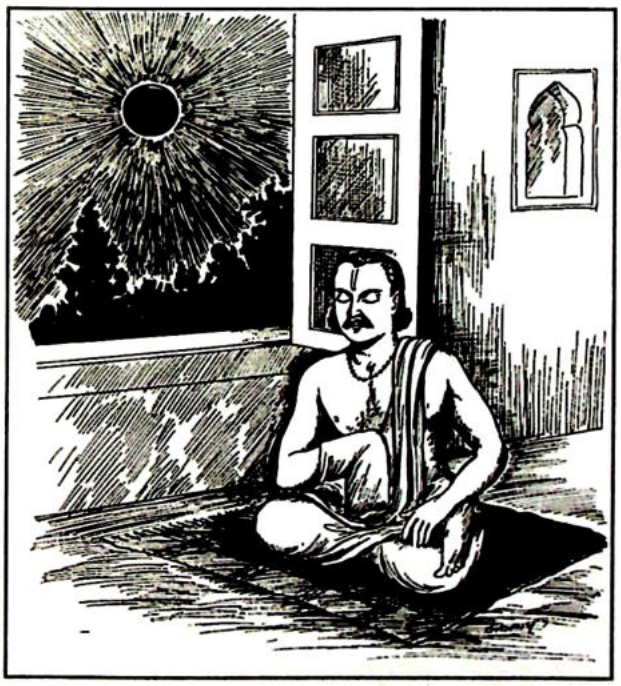

स्नान और जप आदिमें ग्राह्य हैं। और तुला तथा मेषकी संक्रान्तियोंमें पूर्व और परकी दस-दस घड़ियाँ स्नान आदिके लिये श्रेष्ठ मानी गयी हैं। इनमें दिया हुआ दान अक्षय होता है। ब्रह्मन्! कन्या, मिथुन, मीन और धनकी संक्रान्तियोंमें बादकी सोलह घटिकाएँ पुण्यदायक जाननी चाहिये। मकर-संक्रान्तिको उत्तरायण संक्रम कहा गया है। इसमें पूर्वकी चालीस और बादकी तीस घड़ियाँ स्नान-दान आदिके लिये पवित्र मानी गयी हैं। विप्रवर! यदि सूर्य और चन्द्रमा ग्रहण लगे हुए ही अस्त हो जायँ तो दूसरे दिन उनका शुद्ध मण्डल देखकर ही भोजन करना चाहिये।

धर्मकी इच्छा रखनेवाले विद्वानोंने अमावास्या दो प्रकारकी बतायी है—सिनीवाली और कुहू। जिसमें चन्द्रमाकी कला देखी जाती है, वह चतुर्दशीयुक्त अमावास्या सिनीवाली कही जाती है और जिसमें चन्द्रमाकी कलाका सर्वथा क्षय हो जाता है, वह चतुर्दशीयुक्त अमावास्या कुहू मानी गयी है*। अग्निहोत्री द्विजोंको श्राद्धकर्ममें सिनीवाली अमावास्याको ही ग्रहण करना चाहिये तथा स्त्रियों, शूद्रों और अग्निरहित द्विजोंको कुहूमें श्राद्ध करना चाहिये। यदि अमावास्या तिथि अपराह्णकालमें व्याप्त हो तो क्षय (मृत्युकर्म)-में पूर्व-तिथि और वृद्धि (जन्म-कर्म)-में उत्तर-तिथिको ग्रहण करना चाहिये। यदि अमावास्या मध्याह्नकालके बाद प्रतीत हो तो शास्त्रकुशल साधु पुरुषोंने उसे भूतविद्धा (चतुर्दशीसे संयुक्त) कहा है। जब तिथिका अत्यन्त क्षय होनेसे दूसरे दिन वह अपराह्णव्यापिनी न हो तब (पूर्व दिनकी) सायंकालव्यापिनी सिनीवाली तिथिको ही श्राद्धमें ग्रहण करना चाहिये। यदि तिथिकी अतिशय वृद्धि होनेपर वह दूसरे दिन अपराह्णकालतक चली गयी हो तो चतुर्दशी-विद्धा अमावास्याको त्याग दे और कुहूको ही श्राद्धकर्ममें ग्रहण करे।

*अमावास्याके तीन विभाग हैं—सिनीवाली, दर्श और कुहू। चतुर्दशीका अन्तिम प्रहर और अमावास्याके आठ प्रहर इस प्रकार यह नौ प्रहरका समय चन्द्रमाके क्षयका काल माना गया है। इनमेंसे पहले दो प्रहरोंमें चन्द्रमाकी कला विराजमान रहती है, अतः उसे सिनीवाली कहते हैं और अन्तिम दो प्रहरोंमें चन्द्रमाकी कलाका पूर्णतः क्षय हो जाता है। अतः उसीका नाम कुहू है और बीचके जो शेष पाँच प्रहर हैं उनका नाम दर्श है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

यदि अमावास्या तिथि एक मध्याह्नसे लेकर दूसरे मध्याह्नतक व्याप्त हो तो इच्छानुसार पूर्व या पर-दिनकी तिथिको ग्रहण करे।

मुनिश्रेष्ठ! अब मैं सम्पूर्ण पर्वोंपर होनेवाले अन्वाधान (अग्निस्थापन)-का वर्णन करता हूँ। प्रतिपदाके दिन याग करना चाहिये। पर्वके अन्तिम चतुर्थांश और प्रतिपदाके प्रथम तीन अंशको मनीषी पुरुषोंने यागका समय बताया है। यागका आरम्भ प्रातःकाल करना चाहिये। विप्रवर! यदि अमावास्या और पूर्णिमा दोनों मध्याह्नकालमें व्याप्त हों तो दूसरे ही दिन यागका मुख्य काल नियत किया जाता है। यदि अमावास्या और पूर्णिमा दूसरे दिन सङ्गवकाल (प्रातःकालसे छः घड़ी)-के बाद हो तो दूसरे ही दिन पुण्यकाल होता है। तिथिक्षयमें भी ऐसी ही व्यवस्था जाननी चाहिये। सभी लोगोंको दशमीरहित एकादशी तिथि व्रतमें ग्रहण करनी चाहिये। दशमीयुक्त एकादशी तीन जन्मोंके कमाये हुए पुण्यका नाश कर देती है। यदि एकादशी द्वादशीमें एक कला भी प्रतीत हो और सम्पूर्ण दिन द्वादशी हो और द्वादशी भी त्रयोदशीमें मिली हुई हो तो दूसरे दिनकी तिथि (द्वादशी) ही उत्तम मानी गयी है। यदि सम्पूर्ण दिन शुद्ध एकादशी हो और द्वादशीमें भी उसका संयोग प्राप्त होता हो तथा रात्रिके अन्तमें त्रयोदशी आ जाय तो उस विषयमें निर्णय बतलाता हूँ। पहले दिनकी एकादशी गृहस्थोंको करनी चाहिये और दूसरे दिनकी विरक्तोंको। यदि कलाभर भी द्वादशी न रहनेसे पारणाका अवसर न मिलता हो तो उस दशामें दशमीविद्धा एकादशीको भी उपवास-व्रत करना चाहिये। यदि शुक्ल या कृष्णपक्षमें दो एकादशियाँ हों तो पहली गृहस्थोंके लिये और दूसरी विरक्त यतियोंके लिये ग्राह्य मानी गयी है। यदि दिनभर दशमीयुक्त एकादशी हो और दिनकी समाप्तिके समय द्वादशीमें भी कुछ एकादशी हो तो सबके लिये दूसरे ही दिन (द्वादशी) व्रत बताया गया है। यदि दूसरे दिन द्वादशी न हो तो पहले दिनकी दशमीविद्धा एकादशी भी व्रतमें ग्राह्य है। और यदि दूसरे दिन द्वादशी है तो पहले दिनकी दशमीविद्धा एकादशी भी निषिद्ध ही है (इसलिये ऐसी परिस्थितिमें द्वादशीको व्रत करना चाहिये)। यदि एक ही दिन एकादशी, द्वादशी तथा रातके अन्तिम भागमें त्रयोदशी भी आ जाय तो त्रयोदशीमें पारणा करनेपर बारह द्वादशियोंका पुण्य होता है। यदि द्वादशीके दिन कलामात्र ही एकादशी हो और त्रयोदशीमें द्वादशीका योग हो या न हो तो गृहस्थोंके पहले दिनकी विद्धा एकादशी भी व्रतमें ग्रहण करनी चाहिये। और विरक्त साधुओं तथा विधवाओंको दूसरे दिनकी तिथि (द्वादशी) स्वीकार करनी चाहिये। यदि पूरे दिनभर शुद्ध एकादशी हो, द्वादशीमें उसका तनिक भी योग न हो तथा द्वादशी त्रयोदशीमें संयुक्त हो तो वहाँ कैसे व्रत रहना चाहिये—इसका उत्तर देते हैं—गृहस्थोंको पूर्वकी (एकादशी) तिथिमें व्रती रहना चाहिये और विरक्त साधुओंको दूसरे दिनकी (द्वादशी) तिथिमें। कोई-कोई विद्वान् ऐसा कहते हैं कि सब लोगोंको दूसरे दिनकी तिथिमें ही भक्तिपूर्वक उपवास करना चाहिये। जब एकादशी दशमीसे विद्ध हो, द्वादशीमें उसकी प्रतीति न हो और द्वादशी त्रयोदशीसे संयुक्त हो तो उस दशामें सबको शुद्ध द्वादशी तिथिमें उपवास करना चाहिये—इसमें संशय नहीं है। कुछ लोग पूर्व तिथिमें व्रत कहते हैं; किंतु उनका मत ठीक नहीं है।

जो रविवारको दिनमें, अमावास्या और पूर्णिमाको रातमें, चतुर्दशी और अष्टमी तिथिको दिनमें तथा एकादशी तिथिको दिन और रात दोनोंमें भोजन कर लेता है, उसे प्रायश्चित्तरूपमें चान्द्रायण-व्रतका अनुष्ठान करना चाहिये। सूर्यग्रहण प्राप्त

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होनेपर तीन पहर पहलेसे ही भोजन न करे। यदि कोई कर लेता है तो वह मदिरा पीनेवालेके समान होता है। मुनिश्रेष्ठ! यदि अग्न्याधान और दर्शपौर्णमास आदि यागके बीच चन्द्रग्रहण अथवा सूर्यग्रहण हो जाय तो यज्ञकर्ता पुरुषोंको प्रायश्चित्त करना चाहिये। ब्रह्मन्! चन्द्रग्रहणमें '**दशमे सोमः**' '**आप्यायस्व**' तथा '**सोमपास्ते**' इन तीन मन्त्रोंसे हवन करें। और सूर्यग्रहण होनेपर हवन करनेके लिये '**उदुत्यं जातवेदसम्**', '**आसत्येन**', '**उद्वयं तमसः**'—ये तीन मन्त्र बताये गये हैं। जो पण्डित इस प्रकार स्मृतिमार्गसे तिथिका निर्णय करके व्रत आदि करता है उसे अक्षय फल प्राप्त होता है। वेदमें जिसका प्रतिपादन किया गया है वह धर्म है। धर्मसे भगवान् विष्णु संतुष्ट होते हैं। अतः धर्मपरायण मनुष्य भगवान् विष्णुके परम धाममें जाते हैं। जो धर्माचरण करना चाहते हैं, वे साक्षात् भगवान् कृष्णके स्वरूप हैं। अतः संसाररूपी रोग उन्हें कोई बाधा नहीं पहुँचाता।

विविध पापोंके प्रायश्चित्तका विधान तथा भगवान् विष्णुके आराधनकी महिमा

श्रीसनकजी कहते हैं—नारदजी! अब मैं प्रायश्चित्तकी विधिका वर्णन करूँगा, सुनिये! सम्पूर्ण धर्मोंका फल चाहनेवाले पुरुषोंको काम-क्रोधसे रहित धर्मशास्त्रविशारद ब्राह्मणोंसे धर्मकी बात पूछनी चाहिये। विप्रवर! जो लोग भगवान् नारायणसे विमुख हैं, उनके द्वारा किये हुए प्रायश्चित्त उन्हें पवित्र नहीं करते; ठीक उसी तरह जैसे मदिराके पात्रको नदियाँ भी पवित्र नहीं कर सकतीं। ब्रह्महत्यारा, मदिरा पीनेवाला, स्वर्ण आदि वस्तुओंकी चोरी करनेवाला तथा गुरुपत्नीगामी—ये चार महापातकी कहे गये हैं। तथा इनके साथ सम्पर्क करनेवाला पुरुष पाँचवाँ महापातकी है। जो इनके साथ एक वर्षतक सोने, बैठने और भोजन करने आदिका सम्बन्ध रखते हुए निवास करता है, उसे भी सब कर्मोंसे पतित समझना चाहिये। अज्ञातवश ब्राह्मणहत्या हो जानेपर चीर-वस्त्र और जटा धारण करे और अपने द्वारा मारे गये ब्राह्मणकी कोई वस्तु ध्वज-दण्डमें बाँधकर उसे लिये हुए वनमें घूमे। वहाँ जंगली फल-मूलोंका आहार करते हुए निवास करे। दिनमें एक बार परिमित भोजन करे। तीनों समय स्नान और विधिपूर्वक संध्या करता रहे। अध्ययन और अध्यापन आदि कार्य छोड़ दे। निरन्तर भगवान् विष्णुका चिन्तन करता रहे। नित्य ब्रह्मचर्यका पालन करे और गन्ध एवं माला आदि भोग्य वस्तुओंको छोड़ दे। तीर्थों तथा पवित्र आश्रमोंमें निवास करे। यदि वनमें फल-मूलोंसे जीविका न चले तो गाँवोंमें जाकर भिक्षा माँगे। इस प्रकार श्रीहरिका चिन्तन करते हुए बारह वर्षका व्रत करे। इससे ब्रह्महत्यारा शुद्ध होता और ब्राह्मणोचित कर्म करनेके योग्य हो जाता है। व्रतके बीचमें यदि हिंसक जन्तुओं अथवा रोगोंसे उसकी मृत्यु हो जाय तो वह शुद्ध हो जाता है। यदि गौओं अथवा ब्राह्मणोंके लिये प्राण त्याग दे या श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको दस हजार उत्तम गायोंका दान करे तो इससे भी उसकी शुद्धि होती है। इनमेंसे एक भी प्रायश्चित्त करके ब्रह्महत्यारा पापसे मुक्त हो सकता है।

यज्ञमें दीक्षित क्षत्रियका वध करके भी ब्रह्महत्याका ही व्रत करे अथवा प्रज्वलित अग्निमें प्रवेश कर जाय या किसी ऊँचे स्थानसे वायुके झोंके खाकर गिर जाय। यज्ञमें दीक्षित ब्राह्मणकी हत्या करनेपर दुगुने व्रतका आचरण करे। आचार्य आदिकी हत्या हो जानेपर चौगुना व्रत बतलाया गया है। नाममात्रके ब्राह्मणकी हत्या हो जाय तो एक वर्षतक व्रत करे। ब्रह्मन्! इस प्रकार

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ब्राह्मणके लिये प्रायश्चित्तकी विधि बतलायी गयी है। यदि क्षत्रियके द्वारा उपर्युक्त पाप हो जाय तो उसके लिये दुगुना और वैश्यके लिये तीनगुना प्रायश्चित्त बताया गया है। जो शूद्र ब्राह्मणका वध करता है, उसे विद्वान् पुरुष मुशल्य (मूसलसे मार डालने योग्य) मानते हैं। राजाको ही उसे दण्ड देना चाहिये। यही शास्त्रोंका निर्णय है। ब्राह्मणीके वधमें आधा और ब्राह्मण-कन्याके वधमें चौथाई प्रायश्चित्त कहा गया है। जिनका यज्ञोपवीत-संस्कार न हुआ हो, ऐसे ब्राह्मण बालकोंका वध करनेपर भी चौथाई व्रत करे। यदि ब्राह्मण क्षत्रियका वध कर डाले तो वह छः वर्षोंतक कृच्छ्रव्रतका आचरण करे। वैश्यको मारनेपर तीन वर्ष और शूद्रको मारनेपर एक वर्षतक व्रत करे। यज्ञमें दीक्षित ब्राह्मणकी धर्मपत्नीका वध करनेपर आठ वर्षोंतक ब्रह्महत्याका व्रत करे। मुनिश्रेष्ठ! वृद्ध, रोगी, स्त्री और बालकोंके लिये सर्वत्र आधे प्रायश्चित्तका विधान बताया गया है।

सुरा मुख्य तीन प्रकारकी जाननी चाहिये। गौड़ी (गुड़से तैयार की हुई), पैष्टी (चावलों आदिके आटेसे बनायी हुई) तथा माध्वी (फूलके रस, अंगूर या महुवेसे बनायी हुई)। नारदजी! चारों वर्णोंके पुरुषों तथा स्त्रियोंको इनमेंसे कोई भी सुरा नहीं पीनी चाहिये। मुने! शराब पीनेवाला द्विज स्नान करके गीले वस्त्र पहने हुए मनको एकाग्र करके भगवान् नारायणका निरन्तर स्मरण करे और दूध, घी अथवा गोमूत्रको तपाये हुए लोहेके समान गरम करके पी जाय, फिर (जीवित रहे तो) जल पीवे। वह भी लौहपात्र अथवा आयसपात्रसे पीये या ताँबेके पात्रसे पीकर मृत्युको प्राप्त हो जाय। ऐसा करनेपर ही मदिरा पीनेवाला द्विज उस पापसे मुक्त होता है। अनजानमें पानी समझकर जो द्विज शराब पी ले तो विधिपूर्वक ब्रह्महत्याका व्रत करे; किंतु उसके चिह्नोंको न धारण करे। यदि रोग-निवृत्तिके लिये औषध-सेवनकी दृष्टिसे कोई द्विज शराब पी ले तो उसका फिर उपनयन-संस्कार करके उससे दो चान्द्रायण-व्रत कराने चाहिये। शराबसे छुवाये हुए पात्रमें भोजन करना, जिसमें कभी शराब रखी गयी हो उस पात्रका जल पीना तथा शराबसे भीगी हुई वस्तुको खाना यह सब शराब पीनेके ही समान बताया गया है। ताड़, कटहल, अंगूर, खजूर और महुआसे तैयार की हुई तथा पत्थरसे आटेको पीसकर बनायी हुई अरिष्ट, मैरेय और नारियलसे निकाली हुई, गुड़की बनी हुई तथा माध्वी—ये ग्यारह प्रकारकी मदिराएँ बतायी गयी हैं। (उपर्युक्त तीन प्रकारकी मदिराके ही ये ग्यारह भेद हैं।) इनमेंसे किसी भी मद्यको ब्राह्मण कभी न पीवे। यदि द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) अज्ञानवश इनमेंसे किसी एकको पी ले तो फिरसे अपना उपनयन- संस्कार कराकर तप्तकृच्छ्र-व्रतका आचरण करे।

जो सामने या परोक्षमें बलपूर्वक या चोरीसे दूसरोंके धनको ले लेता है, उसका यह कर्म विद्वान् पुरुषोंद्वारा स्तेय (चोरी) कहा गया है। मनु आदिने सुवर्णके मापकी परिभाषा इस प्रकार की है। विप्रवर! वह मान (माप) आगे कहे जानेवाले प्रायश्चित्तकी उक्तिका साधन है। अतः उसका वर्णन करता हूँ; सुनिये! झरोखेके छिद्रसे घरमें आयी हुई सूर्यकी जो किरणें हैं, उनमेंसे जो उत्पन्न सूक्ष्म धूलिकण उड़ता दिखायी देता है, उसे विद्वान् पुरुष त्रसरेणु कहते हैं। वही त्रसरेणुका माप है। आठ त्रसरेणुओंका एक निष्क होता है और तीन निष्कोंका एक राजसर्षप (राई) बताया गया है। तीन राजसर्षपोंका एक गौरसर्षप (पीली सरसों) होता है और छः गौरसर्षपोंका एक यव कहा जाता है। तीन यवका एक कृष्णल होता है। पाँच कृष्णलका एक माष (माशा) माना गया है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नारदजी! सोलह माशेके बराबर एक सुवर्ण होता है। यदि कोई मूर्खतासे सुवर्णके बराबर ब्राह्मणके धनका अर्थात् सोलह माशा सोनेका अपहरण कर लेता है तो उसे पूर्ववत् बारह वर्षोंतक कपाल और ध्वजके चिह्नोंसे रहित ब्रह्महत्या-व्रत करना चाहिये। गुरुजनों, यज्ञ करनेवाले धर्मनिष्ठ पुरुषों तथा श्रोत्रिय ब्राह्मणोंके सुवर्णको चुरा लेनेपर इस प्रकार प्रायश्चित्त करे। पहले उस पापके कारण बहुत पश्चात्ताप करे, फिर सम्पूर्ण शरीरमें घीका लेप करे और कंडेसे अपने शरीरको ढककर

आग लगाकर जल मरे। तभी वह उस चोरीसे मुक्त होता है। यदि कोई क्षत्रिय ब्राह्मणके धनको चुरा ले और पश्चात्ताप होनेपर फिर उसे वहीं लौटा दे तो उसके लिये प्रायश्चित्तकी विधि मुझसे सुनिये। ब्रह्मर्षे! वह बारह दिनोंतक उपवासपूर्वक सान्तपन-व्रत करके शुद्ध होता है। रत्न, सिंहासन, मनुष्य, स्त्री, दूध देनेवाली गाय तथा भूमि आदि पदार्थ भी स्वर्णके ही समान माने गये हैं। इनकी चोरी करनेपर आधा प्रायश्चित्त कहा है। राजसर्षप (राई) बराबर सोनेकी चोरी करनेपर चार प्राणायाम करने चाहिये। गौरसर्षप बराबर स्वर्णका अपहरण कर लेनेपर विद्वान् पुरुष स्नान करके विधिपूर्वक ८००० गायत्रीका जप करे। जौ बराबर स्वर्णको चुरानेपर द्विज यदि प्रातःकालसे लेकर सायंकालतक वेदमाता गायत्रीका जप करे तो उससे शुद्ध होता है। कृष्णल बराबर स्वर्णकी चोरी करनेपर मनुष्य सान्तपन-व्रत करे। यदि एक माशाके बराबर सोना चुरा ले तो वह एक वर्षतक गोमूत्रमें पकाया हुआ जौ खाकर रहे तो शुद्ध होता है। मुनीश्वर! पूरे सोलह माशा सोनेकी चोरी करनेपर मनुष्य एकाग्रचित्त हो बारह वर्षोंतक ब्रह्महत्याका व्रत करे।

अब गुरुपत्नीगामी पुरुषोंके लिये प्रायश्चित्तका वर्णन किया जाता है। यदि मनुष्य अज्ञानवश माता अथवा सौतेली मातासे समागम कर ले तो लोगोंपर अपना पाप प्रकट करते हुए स्वयं ही अपने अण्डकोशको काट डाले। और हाथमें उस अण्डकोशको लिये हुए नैर्ऋत्य कोणमें चलता जाय। जाते समय मार्गमें कभी सुख-दुःखका विचार न करे। जो इस प्रकार किसी यात्रीकी ओर न देखते हुए प्राणान्त होनेतक चलता जाता है, वह पापसे शुद्ध होता है। अथवा अपने पापको बताते हुए किसी ऊँचे स्थानसे हवाके झोंकेके साथ कूद पड़े। यदि बिना विचारे अपने वर्णकी या अपनेसे उत्तम वर्णकी स्त्रीके साथ समागम कर ले तो एकाग्रचित्त हो बारह वर्षोंतक ब्रह्महत्याका व्रत करे। द्विजश्रेष्ठ! जो बिना जाने हुए कई बार समान वर्ण या उत्तम वर्णवाली स्त्रीसे समागम कर ले तो वह कंडेकी आगमें जलकर शुद्धिको प्राप्त होता है। यदि वीर्यपातसे पहले ही माताके साथ समागमसे निवृत्त हो जाय तो ब्रह्महत्याका व्रत करे और यदि वीर्यपात हो जाय तो अपने शरीरको अग्निमें जला दे। यदि अपने वर्णकी तथा अपनेसे उत्तम वर्णकी स्त्रीके

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

साथ समागम करनेवाला पुरुष वीर्यपातसे पहले ही निवृत्त हो जाय तो भगवान् विष्णुका चिन्तन करते हुए नौ वर्षोंतक ब्रह्महत्याका व्रत करे। मनुष्य यदि कामसे मोहित होकर मौसी, बूआ, गुरुपत्नी, सास, चाची, मामी और पुत्रीसे समागम कर ले तो दो दिनतक समागम करनेपर उसे विधिपूर्वक ब्रह्महत्याका व्रत करना चाहिये और तीन दिनतक सम्भोग करनेपर वह आगमें जल जाय, तभी शुद्ध होता है, अन्यथा नहीं। मुनीश्वर! जो कामके अधीन हो चाण्डाली, पुष्कसी (भीलजातिकी स्त्री), पुत्रवधू, बहिन, मित्रपत्नी तथा शिष्यकी स्त्रीसे समागम करता है, वह छः वर्षोंतक ब्रह्महत्याका व्रत करें*।

अब महापातकी पुरुषोंके साथ संसर्गका प्रायश्चित्त बतलाया जाता है। ब्रह्महत्यारे आदि चार प्रकारके महापातकियोंसे जिसके साथ जिस पुरुषका संसर्ग होता है, वह उसके लिये विहित प्रायश्चित्त व्रतका पालन करके निश्चय ही शुद्ध हो जाता है। जो बिना जाने पाँच राततक इनके साथ रह लेता है, उसे विधिपूर्वक प्राजापत्य कृच्छ्र नामक व्रत करना चाहिये। बारह दिनोंतक उनके साथ संसर्ग हो जाय तो उसका प्रायश्चित्त महासान्तपन-व्रत बताया गया है। और पंद्रह दिनोंतक महापातकियोंका साथ कर लेनेपर मनुष्य बारह दिनतक उपवास करे। एक मासतक संसर्ग करनेपर पराक-व्रत और तीन मासतक संसर्ग हो तो चान्द्रायण-व्रतका विधान है। छः महीनेतक महापातकी मनुष्योंका संग करके मनुष्य दो चान्द्रायण-व्रतका अनुष्ठान करे। एक वर्षसे कुछ कम समयतक उनका सङ्ग करनेपर छः महीनेतक चान्द्रायण-व्रतका पालन करे और यदि जान-बूझकर महापातकी पुरुषोंका सङ्ग किया जाय तो क्रमशः इन सबका प्रायश्चित्त ऊपर बताये हुए प्रायश्चित्तसे तीनगुना बताया गया है। मेढ़क, नेवला, कौआ, सूअर, चूहा, बिल्ली, बकरी, भेड़, कुत्ता और मुर्गा— इनमेंसे किसीका वध करनेपर ब्राह्मण अर्धकृच्छ्र-व्रतका आचरण करे और घोड़ेकी हत्या करनेवाला मनुष्य अतिकृच्छ्र-व्रतका पालन करे। हाथीकी हत्या करनेपर तप्तकृच्छ्र और गोहत्या करनेपर पराक-व्रत करनेका विधान है। यदि स्वेच्छासे जान-बूझकर गौओंका वध किया जाय तो मनीषी पुरुषोंने उसकी शुद्धिका कोई भी उपाय नहीं देखा है। पीनेयोग्य वस्तु, शय्या, आसन, फूल, फल, मूल तथा भक्ष्य और भोज्य पदार्थोंकी चोरीके पापका शोधन करनेवाला प्रायश्चित्त पञ्चगव्यका पान कहा गया है। सूखे काठ, तिनके, वृक्ष, गुड़, चमड़ा, वस्त्र और मांस—इनकी चोरी करनेपर तीन रात उपवास करना चाहिये। टिटिहरी, चकवा, हंस, कारण्डव, उल्लू, सारस, कबूतर, जलमुर्गा, तोता, नीलकण्ठ, बगुला, सूँस और कछुआ इनमेंसे किसीको भी मारनेपर बारह दिनोंतक उपवास करना चाहिये। वीर्य, मल और मूत्र खा लेनेपर प्राजापत्य-व्रत करे। शूद्रका जूठा खानेपर तीन चान्द्रायण-व्रत करनेका विधान है। रजस्वला स्त्री, चाण्डाल, महापातकी, सूतिका, पतित, उच्छिष्ट वस्तु आदिका स्पर्श कर लेनेपर वस्त्रसहित स्नान करे और घृत पीवे। नारदजी! इसके सिवा आठ सौ गायत्रीका जप करे, तब वह शुद्धचित्त होता है। ब्राह्मणों और देवताओंकी निन्दा सब पापोंसे बड़ा पाप है। विद्वानोंने जो-जो पाप महापातकके समान बताये हैं, उन सबका इसी

* ये महापाप समाजमें प्रायः बहुत ही कम होते है, परंतु प्रायश्चित्त-विधानमें तो लाखों-करोड़ोंमेंसे एक भी मनुष्यसे यदि वैसा पाप बनता है तो उसका भी प्रायश्चित्त बताना चाहिये, इसीलिये शास्त्रका यह कठिन दण्ड-विधान है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्रकार विधिपूर्वक प्रायश्चित्त करना चाहिये। जो भगवान् नारायणकी शरण लेकर प्रायश्चित्त करता है, उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

जो राग-द्वेष आदिसे मुक्त हो पापोंके लिये प्रायश्चित्त करता है, समस्त प्राणियोंके प्रति दयाभाव रखता है और भगवान् विष्णुके स्मरणमें तत्पर रहता है, वह महापातकोंसे अथवा सम्पूर्ण पातकोंसे युक्त हो तो भी उसे सब पापोंसे मुक्त ही समझना चाहिये। क्योंकि वह भगवान् विष्णुके भजनमें लगा हुआ है। जो मानव अनादि, अनन्त, विश्वरूप तथा रोग-शोकसे रहित भगवान् नारायणका चिन्तन करता है, वह करोड़ों पापोंसे मुक्त हो जाता है। साधु पुरुषोंके हृदयमें विराजमान भगवान् विष्णुका स्मरण, पूजन, ध्यान अथवा नमस्कार किया जाय तो वे सब पापोंका निश्चय ही नाश कर देते हैं। जो किसीके सम्पर्कसे अथवा मोहवश भी भगवान् विष्णुका पूजन करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो उनके वैकुण्ठधाममें जाता है। नारदजी! भगवान् विष्णुके एक बार स्मरण करनेसे सम्पूर्ण क्लेशोंकी राशि नष्ट हो जाती है तथा उसी मनुष्यको स्वर्गादि भोगोंकी प्राप्ति होती है—यह स्वयं ही अनुमान हो जाता है। मनुष्य-जन्म बड़ा दुर्लभ है। जो लोग इसे पाते हैं, वे धन्य हैं। मानव-जन्म मिलनेपर भी भगवान्‌की भक्ति और भी दुर्लभ बतायी गयी है, इसलिये बिजलीकी तरह चञ्चल (क्षणभङ्गुर) एवं दुर्लभ मानव-जन्मको पाकर भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुका भजन करना चाहिये। वे भगवान् ही अज्ञानी जीवोंको अज्ञानमय बन्धनसे छुड़ानेवाले हैं। भगवान्‌के भजनसे सब विघ्न नष्ट हो जाते हैं तथा मनकी शुद्धि होती है। भगवान् जनार्दनके पूजित होनेपर मनुष्य परम मोक्ष प्राप्त कर लेता है। भगवान्‌की आराधनामें लगे हुए मनुष्योंके धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक सनातन पुरुषार्थ अवश्य सिद्ध होते हैं।

इसमें संशय नहीं है*।

---

* यस्तु रागादिनिर्मुक्तो ह्यनुतापसमन्वितः॥
सर्वभूतदयायुक्तो विष्णुस्मरणतत्परः। महापातकयुक्तो वा युक्तो वा सर्वपातकैः॥
विमुक्त एव पापेभ्यो ज्ञेयो विष्णुपरो यतः। नारायणमनाद्यन्तं विश्वाकारमनामयम्॥
यस्तु संस्मरते मर्त्यः स मुक्तः पापकोटिभिः। स्मृतो वा पूजितो वापि ध्यातः प्रणमितोऽपि वा॥
नाशयत्येव पापानि विष्णुर्हृद्गमनः सताम्। सम्पर्काद्यदि वा मोहाद्यस्तु पूजयते हरिम्॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः स प्रयाति हरेः पदम्। सकृत्संस्मरणाद्विष्णोर्नश्यन्ति क्लेशसंचयाः॥
स्वर्गादिभोगप्राप्तिस्तु तस्य विप्रानुमीयते। मानुषं दुर्लभं जन्म प्राप्यते यैर्मुनीश्वर॥
तत्रापि हरिभक्तिस्तु दुर्लभा परिकीर्तिता। तस्मात्तडिल्लतालोलं मानुष्यं प्राप्य दुर्लभम्॥

Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अरे! पुत्र, स्त्री, घर, खेत, धन और धान्य नाम धारण करनेवाली मानवी वृत्तिको पाकर तू घमण्ड न कर। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, परापवाद और निन्दाका सर्वथा त्याग करके भक्तिपूर्वक भगवान् श्रीहरिका भजन कर। सारे व्यापार छोड़कर भगवान् जनार्दनकी आराधनामें लग जा। यमपुरीके वे वृक्ष समीप ही दिखायी देते हैं। जबतक बुढ़ापा नहीं आता, मृत्यु भी जबतक नहीं आ पहुँचती है और इन्द्रियाँ जबतक शिथिल नहीं हो जातीं तभीतक भगवान् विष्णुकी आराधना कर लेनी चाहिये। यह शरीर नाशवान् है। बुद्धिमान् पुरुष इसपर कभी विश्वास न करे। मौत सदा निकट रहती है। धन-वैभव अत्यन्त चञ्चल है और शरीर कुछ ही समयमें मृत्युका ग्रास बन जानेवाला है। अतः अभिमान छोड़ दे। महाभाग! संयोगका अन्त वियोग ही है। यहाँ सब कुछ क्षणभङ्गुर है—यह जानकर भगवान् जनार्दनकी पूजा कर। मनुष्य आशासे कष्ट पाता है। उसके लिये मोक्ष अत्यन्त दुर्लभ है। जो भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुका भजन करता है, वह महापातकी होनेपर भी उस परम धामको जाता है, जहाँ जाकर किसीको शोक नहीं होता। साधुशिरोमणे! सम्पूर्ण तीर्थ, समस्त यज्ञ और अङ्गोंसहित सब वेद भी भगवान् नारायणके पूजनकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं हो सकते*। जो लोग भगवान् विष्णुकी भक्तिसे वञ्चित हैं, उन्हें वेद, यज्ञ और शास्त्रोंसे क्या लाभ हुआ? उन्होंने तीर्थोंकी सेवा करके क्या पाया तथा उनके तप और व्रतसे भी क्या होनेवाला है? जो अनन्तस्वरूप, निरीह, ॐकारबोध्य, वरेण्य, वेदान्तवेद्य तथा संसाररूपी रोगके वैद्य भगवान् विष्णुका यजन करते हैं, वे मनुष्य उन्हीं भगवान् अच्युतके वैकुण्ठधाममें जाते हैं। जो अनादि, आत्मा, अनन्तशक्तिसम्पन्न, जगत्के आधार, देवताओंके आराध्य तथा ज्योतिःस्वरूप परम पुरुष भगवान् अच्युतका स्मरण करता है, वह नर अपने नित्यसखा नारायणको प्राप्त कर लेता है।

यमलोकके मार्गमें पापियोंके कष्ट तथा पुण्यात्माओंके सुखका वर्णन एवं कल्पान्तरमें भी कर्मोंके भोगका प्रतिपादन

श्रीसनकजी बोले—ब्रह्मन्! सुनिये। मैं अत्यन्त दुर्गम यमलोकके मार्गका वर्णन करता हूँ। वह पुण्यात्माओंके लिये सुखद और पापियोंके लिये भयदायक है। मुनीश्वर! प्राचीन ज्ञानी पुरुषोंने यमलोकके मार्गका विस्तार छियासी हजार योजन बताया है। जो मनुष्य यहाँ दान करनेवाले होते हैं, वे उस मार्गमें सुखसे जाते हैं; और जो धर्मसे हीन हैं, वे अत्यन्त पीड़ित होकर बड़े दुःखसे यात्रा करते हैं। पापी मनुष्य उस मार्गपर दीनभावसे जोर-जोरसे रोते-चिल्लाते जाते हैं—वे अत्यन्त भयभीत और नंगे होते हैं। उनके कण्ठ, ओठ और तालु सूख जाते हैं। यमराजके दूत चाबुक आदिसे तथा अनेक प्रकारके आयुधोंसे उनपर आघात करते रहते हैं। और वे इधर-उधर भागते

हरिं सम्पूजयेद् भक्त्या पशुपाशविमोचनम्। सर्वेऽन्तराया नश्यन्ति मनःशुद्धिश्च जायते॥
परं मोक्षं लभेच्चैव पूजिते तु जनार्दने। धर्मार्थकाममोक्षाख्याः पुरुषार्थाः सनातनाः॥
हरिपूजापराणां तु सिध्यन्ति नात्र संशयः। (ना० पूर्व० ३०। ९२—१०२)

* सर्वतीर्थानि यज्ञाश्च साङ्गा वेदाश्च सत्तम॥
नारायणार्चनस्यैते कलां नार्हन्ति षोडशीम्। (ना० पूर्व० ३०। ११०-१११)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हुए बड़े कष्टसे उस पथपर चल पाते हैं। वहाँ कहीं कीचड़ है, कहीं जलती हुई आग है, कहीं तपायी हुई बालू बिछी है, कहीं तीखी धारवाली

शिलाएँ हैं। कहीं काँटेदार वृक्ष हैं और कहीं ऐसे-ऐसे पहाड़ हैं, जिनकी शिलाओंपर चढ़ना अत्यन्त दुःखदायक होता है। कहीं काँटोंकी बहुत बड़ी बाड़ लगी हुई है, कहीं-कहीं कन्दरामें प्रवेश करना पड़ता है। उस मार्गमें कहीं कंकड़ हैं, कहीं ढेले हैं और कहीं सुईके समान काँटे बिछे हैं तथा कहीं बाघ गरजते रहते हैं। नारदजी! इस प्रकार पापी मनुष्य—भाँति-भाँतिके क्लेश उठाते हुए यात्रा करते हैं। कोई पाशमें बँधे होते हैं, कोई अंकुशोंसे खींचे जाते हैं और किन्हींकी पीठपर अस्त्र-शस्त्रोंकी मार पड़ती रहती है। इस दुर्दशाके साथ पापी उस मार्गपर जाते हैं। किन्हींकी नाक छेदकर उसमें नकेल डाल दी जाती है और उसीको पकड़कर खींचा जाता है। कोई आँतोंसे बँधे रहते हैं और कुछ पापी अपने शिश्नके अग्रभागसे लोहेका भारी भार ढोते हुए यात्रा करते हैं। कोई नासिकाके अग्रभागद्वारा लोहेका दो भार ढोते हैं और कोई पापी दोनों कानोंसे दो लौहभार वहन करते हुए उस मार्गपर चलते हैं। कोई अत्यन्त उच्छ्वास लेते हैं और किन्हींकी आँखें ढक दी जाती हैं। उस मार्गमें कहीं विश्रामके लिये छाया और पीनेके लिये जलतक नहीं है। अतः पापी लोग जानकर या अनजानमें किये हुए अपने पापकर्मोंके लिये शोक करते हुए अत्यन्त दुःखसे यात्रा करते हैं।

नारदजी! जो उत्तम बुद्धिवाले मानव धर्मनिष्ठ और दानशील होते हैं, वे अत्यन्त सुखी होकर धर्मराजके लोककी यात्रा करते हैं। मुनिश्रेष्ठ! अन्न देनेवाले स्वादिष्ट अन्नका भोजन करते हुए जाते हैं। जिन्होंने जल दान किया है, वे भी अत्यन्त सुखी होकर उत्तम दूध पीते हुए यात्रा करते हैं। मट्ठा और दही दान करनेवाले तत्सम्बन्धी भोग मट्ठा और दही दान करनेवाले तत्सम्बन्धी भोग प्राप्त करते हैं। द्विजश्रेष्ठ! घृत, मधु और दूधका दान करनेवाले पुरुष सुधापान करते हुए धर्ममन्दिरको जाते हैं। साग देनेवाला खीर खाता है और दीप देनेवाला सम्पूर्ण दिशाओंको प्रकाशित करते हुए जाता है। मुनिप्रवर! वस्त्र-दान करनेवाला पुरुष दिव्य वस्त्रोंसे विभूषित होकर यात्रा करता है। जिसने आभूषण दान किया है, वह उस मार्गपर देवताओंके मुखसे अपनी स्तुति सुनता हुआ जाता है। गोदानके पुण्यसे मनुष्य सब प्रकारके सुख-भोगसे सम्पन्न होकर जाता है। द्विजश्रेष्ठ! घोड़े, हाथी तथा रथकी सवारीका दान करनेवाला पुरुष सम्पूर्ण भोगोंसे युक्त विमानद्वारा धर्मराजके मन्दिरको जाता है। जिस श्रेष्ठ पुरुषने माता-पिताकी सेवा-शुश्रूषा की है, वह देवताओंसे पूजित हो प्रसन्नचित्त होकर धर्मराजके घर जाता है। जो यतियों, व्रतधारियों तथा श्रेष्ठ ब्राह्मणोंकी सेवा करता है, वह बड़े सुखसे धर्मलोकको जाता है। जो सम्पूर्ण भूतोंके प्रति दयाभाव रखता है, वह द्विज

Public Domain. Digitized by Sarayu Trust
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

देवताओंसे पूजित हो सर्वभोगसमन्वित विमानद्वारा यात्रा करता है। जो विद्यादानमें तत्पर रहता है, वह ब्रह्माजीसे पूजित होता हुआ जाता है। पुराण-पाठ करनेवाला पुरुष मुनीश्वरोंद्वारा अपनी स्तुति सुनता हुआ यात्रा करता है। इस प्रकार धर्मपरायण पुरुष सुखपूर्वक धर्मराजके निवासस्थानको जाते हैं। उस समय धर्मराज चार भुजाओंसे युक्त हो शङ्ख, चक्र, गदा और खड्ग धारण करके बड़े स्नेहसे मित्रकी भाँति उस पुण्यात्मा पुरुषकी पूजा करते हैं और इस प्रकार कहते हैं—'हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ पुण्यात्मा पुरुषो! जो मानव-जन्म पाकर पुण्य नहीं करता है, वही पापियोंमें बड़ा है और वह आत्मघात करता है। जो अनित्य मानव-जन्म पाकर उसके द्वारा नित्य वस्तु (धर्म)-का साधन नहीं करता, वह घोर नरकमें जाता है। उससे बढ़कर जड और कौन होगा? यह शरीर यातनारूप (दुःखरूप) है और मल आदिके द्वारा अपवित्र है। जो इसपर (इसकी स्थिरतापर) विश्वास करता है, उसे आत्मघाती समझना चाहिये। सब भूतोंमें प्राणधारी श्रेष्ठ हैं। उनमें भी जो (पशु-पक्षी आदि) बुद्धिसे जीवन-निर्वाह करते हैं, वे श्रेष्ठ हैं। उनसे भी मनुष्य श्रेष्ठ हैं। मनुष्योंमें ब्राह्मण, ब्राह्मणोंमें विद्वान् और विद्वानोंमें अचञ्चल बुद्धिवाले पुरुष श्रेष्ठ हैं। अचञ्चल बुद्धिवाले पुरुषोंमें कर्तव्यका पालन करनेवाले श्रेष्ठ हैं और कर्तव्य-पालकोंमें भी ब्रह्मवादी (वेदका कथन करनेवाले) पुरुष श्रेष्ठ हैं। ब्रह्मवादियोंमें भी वह श्रेष्ठ कहा जाता है, जो ममता आदि दोषोंसे रहित हो। इनकी अपेक्षा भी उस पुरुषको श्रेष्ठ समझना चाहिये, जो सदा भगवान्‌के ध्यानमें तत्पर रहता है। इसलिये सर्वथा प्रयत्न करके (सदाचार और ईश्वरकी भक्तिरूप) धर्मका संग्रह करना चाहिये। धर्मात्मा जीव सर्वत्र पूजित होता है इसमें संशय नहीं है। तुम लोग सम्पूर्ण भोगोंसे सम्पन्न पुण्यलोकमें जाओ। यदि कोई पाप है तो पीछे यहीं आकर उसका फल भोगना।'

ऐसा कहकर यमराज उन पुण्यात्माओंकी पूजा करके उन्हें सद्गतिको पहुँचा देते हैं और पापियोंको बुलाकर उन्हें कालदण्डसे डराते हुए फटकारते हैं। उस समय उनकी आवाज प्रलयकालके मेघके समान भयंकर होती है और उनके शरीरकी कान्ति कज्जलगिरिके समान जान पड़ती है। उनके अस्त्र-शस्त्र बिजलीकी भाँति चमकते हैं, जिनके कारण वे बड़े भयंकर जान पड़ते हैं। उनके बत्तीस भुजाएँ हो जाती हैं। शरीरका विस्तार तीन योजनका होता है। उनकी लाल-लाल और भयंकर आँखें बावड़ीके समान जान पड़ती हैं। सब दूत यमराजके समान भयंकर होकर गरजने लगते हैं। उन्हें देखकर पापी जीव थर-थर काँपने लगते हैं और अपने-अपने कर्मोंका विचार करके शोकग्रस्त हो जाते हैं। उस समय यमकी आज्ञासे चित्रगुप्त उन सब पापियोंसे कहते है—'अरे, ओ दुराचारी पापात्माओ! तुम सब लोग अभिमानसे दूषित हो रहे हो। तुम

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अविवेकियोंने काम, क्रोध आदिसे दूषित अहंकारयुक्त चित्तसे किसलिये पापका आचरण किया है। पहले तो बड़े हर्षमें भरकर तुम लोगोंने पाप किये हैं, अब उसी प्रकार नरककी यातनाएँ भी भोगनी चाहिये। अपने कुटुम्ब, मित्र और स्त्रीके लिये जैसा पाप तुमने किया है, उसीके अनुसार कर्मवश तुम यहाँ आ पहुँचे हो। अब अत्यन्त दुःखी क्यों हो रहे हो? तुम्हीं सोचो, जब पहले तुमने पापाचार किया था, उस समय यह भी क्यों नहीं विचार लिया कि यमराज इसका दण्ड अवश्य देंगे। कोई दरिद्र हो या धनी, मूर्ख हो या पण्डित और कायर हो या वीर—यमराज सबके साथ समान बर्ताव करनेवाले हैं।' चित्रगुप्तका यह वचन सुनकर वे पापी भयभीत हो अपने कर्मोंके लिये शोक करते हुए चुपचाप खड़े रह जाते हैं। तब यमराजकी आज्ञाका पालन करनेवाले क्रूर, क्रोधी और भयंकर दूत इन पापियोंको बलपूर्वक पकड़कर नरकोंमें फेंक देते हैं। वहाँ अपने पापोंका फल भोगकर अन्तमें शेष पापके फलस्वरूप वे भूतलपर आकर स्थावर आदि योनियोंमें जन्म लेते हैं।

नारदजीने कहा—भगवन्! मेरे मनमें एक संदेह पैदा हो गया है। आपने ही कहा है कि जो लोग ग्राम-दान आदि पुण्यकर्म करते हैं, उन्हें कोटिसहस्र कल्पोंतक उनका महान् भोग प्राप्त होता रहता है। दूसरी ओर यह भी आपने बताया है कि प्राकृत प्रलयमें सम्पूर्ण लोकोंका नाश हो जाता है और एकमात्र भगवान् विष्णु ही शेष रह जाते हैं। अतः मुझे यह संशय हुआ है कि प्रलयकालतक जीवके पुण्य और पापभोगकी क्या समाप्ति नहीं होती? आप इस संदेहका निवारण करने योग्य हैं।

श्रीसनकजी बोले—महाप्राज्ञ! भगवान् नारायण अविनाशी, अनन्त, परमप्रकाशस्वरूप और सनातन पुरुष हैं। वे विशुद्ध, निर्गुण, नित्य और माया-मोहसे रहित हैं। परमानन्दस्वरूप श्रीहरि निर्गुण होते हुए भी सगुण-से प्रतीत होते हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि रूपोंमें व्यक्त होकर भेदवान्-से दिखायी देते हैं। वे ही मायाके संयोगसे सम्पूर्ण जगत्का कार्य करते हैं। वे ही श्रीहरि ब्रह्माजीके रूपसे सृष्टि और विष्णुरूपसे जगत्का पालन करते हैं और अन्तमें भगवान् रुद्रके रूपसे वे ही सबको अपना ग्रास बनाते हैं। यह निश्चित सत्य है। प्रलयकाल व्यतीत होनेपर भगवान् जनार्दनने शेषशय्यासे उठकर ब्रह्माजीके रूपसे सम्पूर्ण चराचर विश्वकी पूर्व कल्पोंके अनुसार सृष्टि की है। विप्रवर! पूर्व कल्पोंमें जो-जो स्थावर-जङ्गम जीव जहाँ-जहाँ स्थित थे, नूतन कल्पमें ब्रह्माजी उस सम्पूर्ण जगत्की पूर्ववत् सृष्टि कर देते हैं। अतः साधुशिरोमणे! किये हुए पापों और पुण्योंका अक्षय फल अवश्य भोगना पड़ता है (प्रलय हो जानेपर जीवके जिन कर्मोंका फल शेष रह जाता है, दूसरे कल्पमें नयी सृष्टि होनेपर वह जीव पुनः अपने पुरातन कर्मोंका भोग भोगता है।) कोई भी कर्म सौ करोड़ कल्पोंमें भी बिना भोगे नष्ट नहीं होता। अपने किये हुए शुभ और अशुभ कर्मोंका फल अवश्य ही भोगना पड़ता है*।

---

* नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि। अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्॥
(ना० पूर्व० ३९।६९-७०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पापी जीवोंके स्थावर आदि योनियोंमें जन्म लेने और दुःख भोगनेकी अवस्थाका वर्णन

श्रीसनकजी कहते हैं—इस प्रकार कर्मपाशमें बँधे हुए जीव स्वर्ग आदि पुण्यस्थानोंमें पुण्यकर्मोंका फल भोगकर तथा नरक-यातनाओंमें पापोंका अत्यन्त दुःखमय फल भोगकर क्षीण हुए कर्मोंके अवशेष भागसे इस लोकमें आकर स्थावर आदि योनियोंमें जन्म लेते हैं। वृक्ष, गुल्म, लता, वल्ली और पर्वत तथा तृण—ये स्थावरके नामसे विख्यात हैं। स्थावर जीव महामोहसे आच्छन्न होते हैं। स्थावर योनियोंमें उनकी स्थिति इस प्रकार होती है। पहले वे बीजरूपसे पृथ्वीमें बोये जाते हैं। फिर जलसे सींचनेके पश्चात् मूलभावको प्राप्त होते हैं। उस मूलसे अंकुरकी उत्पत्ति होती है। अंकुरसे पत्ते, तने और पतली डाली आदि प्रकट होते हैं। उन शाखाओंसे कलियाँ और कलियोंसे फूल प्रकट होते हैं। उन फूलोंसे ही वे धान्य वृक्ष फलवान् होते हैं। स्थावर योनिमें जो बड़े-बड़े वृक्ष होते हैं, वे भी दीर्घकालतक काटने, दावानलमें जलने तथा सर्दी-गरमी लगने आदिके महान् दुःखका अनुभव करके मर जाते हैं। तदनन्तर वे जीव कीट आदि योनियोंमें उत्पन्न होकर सदा अतिशय दुःख उठाते रहते हैं। अपनेसे बलवान् प्राणियोंद्वारा पीड़ा प्राप्त होनेपर वे उसका निवारण करनेमें असमर्थ होते हैं। शीत और वायु आदिके भारी क्लेश भोगते हैं और नित्य भूखसे पीड़ित हो मल-मूत्र आदिमें विचरते हुए दुःख-पर-दुःख उठाते रहते हैं। तदनन्तर इसी क्रमसे पशुयोनिमें आकर अपनेसे बलवान् पशुओंकी बाधासे भयभीत रहते हुए वे जीव अकारण भी भारी उद्वेगसे कष्ट पाते रहते हैं। उन्हें हवा, पानी आदिका महान् कष्ट सहन करना पड़ता है। अण्डज (पक्षी)-की योनिमें भी वे कभी वायु पीकर रहते हैं और कभी मांस तथा अपवित्र वस्तुएँ खाते हैं। ग्रामीण पशुओंकी योनिमें आनेपर भी उन्हें कभी भार ढोने, रस्सी आदिसे बाँधे जाने, डंडोंसे पीटे जाने तथा हल आदि धारण करनेके समस्त दुःख भोगने पड़ते हैं। इस प्रकार बहुत-सी योनियोंमें क्रमशः भ्रमण करके वे जीव मनुष्य-जन्म पाते हैं। कोई पुण्यविशेषके कारण बिना क्रमके भी शीघ्र मनुष्य-योनि प्राप्त कर लेते हैं। मनुष्य-जन्म पाकर भी नीची जातियोंमें नीच पुरुषोंकी टहल बजानेवाले, दरिद्र, अङ्गहीन तथा अधिक अङ्गवाले इत्यादि होकर वे कष्ट और अपमान उठाते हैं तथा अत्यन्त दुःखसे पूर्ण ज्वर, ताप, शीत, गुल्मरोग, पादरोग, नेत्ररोग, सिरदर्द, गर्भ-वेदना तथा पसलीमें दर्द होने आदिके भारी कष्ट भोगते हैं।

मनुष्य-जन्ममें भी जब स्त्री और पुरुष मैथुन करते हैं, उस समय वीर्य निकलकर जब जरायु (गर्भाशय)-में प्रवेश करता है, उसी समय जीव अपने कर्मोंके वशीभूत हो उस वीर्यके साथ गर्भाशयमें प्रविष्ट हो रज-वीर्यके कललमें स्थित होता है। वह वीर्य जीवके प्रवेश करनेके पाँच दिन बाद कललरूपमें परिणत होता है। फिर पंद्रह दिनके बाद वह पलल (मांसपिण्डकी-सी स्थिति) भागको प्राप्त हो एक महीनेमें प्रादेशमात्र* बड़ा हो जाता है। तबसे लेकर पूर्ण चेतनाका अभाव होनेपर भी माताके उदरमें दुस्सह ताप और क्लेश होनेसे वह एक स्थानपर स्थिर न रह सकनेके कारण वायुकी प्रेरणासे इधर-उधर भ्रमण करता है। फिर दूसरा महीना पूर्ण होनेपर वह मनुष्यके-से आकारको पाता है। तीसरे

* अँगूठेकी नोकसे लेकर तर्जनीकी नोकतककी लम्बाईको 'प्रादेश' कहते हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

महीनेकी पूर्णता होनेपर उसके हाथ-पैर आदि अवयव प्रकट होते हैं और चार महीने बीत जानेपर उसके सब अवयवोंकी सन्धिका भेद ज्ञात होने लगता है। पाँच महीनेपर अँगुलियोंमें नख प्रकट होते हैं। छः मास पूरे हो जानेपर नखोंकी सन्धि स्पष्ट हो जाती है। उसकी नाभिमें जो नाल होती है, उसीके द्वारा अन्नका रस पाकर वह पुष्ट होता है। उसके सारे अङ्ग अपवित्र मल-मूत्र आदिसे भीगे रहते हैं। जरायुमें उसका शरीर बँधा होता है और वह माताके रक्त, हड्डी, कीड़े, वसा, मज्जा, स्नायु और केश आदिसे दूषित तथा घृणित शरीरमें निवास करता है। माताके खाये हुए कड़वे, खट्टे, नमकीन तथा अधिक गरम भोजनसे वह अत्यन्त दग्ध होता रहता है। इस दुरवस्थामें अपने-आपको देखकर वह देहधारी जीव पूर्वजन्मोंकी स्मृतिके प्रभावसे पहलेके अनुभव किये हुए नरकके दुःखोंको भी स्मरण करता और आन्तरिक दुःखसे अधिकाधिक जलने लगता है। 'अहो! मैं बड़ा पापी हूँ! कामसे अन्धा होनेके कारण परायी स्त्रियोंको हरकर उनके साथ सम्भोग करके मैंने बड़े-बड़े पाप किये हैं। उन पापोंसे अकेला मैं ही ऐसे-ऐसे नरकोंका कष्ट भोगता रहा। फिर स्थावर आदि योनियोंमें महान् दुःख भोगकर अब मानवयोनिमें आया हूँ। आन्तरिक दुःख तथा बाह्य संतापसे दग्ध हो रहा हूँ। अहो! देहधारियोंको कितना दुःख उठाना पड़ता है। शरीर पापसे ही उत्पन्न होता है। इसलिये पाप नहीं करना चाहिये। मैंने कुटुम्ब, मित्र और स्त्रीके लिये दूसरोंका धन चुराया है। उसी पापसे आज गर्भकी झिल्लीमें बँधा हुआ जल रहा हूँ। पूर्वजन्ममें दूसरोंका धन देखकर ईर्ष्यावश जला करता था; इसीलिये मैं पापी जीव इस समय भी गर्भकी आगसे निरन्तर दग्ध हो रहा हूँ। मन, वाणी और शरीरसे मैंने दूसरोंको बहुत पीड़ा दी थी। उस पापसे आज मैं अकेला ही अत्यन्त दुःखी होकर जल रहा हूँ।' इस प्रकार वह गर्भस्थ जीव नाना प्रकारसे विलाप करके स्वयं ही अपने-आपको इस प्रकार आश्वासन देता है—'अब मैं जन्म लेनेके बाद सत्सङ्ग तथा भगवान् विष्णुकी कथाका श्रवण करके विशुद्ध-चित्त हो सत्कर्मोंका अनुष्ठान करूँगा और सम्पूर्ण जगत्के अन्तरात्मा तथा अपनी शक्तिके प्रभावसे अखिल विश्वकी सृष्टि करनेवाले सत्य-ज्ञानानन्दस्वरूप लक्ष्मीपति भगवान् नारायणके उन युगल-चरणारविन्दोंका भक्तिपूर्वक पूजन करूँगा। जिनकी समस्त देवता, असुर, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, नाग, मुनि तथा किन्नरसमुदाय आराधना करते रहते हैं। भगवान्के वे चरण दुस्सह संसार-बन्धनके मूलोच्छेदके हेतु हैं। वेदोंके रहस्यभूत उपनिषदोंद्वारा उनकी महिमाका स्पष्ट ज्ञान होता है। वे ही सम्पूर्ण जगत्के आश्रय हैं। मैं उन्हीं भगवच्चरणारविन्दोंको अपने हृदयमें रखकर अत्यन्त दुःखसे भरे हुए संसारको लाँघ जाऊँगा।' इस प्रकार वह मनमें भावना करता है।

नारदजी! जब माताके प्रसवका समय आता है, उस समय वह गर्भस्थ जीव वायुसे अत्यन्त पीड़ित हो माताको भी दुःख देता हुआ कर्मपाशसे बँधकर जबरदस्ती योनिमार्गसे निकलता है। निकलते समय सम्पूर्ण नरक-यातनाओंका भोग उसे एक ही साथ भोगना पड़ता है। बाहरकी वायुका स्पर्श होते ही उसकी स्मरणशक्ति नष्ट हो जाती है। फिर वह जीव बाल्यावस्थाको प्राप्त होता है। उसमें भी अपने ही मल-मूत्रमें उसका शरीर लिपटा रहता है। आध्यात्मिक आदि त्रिविध दुःखोंसे पीड़ित होकर भी वह कुछ नहीं बता सकता। उसके रोनेपर लोग यह समझते हैं कि यह भूख-प्याससे कष्ट पा रहा है, इसे दूध आदि देना चाहिये और इसी मान्यताके अनुसार

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarasvya Sharda Peeth

वे लोग प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार वह अनेक प्रकारके शारीरिक कष्ट-भोगका अनुभव करता है। मच्छरों और खटमलोंके काट लेनेपर वह उन्हें हटानेमें असमर्थ होता है। शैशवसे बाल्यावस्थामें पहुँचकर वहाँ माता-पिता और गुरुकी डाँट सुनता और चपत खाता है। वह बहुत-से निरर्थक कार्योंमें लगा रहता है। उन कार्योंके सफल न होनेपर वह मानसिक कष्ट पाता है। इस प्रकार बाल्य-जीवनमें अनेक प्रकारके कष्टोंका अनुभव करता है। तत्पश्चात् तरुणावस्थामें आनेपर जीव धनोपार्जन करते हैं। कमाये हुए धनकी रक्षा करनेमें लगे रहते हैं। उस धनके नष्ट या खर्च हो जानेपर अत्यन्त दुःखी होते हैं। मायासे मोहित रहते हैं। उनका अन्तःकरण काम-क्रोधादिसे दूषित हो जाता है। ये सदा दूसरोंके गुणोंमें भी दोष ही देखा करते हैं। पराये धन और परायी स्त्रीको हड़प लेनेके प्रयत्नमें लगे रहते हैं। पुत्र, मित्र और स्त्री आदिके भरण-पोषणके लिये क्या उपाय किया जाय? अब इस बढ़े हुए कुटुम्बका कैसे निर्वाह होगा? मेरे पास मूल-धन नहीं है (अतः व्यापार नहीं हो सकता), इधर वर्षा भी नहीं हो रही है (अतः खेतीसे क्या आशा की जाय), मेरी घरवालीके बच्चे अभी बहुत छोटे हैं (अतः उनसे काम-काजमें कोई मदद नहीं मिल सकती), इधर मैं भी रोगी हो चला और निर्धन ही रह गया। मेरे विचार न करनेसे खेती-बारी नष्ट हो गयी। बच्चे रोज रोया करते हैं। मेरा घर टूट-फूट गया। कोई जीविका भी नहीं मिलती। राजाकी ओरसे भी अत्यन्त दुःसह दुःख प्राप्त हो रहा है। शत्रु रोज मेरा पीछा करते हैं। मैं इन्हें कैसे जीतूँगा। इस प्रकार चिन्तासे व्याकुल तथा अपने दुःखको दूर करनेमें असमर्थ हो, वे कहते हैं—विधाताको धिक्कार है। उसने मुझ भाग्यहीनको पैदा ही क्यों किया? इसी तरह जीव जब वृद्धावस्थाको प्राप्त होता है तो उसका बल घटने लगता है। बाल सफेद हो जाते हैं और जरावस्थाके कारण सारे शरीरमें झुर्रियाँ पड़ जाती हैं। अनेक प्रकारके रोग उसे पीड़ा देने लगते हैं। उसका एक-एक अङ्ग काँपता रहता है। दमा और खाँसी आदिसे वह पीड़ित होता है। कीचड़से मलिन हुई आँखें चञ्चल एवं कातर हो उठती हैं। कफसे कण्ठ भर जाता है। पुत्र और पत्नी आदि भी उसे ताड़ना करते हैं। मैं कब मर जाऊँगा—इस चिन्तासे वह व्याकुल हो उठता है और सोचने लगता है कि मेरे मर जानेके बाद यदि दूसरोंने मेरा धन हड़प लिया तो मेरे पुत्र आदिका जीवन-निर्वाह कैसे होगा? इस प्रकार ममता और दुःखमें डूबा हुआ वह लंबी साँस खींचता है और अपनी आयुमें किये हुए कर्मोंको बार-बार स्मरण करता है तथा क्षण-क्षणमें भूल जाता है। फिर जब मृत्युकाल निकट आता है तो वह रोगसे पीड़ित हो आन्तरिक संतापसे व्याकुल हो जाता है। मेरे कमाये हुए धन आदि किसके अधिकारमें होंगे—इस चिन्तामें पड़कर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उसकी आँखोंमें आँसू भर आते हैं। कण्ठ घुरघुराने लगता है और इस दशामें शरीरसे प्राण निकल जाते हैं। फिर यमदूतोंकी डाँट-फटकार सुनता हुआ वह जीव पाशमें बँधकर पूर्ववत् नरक आदिके कष्ट भोगता है। जिस प्रकार सुवर्ण आदि धातु तबतक आगमें तपाये जाते हैं, जबतक कि उनकी मैल नहीं जल जाती। उसी प्रकार सब जीवधारी कर्मोंके क्षय होनेतक अत्यन्त कष्ट भोगते हैं।

द्विजश्रेष्ठ! इसलिये संसाररूपी दावानलके तापसे संतप्त मनुष्य परम ज्ञानका अभ्यास करे। ज्ञानसे वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है। ज्ञानशून्य मनुष्य पशु कहे गये हैं। अतः संसार-बन्धनसे मुक्त होनेके लिये परम ज्ञानका अभ्यास करे[1]। सब कर्मोंको सिद्ध करनेवाले मानव-जन्मको पाकर भी जो भगवान् विष्णुकी सेवा नहीं करता, उससे बढ़कर मूर्ख कौन हो सकता है? मुनिश्रेष्ठ! सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फलोंके दाता जगदीश्वर भगवान् विष्णुके रहते हुए भी मनुष्य ज्ञानरहित होकर नरकोंमें पकाये जाते हैं—यह कितने आश्चर्यकी बात है। जिससे मल-मूत्रका स्रोत बहता रहता है, ऐसे इस क्षणभङ्गुर शरीरमें अज्ञानी पुरुष महान् मोहसे आच्छन्न होनेके कारण नित्यताकी भावना करते हैं। जो मनुष्य मांस तथा रक्त आदिसे भरे हुए उस घृणित शरीरको पाकर संसार-बन्धनका नाश करनेवाले भगवान् विष्णुका भजन नहीं करता, वह अत्यन्त पातकी है। ब्रह्मन्! मूर्खता या अज्ञान अत्यन्त कष्टकारक है, महान् दुःख देनेवाला है, परंतु भगवान्के ध्यानमें लगा हुआ चाण्डाल भी ज्ञान प्राप्त करके महान् सुखी हो जाता है। मनुष्यका जन्म दुर्लभ है। देवता भी उसके लिये प्रार्थना करते हैं। अतः उसे पाकर विद्वान् पुरुष परलोक सुधारनेका यत्न करे[2]। जो अध्यात्मज्ञानसे सम्पन्न तथा भगवान्की आराधनामें तत्पर रहनेवाले हैं, वे पुनरावृत्तिरहित परम धामको पा लेते हैं। जिनसे यह सम्पूर्ण विश्व उत्पन्न हुआ है, जिनसे चेतना पाता है और जिनमें ही इसका लय होता है, वे भगवान् विष्णु ही संसार-बन्धनसे छुड़ानेवाले हैं। जो अनन्त परमेश्वर निर्गुण होते हुए भी सगुण-से प्रतीत होते हैं, उन देवेश्वर श्रीहरिकी पूजा-अर्चा करके मनुष्य संसार-बन्धनसे मुक्त हो जाता है।

मोक्षप्राप्तिका उपाय, भगवान् विष्णु ही मोक्षदाता हैं—इसका प्रतिपादन, योग तथा उसके अङ्गोंका निरूपण

नारदजीने पूछा—भगवन्! कर्मसे देह मिलता है। देहधारी जीव कामनासे बँधता है। कामसे वह लोभके वशीभूत होता है और लोभसे क्रोधके अधीन हो जाता है। क्रोधसे धर्मका नाश होता है। धर्मके नाशसे बुद्धि बिगड़ जाती है और जिसकी बुद्धि नष्ट हो जाती है, वह मनुष्य पुनः पाप करने लगता है। अतः देह ही पापकी जड़ है तथा उसीकी पापकर्ममें प्रवृत्ति होती है, इसलिये मनुष्य इस देहके भ्रमको त्यागकर जिस प्रकार मोक्षका भागी हो सके, वह उपाय बताइये।

---

१. तस्मात्संसारदावाग्नितापार्तो द्विजसत्तम। अभ्यसेत्परमं ज्ञानं ज्ञानान्मोक्षमवाप्नुयात्॥
ज्ञानशून्या नरा ये तु पशवः परिकीर्तिताः। तस्मात्संसारमोक्षाय परं ज्ञानं समभ्यसेत्॥
(ना० पूर्व० ३२। ३९-४०)

२. दुर्लभं मानुषं जन्म प्रार्थ्यते त्रिदशैरपि। तल्लब्ध्वा परलोकार्थं यत्नं कुर्याद् विचक्षणः॥
(ना० पूर्व० ३२। ४७)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

श्रीसनकजीने कहा—महाप्राज्ञ! सुव्रत! जिनकी आज्ञासे ब्रह्माजी सम्पूर्ण जगत्की सृष्टि, विष्णु पालन तथा रुद्र संहार करते हैं, महत्तत्त्वसे लेकर विशेषपर्यन्त सभी तत्त्व जिनके प्रभावसे उत्पन्न हुए हैं, उन रोग-शोकसे रहित सर्वव्यापी भगवान् नारायणको ही मोक्षदाता जानना चाहिये। सम्पूर्ण चराचर जगत् जिनसे भिन्न नहीं है तथा जो जरा और मृत्युसे परे हैं, उस तेज प्रभाववाले भगवान् नारायणका ध्यान करके मनुष्य दुःखसे मुक्त हो जाता है। जो विकाररहित, अजन्मा, शुद्ध, स्वयंप्रकाश, निरञ्जन, ज्ञानरूप तथा सच्चिदानन्दमय हैं, ब्रह्मा आदि देवता जिनके अवतारस्वरूपोंकी सदा आराधना करते हैं, वे श्रीहरि ही सनातन स्थान (परम धाम या मोक्ष)-के दाता हैं। ऐसा जानना चाहिये। जो निर्गुण होकर भी सम्पूर्ण गुणोंके आधार हैं, लोकोंपर अनुग्रह करनेके लिये विविध रूप धारण करते हैं और सबके हृदयाकाशमें विराजमान तथा सर्वत्र परिपूर्ण हैं, जिनकी कहीं भी उपमा नहीं है तथा जो सबके आधार हैं, उन भगवान्की शरणमें जाना चाहिये। जो कल्पके अन्तमें सबको अपने भीतर समेटकर स्वयं जलमें शयन करते हैं, वेदार्थके ज्ञाता तथा कर्मकाण्डके विद्वान् नाना प्रकारके यज्ञोंद्वारा जिनका यजन करते हैं, वे ही भगवान् कर्मफलके दाता हैं और निष्कामभावसे कर्म करनेवालोंको वे ही मोक्ष देते हैं। जो ध्यान, प्रणाम अथवा भक्तिपूर्वक पूजन करनेपर अपना सनातन स्थान वैकुण्ठ प्रदान करते हैं, उन दयालु भगवान्की आराधना करनी चाहिये। मुनीश्वर! जिनके चरणारविन्दोंकी पूजा करके देहाभिमानी जीव भी शीघ्र ही अमृतत्व (मोक्ष) प्राप्त कर लेते हैं, उन्हींको ज्ञानीजन पुरुषोत्तम मानते हैं। जो आनन्दस्वरूप, जरारहित, परमज्योतिर्मय, सनातन एवं परात्पर ब्रह्म हैं, वही भगवान् विष्णुका सुप्रसिद्ध परम पद है। जो अद्वैत, निर्गुण, नित्य, अद्वितीय, अनुपम, परिपूर्ण तथा ज्ञानमय ब्रह्म है, उसीको साधु पुरुष मोक्षका साधन मानते हैं। जो योगी पुरुष योगमार्गकी विधिसे ऐसे परम तत्त्वकी उपासना करता है, वह परम पदको प्राप्त होता है। जो सब प्रकारकी आसक्तियोंका त्याग करनेवाला, शम-दम आदि गुणोंसे युक्त और काम आदि दोषोंसे रहित है, वह योगी परम पदको पाता है।

नारदजीने पूछा—वक्ताओंमें श्रेष्ठ! किस कर्मसे योगियोंके योगकी सिद्धि होती है? वह उपाय यथार्थरूपसे मुझे बताइये।

श्रीसनकजीने कहा—तत्त्वार्थका विचार करनेवाले ज्ञानी पुरुष कहते हैं कि परम मोक्ष ज्ञानसे ही प्राप्त होने योग्य है। उस ज्ञानका मूल है भक्ति और भक्ति प्राप्त होती है (भगवदर्थ) कर्म करनेवालोंको। भक्तिका लेशमात्र होनेसे भी अक्षय परम धर्म सम्पन्न होता है। उत्कृष्ट श्रद्धासे सब पाप नष्ट हो जाते हैं। सब पापोंका नाश होनेपर निर्मल बुद्धिका उदय होता है। वह निर्मल बुद्धि ही ज्ञानी पुरुषोंद्वारा ज्ञानके नामसे बतायी गयी है। ज्ञानको मोक्ष देनेवाला कहा गया है। वैसा ज्ञान योगियोंको होता है। कर्मयोग और ज्ञानयोग—इस प्रकार दो प्रकारका योग कहा गया है। कर्मयोगके बिना मनुष्योंका ज्ञानयोग सिद्ध नहीं होता; अतः क्रिया (कर्म)-योगमें तत्पर होकर श्रद्धापूर्वक भगवान् श्रीहरिकी पूजा करनी चाहिये। ब्राह्मण, भूमि, अग्नि, सूर्य, जल, धातु, हृदय तथा चित्र नामवाली—ये भगवान् केशवकी आठ प्रतिमाएँ हैं। इनमें भक्तिपूर्वक भगवान्का पूजन करना चाहिये। अतः मन, वाणी और क्रियाद्वारा दूसरोंको पीड़ा न देते हुए भक्तिभावसे संयुक्त हो सर्वव्यापी भगवान् विष्णुकी पूजा करे। अहिंसा, सत्य, क्रोधका अभाव, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, ईर्ष्याका त्याग तथा दया—ये सद्गुण ज्ञानयोग

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और कर्मयोग—दोनोंमें समानरूपसे आवश्यक हैं*। यह चराचर विश्व सनातन भगवान् विष्णुका ही स्वरूप है। ऐसा मनसे निश्चय करके उक्त दोनों योगोंका अभ्यास करे। जो मनीषी पुरुष समस्त प्राणियोंको अपने आत्माके ही समान मानते हैं, वे ही देवाधिदेव चक्रसुदर्शनधारी भगवान् विष्णुके परम भावको जानते हैं। जो असूया (दूसरोंके दोष देखने)-में संलग्न हो तपस्या, पूजा और ध्यानमें प्रवृत्त होता है, उसकी वह तपस्या, पूजा और ध्यान सब व्यर्थ होते हैं। इसलिये शम, दम आदि गुणोंके साधनमें लगकर विधिपूर्वक क्रियायोगमें तत्पर हो मनुष्य अपनी मुक्तिके लिये सर्वस्वरूप भगवान् विष्णुकी पूजा करे। जो सम्पूर्ण लोकोंके हितसाधनमें तत्पर हो मन, वाणी और क्रियाद्वारा देवेश्वर भगवान् विष्णुका भलीभाँति पूजन करता है, जो जगत्के कारणभूत, सर्वान्तर्यामी एवं सर्वपापहारी सर्वव्यापी भगवान् विष्णुकी स्तोत्र आदिके द्वारा स्तुति करता है, वह कर्मयोगी कहा जाता है। उपवास आदि व्रत, पुराणश्रवण आदि सत्कर्म तथा पुष्प आदि सामग्रियोंसे जो भगवान् विष्णुकी पूजा की जाती है, उसे क्रियायोग कहा गया है। इस प्रकार जो भगवान् विष्णुमें भक्ति रखकर क्रियायोगमें मन लगानेवाले हैं, उनके पूर्वजन्मोंके किये हुए समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। पापोंके नष्ट होनेसे जिसकी बुद्धि शुद्ध हो जाती है, वह उत्तम ज्ञानकी इच्छा रखता है; क्योंकि ज्ञान मोक्ष देनेवाला है—ऐसा जानना चाहिये। अब मैं तुम्हें ज्ञान-प्राप्तिका उपाय बतलाता हूँ।

बुद्धिमान् पुरुषको चाहिये कि वह शास्त्रार्थविशारद साधुपुरुषोंके सहयोगसे इस चराचर विश्वमें स्थित नित्य और अनित्य वस्तुका भलीभाँति विचार करे। संसारके सभी पदार्थ अनित्य हैं। केवल भगवान् श्रीहरि नित्य माने गये हैं। अतः अनित्य वस्तुओंका परित्याग करके नित्य श्रीहरिका ही आश्रय लेना चाहिये। इहलोक और परलोकके जितने भोग हैं, उनकी ओरसे विरक्त होना चाहिये। जो भोगोंसे विरक्त नहीं होता, वह संसारमें फँस जाता है। जो मानव जगत्के अनित्य पदार्थोंमें आसक्त होता है, उसके संसार-बन्धनका नाश कभी नहीं होता। अतः शम, दम आदि गुणोंसे सम्पन्न हो मुक्तिकी इच्छा रखकर ज्ञान-प्राप्तिके लिये साधन करे। जो शम (दम, तितिक्षा, उपरति, श्रद्धा और समाधान) आदि गुणोंसे शून्य है, उसे ज्ञानकी प्राप्ति नहीं होती। जो राग-द्वेषसे रहित, शमादि गुणोंसे सम्पन्न तथा प्रतिदिन भगवान् विष्णुके ध्यानमें तत्पर है, उसीको 'मुमुक्षु' कहते हैं। इन चार (नित्यानित्यवस्तुविचार, वैराग्य, षट् सम्पत्ति और मुमुक्षुत्व—) साधनोंसे मनुष्य विशुद्धबुद्धि कहा जाता है। ऐसा पुरुष सम्पूर्ण

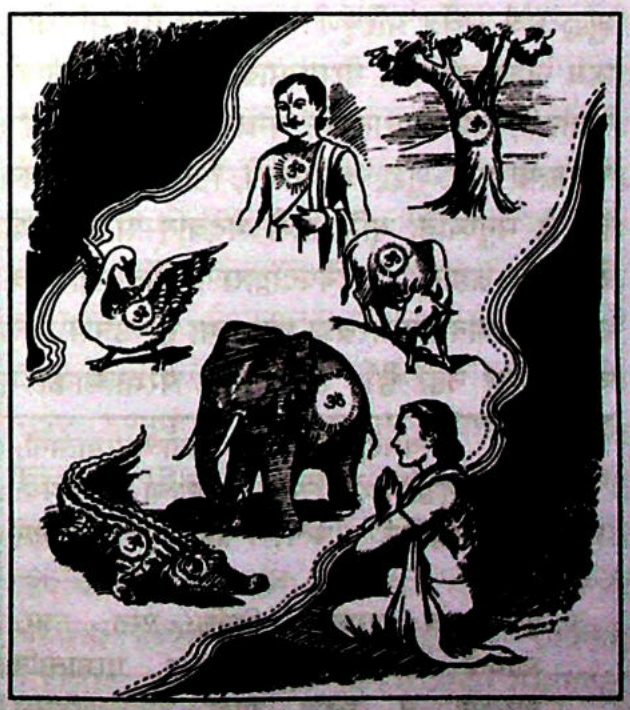

* अहिंसा सत्यमक्रोधो ब्रह्मचर्यापरिग्रहौ । अनीर्ष्या च दया चैव योगयोरुभयोः समाः ॥
(ना० पूर्व० ३३ । ३५)

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarasvya Sharda Peeth

प्राणियोंके प्रति दयाभाव रखते हुए सदा सर्वव्यापी भगवान् विष्णुका ध्यान करे। ब्रह्मन्! क्षर-अक्षर (जड-चेतन) स्वरूप सम्पूर्ण विश्वको व्याप्त करके भगवान् नारायण विराजमान हैं। ऐसा जो जानता है, उसका ज्ञान योगज माना गया है। अतः मैं योगका उपाय बतलाता हूँ। जो संसार-बन्धनको दूर करनेवाला है।

पर और अपर-भेदसे आत्मा दो प्रकारका कहा गया है। अथर्ववेदकी श्रुति भी कहती है कि दो ब्रह्म जानने योग्य हैं। पर आत्मा अथवा परब्रह्मको निर्गुण बताया गया है तथा अपर आत्मा या अपरब्रह्म अहंकारयुक्त (जीवात्मा) कहा गया है। इन दोनोंके अभेदका ज्ञान 'ज्ञानयोग' कहलाता है। इस पाञ्चभौतिक शरीरके भीतर हृदयदेशमें जो साक्षीरूपमें स्थित है, उसे साधु पुरुषोंने अपरात्मा कहा है तथा परमात्मा पर (श्रेष्ठ) माने गये हैं। शरीरको क्षेत्र कहते हैं। जो क्षेत्रमें स्थित आत्मा है, वह क्षेत्रज्ञ कहलाता है। परमात्मा अव्यक्त, शुद्ध एवं सर्वत्र परिपूर्ण कहा गया है। मुनिश्रेष्ठ! जब जीवात्मा और परमात्माके अभेदका ज्ञान हो जाता है, तब अपरात्माके बन्धनका नाश होता है। परमात्मा एक, शुद्ध, अविनाशी, नित्य एवं जगन्मय हैं। वे मनुष्योंके बुद्धिभेदसे भेदवान्-से दिखायी देते हैं। ब्रह्मन्! उपनिषदोंद्वारा वर्णित जो एक अद्वितीय सनातन परब्रह्म परमात्मा हैं, उनसे भिन्न कोई वस्तु नहीं है[1]। उन निर्गुण परमात्माका न कोई रूप है, न रंग है, न कर्तव्य कर्म है और न कर्तृत्व या भोक्तृत्व ही है। वे सब कारणोंके भी आदिकारण हैं, सम्पूर्ण तेजोंके प्रकाशक परम तेज हैं। उनसे भिन्न दूसरी कोई वस्तु नहीं है। मुक्तिके लिये उन्हीं परमात्माका ज्ञान प्राप्त करना चाहिये। ब्रह्मन्! शब्दब्रह्ममय जो महावाक्य आदि हैं अर्थात् वेदवर्णित जो '**तत्त्वमसि**', '**सोऽहमस्मि**' इत्यादि महावाक्य हैं, उनपर विचार करनेसे जीवात्मा और परमात्माका अभेद ज्ञान प्रकाशित होता है, वह मुक्तिका सर्वश्रेष्ठ साधन है। नारदजी! जो उत्तम ज्ञानसे हीन हैं, उन्हें यह जगत् नाना भेदोंसे युक्त दिखायी देता है, परंतु परम ज्ञानियोंकी दृष्टिमें यह सब परब्रह्मरूप है। परमानन्दस्वरूप, परात्पर, अविनाशी एवं निर्गुण परमात्मा एक ही हैं, किंतु बुद्धिभेदसे वे भिन्न-भिन्न अनेक रूप धारण करनेवाले प्रतीत होते हैं। द्विजश्रेष्ठ! जिनके ऊपर मायाका पर्दा पड़ा है, वे मायाके कारण परमात्मामें भेद देखते हैं, अतः मुक्तिकी इच्छा रखनेवाला पुरुष योगके बलसे मायाको निस्सार समझकर त्याग दे। माया न सद्रूप है, न असद्रूप, न सद्-असद् उभयरूप है, अतः उसे अनिर्वाच्य (किसी रूपमें भी न कहने योग्य) समझना चाहिये। वह केवल भेदबुद्धि प्रदान करनेवाली है। मुनिश्रेष्ठ! अज्ञान शब्दसे मायाका ही बोध होता है, अतः जो मायाको जीत लेते हैं, उनके अज्ञानका नाश हो जाता है[2]। ज्ञान शब्दसे सनातन परब्रह्मका ही प्रतिपादन किया

१. यदा त्वभेदविज्ञानं जीवात्मपरमात्मनोः। भवेत्तदा मुनिश्रेष्ठ पाशच्छेदोऽपरात्मनः॥
एकः शुद्धोऽक्षरो नित्यः परमात्मा जगन्मयः। नृणां विज्ञानभेदेन भेदवानिव लक्ष्यते॥
एकमेवाद्वितीयं यत्परं ब्रह्म सनातनम्। गीयमानं च वेदान्तैस्तस्मान्नास्ति परं द्विज॥
(ना० पूर्व० ३३। ६०—६२)

२. एक एव परानन्दो निर्गुणः परतः परः। भाति विज्ञानभेदेन बहुरूपधरोऽव्ययः॥
मायिनो मायया भेदं पश्यन्ति परमात्मनि। तस्मान्मायां त्यजेद्योगान्मुमुक्षुर्द्विजसत्तम॥
नासद्रूपा न सद्रूपा माया नैवोभयात्मिका। अनिर्वाच्या ततो ज्ञेया भेदबुद्धिप्रदायिनी॥
मायैवाज्ञानशब्देन बुद्ध्यते मुनिसत्तम। तस्मादज्ञानविच्छेदो भवेद्वै जितमायिनाम्॥
(ना० पूर्व० ३३। ६७—७०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जाता है, क्योंकि ज्ञानियोंके हृदयमें निरन्तर परमात्मा प्रकाशित होते रहते हैं। मुनिश्रेष्ठ! योगी पुरुष योगके द्वारा अज्ञानका नाश करे। योग आठ अङ्गोंसे सिद्ध होता है; अतः मैं उन आठों अङ्गोंका यथार्थरूपसे वर्णन करता हूँ।

मुनिवर नारद! यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि—ये योगके आठ अङ्ग हैं[1]। मुनीश्वर! अब क्रमशः संक्षेपसे इनके लक्षण बतलाता हूँ। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, अक्रोध और अनसूया—ये संक्षेपसे यम बताये गये हैं। सम्पूर्ण प्राणियोंमेंसे किसीको (कभी किंचिन्मात्र) भी जो कष्ट न पहुँचानेका भाव है, उसे सत्पुरुषोंने 'अहिंसा' कहा है। 'अहिंसा' योगमार्गमें सिद्धि प्रदान करनेवाली है। मुनिश्रेष्ठ! धर्म और अधर्मका विचार रखते हुए जो यथार्थ बात कही जाती है, उसे श्रेष्ठ पुरुष 'सत्य' कहते हैं। चोरीसे या बलपूर्वक जो दूसरेके धनको हड़प लेना है, वह साधु पुरुषोंद्वारा 'स्तेय' कहा गया है। इसके विपरीत किसीकी वस्तुको न लेना 'अस्तेय' है। सब प्रकारसे मैथुनका त्याग 'ब्रह्मचर्य' कहा गया है। मुनीश्वर! आपत्तिकालमें भी द्रव्योंका संग्रह न करना 'अपरिग्रह' कहा गया है। वह योगमार्गमें उत्तम सिद्धि प्रदान करनेवाला है। जो अपना उत्कर्ष जताते हुए किसीके प्रति अत्यन्त कठोर वचन बोलता है, उसके उस क्रूरतापूर्ण भावको धर्मज्ञ पुरुष 'क्रोध' कहते हैं, इसके विपरीत शान्तभावका नाम 'अक्रोध' है। धन आदिके द्वारा किसीको बढ़ते देखकर डाहके कारण जो मनमें संताप होता है, उसे साधु पुरुषोंने 'असूया' (ईर्ष्या) कहा है; इस 'असूया' का त्याग ही 'अनसूया' है। देवर्षे! इस प्रकार संक्षेपसे 'यम' बताये गये हैं। नारदजी! अब मैं तुम्हें 'नियम' बतला रहा हूँ, सुनो। तप, स्वाध्याय, संतोष, शौच, भगवान् विष्णुकी आराधना तथा संध्योपासन आदि नियम कहे गये हैं। जिसमें चान्द्रायण आदि व्रतोंके द्वारा शरीरको कृश किया जाता है, उसे साधु पुरुषोंने 'तप' कहा है। वह योगका उत्तम साधन है। ब्रह्मन्! ॐकार, उपनिषद्, द्वादशाक्षर-मन्त्र (**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**), अष्टाक्षर-मन्त्र (**ॐ नमो नारायणाय**) तथा तत्त्वमसि आदि महावाक्योंके समुदायका जो जप, अध्ययन एवं विचार है, उसे 'स्वाध्याय' कहा गया है। वह भी योगका उत्तम साधन है। जो मूढ़ उपर्युक्त स्वाध्याय छोड़ देता है, उसका योग सिद्ध नहीं होता। किंतु योगके बिना भी केवल स्वाध्यायमात्रसे मनुष्योंके पापका नाश हो जाता है। स्वाध्यायसे संतुष्ट किये हुए इष्टदेवता प्रसन्न होते हैं। विप्रवर! जप तीन प्रकारका कहा गया है—वाचिक, उपांशु और मानस। इन तीन भेदोंमें भी पूर्व-पूर्वकी अपेक्षा उत्तर-उत्तर श्रेष्ठ है। विधिपूर्वक अक्षर और पदको स्पष्ट बोलते हुए जो मन्त्रका उच्चारण किया जाता है, उसे 'वाचिक' जप बताया गया है। वह सम्पूर्ण यज्ञोंका फल देनेवाला है। कुछ मन्द स्वरमें मन्त्रका उच्चारण करते समय एक पदसे दूसरे पदका विभाग करते जाना 'उपांशु' जप कहा गया है। वह पहलेकी अपेक्षा दूना महत्त्व रखता है। मन-ही-मन अक्षरोंकी श्रेणीका चिन्तन करते हुए जो उसके अर्थपर विचार किया जाता है, वह 'मानस' जप कहा गया है। मानस जप योगसिद्धि देनेवाला है[2]। जपसे स्तुति करनेवाले पुरुषपर इष्टदेव नित्य प्रसन्न रहते हैं, इसलिये

१. यमाश्च नियमाश्चैव आसनानि च सत्तम। प्राणायामः प्रत्याहारो धारणा ध्यानमेव च॥
समाधिश्च मुनिश्रेष्ठ योगाङ्गानि यथाक्रमम्। (ना० पूर्व० ३३। ७३-७४)

२. धिया यदक्षरश्रेण्यां तत्तदर्थविचारणम्। स जपो मानसः प्रोक्तो योगसिद्धिप्रदायकः॥ (ना० पूर्व० ३३। ९५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

स्वाध्यायपरायण मनुष्य सम्पूर्ण मनोरथोंको पा लेता है। प्रारब्धके अनुसार जो कुछ मिल जाय, उसीसे प्रसन्न रहना 'संतोष' कहलाता है। संतोषहीन पुरुष कहीं सुख नहीं पाता। भोगोंकी कामना भोग्य वस्तुओंको भोग लेनेसे शान्त नहीं होती, अपितु इससे भी अधिक भोग मुझे कब मिलेगा—इस प्रकार कामना बढ़ती रहती है। अतः कामनाका त्याग करके दैवात् जो कुछ मिले, उसीसे संतुष्ट रहकर मनुष्यको धर्मके पालनमें लगे रहना चाहिये। बाह्यशौच और आभ्यन्तर शौचके भेदसे 'शौच' दो प्रकारका माना गया है। मिट्टी और जलसे जो शरीरको शुद्ध किया जाता है, वह बाह्यशौच है और अन्तःकरणके भावकी जो शुद्धि है, उसे आभ्यन्तरशौच कहा गया है। मुनिश्रेष्ठ! आन्तरिक शुद्धिसे हीन पुरुषोंद्वारा जो नाना प्रकारके यज्ञ किये जाते हैं, वे राखमें डाली हुई आहुतिके समान निष्फल होते हैं। अतः राग आदि सब दोषोंका त्याग करके सुखी होना चाहिये। हजारों भार मिट्टी और करोड़ों घड़े जलसे शरीरकी शुद्धि कर लेनेपर भी जिसका अन्तःकरण दूषित है, वह चाण्डालके ही समान अपवित्र माना गया है। जो आन्तरिक शुद्धिसे रहित होकर केवल बाहरसे शरीरको शुद्ध करता है, वह ऊपरसे सजाये हुए मदिरापात्रकी भाँति अपवित्र ही है, उसे शान्ति नहीं मिलती। जो मानसिक शुद्धिसे हीन होकर तीर्थयात्रा करते हैं, उन्हें वे तीर्थ उसी तरह पवित्र नहीं करते जैसे मदिरासे भरे हुए पात्रको नदियाँ। मुनिश्रेष्ठ! जो वाणीसे धर्मोंका उपदेश करता और मनसे पापकी इच्छा रखता है, उसे महापातकियोंका सिरमौर समझना चाहिये। जिनका अन्तःकरण शुद्ध है, वे यदि परम उत्तम धर्ममार्गका आचरण करते हैं तो उसका फल अक्षय एवं सुखदायक जानना चाहिये। मन, वाणी और क्रियाद्वारा स्तुति, कथाश्रवण तथा पूजा करनेसे भगवान् विष्णुमें जिसकी दृढ़ भक्ति हो गयी है, उसकी वह भक्ति भी भगवान् विष्णुकी 'आराधना' कही गयी है (तथा संध्योपासना तो प्रसिद्ध ही है)। नारदजी! इस प्रकार मैंने यम और नियमोंको संक्षेपसे समझाया। इनके द्वारा जिनका चित्त शुद्ध हो गया है, उनके मोक्ष हस्तगत ही है—ऐसा माना जाता है। यम और नियमोंद्वारा बुद्धिको स्थिर करके जितेन्द्रिय पुरुष योग-साधनाके अनुकूल उत्तम आसनका विधिपूर्वक अभ्यास करे।

पद्मासन, स्वस्तिकासन, पीठासन, सिंहासन, कुक्कुटासन, कुञ्जरासन, कूर्मासन, वज्रासन, वाराहासन, मृगासन, चैलिकासन, क्रौञ्चासन, नालिकासन, सर्वतोभद्रासन, वृषभासन, नागासन, मत्स्यासन, व्याघ्रासन, अर्धचन्द्रासन, दण्डवातासन, शैलासन, खड्गासन, मुद्गरासन, मकरासन, त्रिपथासन, काष्ठासन, स्थाणु-आसन, वैकर्णिकासन, भौमासन और वीरासन—ये सब योगसाधनके हेतु हैं। मुनीश्वरोंने ये तीस आसन बनाये हैं। साधक पुरुष शीत-उष्ण आदि द्वन्द्वोंसे पृथक् हो ईर्ष्या-द्वेष छोड़कर गुरुदेवके चरणोंमें भक्ति रखते हुए उपर्युक्त आसनोंमेंसे किसी एकको सिद्ध करके प्राणोंको जीतनेका अभ्यास करे। जहाँ मनुष्योंकी भीड़ न हो और किसी प्रकारका कोलाहल न होता हो, ऐसे एकान्त स्थानमें पूर्व, उत्तर अथवा पश्चिमकी ओर मुँह करके अभ्यासपूर्वक प्राणोंको जीते—प्राणायामका अभ्यास करे। शरीरके भीतर स्थित वायुका नाम प्राण है। उसके विग्रह (वशमें करनेकी चेष्टा)-को आयाम कहते हैं। यही 'प्राणायाम' कहा गया है। उसके दो भेद बताये गये हैं—एक अगर्भ प्राणायाम और दूसरा सगर्भ प्राणायाम, इनमें दूसरा श्रेष्ठ है। जप और ध्यानके बिना जो प्राणायाम किया जाता है, वह अगर्भ है और जप तथा ध्यानके सहित किये जानेवाले

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्राणायामको सगर्भ कहते हैं। मनीषी पुरुषोंने इस दो भेदोंवाले प्राणायामको रेचक, पूरक, कुम्भक और शून्यकके भेदसे चार प्रकारका बताया है। जीवोंकी दाहिनी नाड़ीका नाम पिङ्गला है। उसके देवता सूर्य हैं। उसे पितृयोनि भी कहते हैं। इसी प्रकार बायीं नाड़ीका नाम इडा है, जिसे देवयोनि भी कहते हैं। मुनिश्रेष्ठ! चन्द्रमाको उसका अधिदेवता समझो। इन दोनोंके मध्यभागमें सुषुम्ना नाड़ी है। यह अत्यन्त सूक्ष्म और परम गुह्य है। ब्रह्माजीको इसका अधिदेवता जानना चाहिये। नासिकाके बायें छिद्रसे वायुको बाहर निकाले। रेचन करने (निकालने)-के कारण इसका नाम 'रेचक' है, फिर नासिकाके दाहिने छिद्रसे वायुको अपने भीतर भरे। वायुको पूर्ण करने (भरने)-के कारण इसे 'पूरक' कहा गया है। अपने देहमें भरी हुई वायुको रोके रहे, छोड़े नहीं और भरे हुए कुम्भ (घड़े)-की भाँति स्थिरभावसे बैठा रहे। कुम्भकी भाँति स्थित होनेके कारण इस प्राणायामका नाम 'कुम्भक' है। बाहरकी वायुको न तो भीतरकी ओर ग्रहण करे और न भीतरकी वायुको बाहर निकाले। जैसे हो, वैसे ही स्थित रहे। इस तरहके प्राणायामको 'शून्यक' समझो। जैसे मतवाले गजराजको धीरे-धीरे वशमें किया जाता है, उसी प्रकार प्राणको धीरे-धीरे जीतना चाहिये। अन्यथा बड़े-बड़े भयङ्कर रोग हो जाते हैं। जो योगी क्रमशः वायुको जीतनेका अभ्यास करता है, वह निष्पाप हो जाता है और सब पापोंसे मुक्त होनेपर वह ब्रह्मलोकको प्राप्त होता है।

'मुनीश्वर! जो विषयोंमें फँसी हुई इन्द्रियोंको विषयोंसे सर्वथा समेटकर अपने भीतर रोके रहता है, उसके इस प्रयत्नका नाम 'प्रत्याहार' है। ब्रह्मन्! जिन्होंने प्रत्याहारद्वारा अपनी इन्द्रियोंको जीत लिया है, वे महात्मा पुरुष ध्यान न करनेपर भी पुनरावृत्तिरहित परब्रह्म पदको प्राप्त कर लेते हैं। जो इन्द्रियसमुदायको वशमें किये बिना ही ध्यानमें तत्पर होता है, उसे मूर्ख समझो; क्योंकि उसका ध्यान सिद्ध नहीं होता। मनुष्य जिस-जिस वस्तुको देखता है, उसे अपने आत्मामें आत्मस्वरूप समझे और प्रत्याहारद्वारा वशमें की हुई इन्द्रियोंको अपने आत्मामें ही अन्तर्मुख करके धारण करे। इस प्रकार इन्द्रियोंको जो आत्मामें धारण करना है, उसीको 'धारणा' कहते हैं। योग (प्रत्याहार)-से इन्द्रियोंके समुदायको जीतकर धारणाद्वारा उन इन्द्रियोंको दृढ़तापूर्वक हृदयमें धारण कर लेनेके पश्चात् साधक उन परमात्माका ध्यान करे, जो सबका धारण-पोषण करनेवाले हैं और जो कभी अपनी महिमासे च्युत नहीं होते। सम्पूर्ण विश्व उन्हींका स्वरूप है। वे सर्वत्र व्यापक होनेसे विष्णु कहलाते हैं। समस्त लोकोंके एकमात्र कारण वे ही हैं। उनके नेत्र विकसित कमलदलके समान सुशोभित हैं। मनोहर कुण्डल उनके कानोंकी शोभा बढ़ाते हैं। उनकी भुजाएँ विशाल हैं। अङ्ग-अङ्गसे उदारता सूचित होती है। सब प्रकारके आभूषण उनके सुन्दर विग्रहकी शोभा बढ़ाते हैं। उन्होंने पीताम्बर धारण कर रखा है। वे दिव्यशक्तिसे सम्पन्न हैं। उन्होंने स्वर्णमय यज्ञोपवीत धारण किया है। गलेमें तुलसीकी माला पहन रखी है। कौस्तुभमणिसे उनकी शोभा और बढ़ गयी है। वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न सुशोभित है। देवता और असुर सभी भगवान्‌के चरणोंमें मस्तक नवा रहे हैं। बारह अंगुल विस्तृत तथा आठ दलोंसे विभूषित अपने हृदयकमलके आसनपर विराजमान सर्वव्यापी अव्यक्तस्वरूप परात्पर परमात्माका उपर्युक्तरूपसे ध्यान करना चाहिये। ध्येय वस्तुमें चित्तकी वृत्तिका एकाकार हो जाना ही साधु पुरुषोंद्वारा 'ध्यान' कहा गया है। दो घड़ी ध्यान करके भी मनुष्य परम मोक्षको प्राप्त कर लेता है। ध्यानसे पाप नष्ट होते हैं।

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust. MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

ध्यानसे मोक्ष मिलता है। ध्यानसे भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं तथा ध्यानसे सम्पूर्ण मनोरथोंकी सिद्धि हो जाती है*। भगवान् महाविष्णुके जो-जो स्वरूप हैं, उनमेंसे किसीका भी एकाग्रतापूर्वक ध्यान करे। उस ध्यानसे संतुष्ट होकर भगवान् विष्णु निश्चय ही मोक्ष देते हैं। साधुशिरोमणे! ध्येय वस्तुमें मनको इस प्रकार स्थिर कर देना चाहिये कि ध्याता, ध्यान और ध्येयकी त्रिपुटीका तनिक भी भान न रह जाय। तब ज्ञानरूपी अमृतके सेवनसे अमृतत्व (परमात्मा)-को प्राप्त होता है।

निरन्तर ध्यान करनेसे ध्येय वस्तुके साथ अपना अभेदभाव स्पष्ट अनुभव हो जाता है। जिसकी सब इन्द्रियाँ विषयोंसे निवृत्त हो जाती हैं और वह परमानन्दसे पूर्ण हो वायुशून्य स्थानमें जलते हुए दीपककी भाँति अविचलभावसे ध्यानमें स्थित हो जाता है, तो उसकी इस ध्येयाकार स्थितिको 'समाधि' कहते हैं। नारदजी! योगी पुरुष समाधि-अवस्थामें न देखता है, न सुनता है, न सूँघता है, न स्पर्श करता है और न वह कुछ बोलता ही है। उस अवस्थामें योगियोंको सम्पूर्ण उपाधियोंसे मुक्त, शुद्ध, निर्मल, सच्चिदानन्दस्वरूप तथा अविचल आत्माका साक्षात्कार होता है। विद्वान् नारदजी! यह आत्मा परम ज्योतिर्मय तथा अमेय है। जो मायाके अधीन हैं, उन्हींको वह मायायुक्त-सा प्रतीत होता है। उस मायाका निवारण होनेपर वह निर्मल ब्रह्मरूपसे प्रकाशित होता है। वह ब्रह्म एक, अद्वितीय, परमज्योतिःस्वरूप, निरञ्जन तथा सम्पूर्ण प्राणियोंके अन्तर्यामी आत्मारूपसे स्थित है। परमात्मा सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म और महान्‌से भी अत्यन्त महान् है। वह सनातन परमेश्वर समस्त विश्वका कारण है। ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ पुरुष परम पवित्र परात्पर ब्रह्मरूपमें उसका दर्शन करते हैं। अकारसे लेकर हकारतकके भिन्न-भिन्न वर्णोंके रूपमें स्थित अनादि पुराणपुरुष परमात्माको ही शब्दब्रह्म कहा गया है और जो विशुद्ध, अक्षर, नित्य, पूर्ण, हृदयाकाशके मध्य विराजमान अथवा आकाशमें व्याप्त, आनन्दमय, निर्मल एवं शान्त तत्त्व है, उसीको 'परब्रह्म परमात्मा' कहते हैं, योगीलोग अपने हृदयमें जिन अजन्मा, शुद्ध, विकाररहित, सनातन परमात्माका दर्शन करते हैं, उन्हींका नाम परब्रह्म है।

मुनिश्रेष्ठ! अब दूसरा ध्यान बतलाता हूँ, सुनो। परमात्माका यह ध्यान संसार-तापसे संतप्त मनुष्योंको अमृतकी वर्षाके समान शान्ति प्रदान करनेवाला है। परमानन्दस्वरूप भगवान् नारायण प्रणवमें स्थित हैं—ऐसा चिन्तन करे। उनकी

कहीं उपमा नहीं है। वे प्रणवकी अर्धमात्राके ऊपर विराजमान नादस्वरूप हैं। अकार ब्रह्माजीका रूप है, उकार भगवान् विष्णुका स्वरूप है,

*ध्यानात्पापानि नश्यन्ति ध्यानान्मोक्षं च विन्दति। ध्यानात्प्रसीदति हरिर्ध्यानात्सर्वार्थसाधनम्॥
(ना० पूर्व० ३३। १३९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मकार रुद्ररूप है तथा अर्धमात्रा निर्गुण परब्रह्म परमात्मस्वरूप है। अकार, उकार और मकार—ये प्रणवकी तीन मात्राएँ कही गयी हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव—ये तीन क्रमशः उनके देवता हैं। इन सबका समुच्चयरूप जो ॐकार है, वह परब्रह्म परमात्माका बोध करानेवाला है। परब्रह्म परमात्मा वाच्य हैं और प्रणव उनका वाचक माना गया है। नारदजी! इन दोनोंमें वाच्य-वाचक-सम्बन्ध उपचारसे ही कहा गया है। जो प्रतिदिन प्रणवका जप करते हैं, वे सम्पूर्ण पातकोंसे मुक्त हो जाते हैं तथा जो निरन्तर उसीके अभ्यासमें लगे रहते हैं, वे परम मोक्ष पाते हैं। जो ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूप प्रणव-मन्त्रका जप करता है, उसे अपने अन्तःकरणमें कोटि-कोटि सूर्योंके समान निर्मल तेजका ध्यान करना चाहिये अथवा प्रणव-जपके समय शालग्रामशिला या किसी भगवत्प्रतिमाके स्वरूपका ध्यान करना चाहिये। अथवा जो-जो पापनाशक तीर्थादिक वस्तु है, उसी-उसीका अपने हृदयमें चिन्तन करना चाहिये। मुनीश्वर! यह वैष्णवज्ञान तुम्हें बताया गया है। इसे जानकर योगीश्वर पुरुष उत्तम मोक्ष पा लेता है। जो एकाग्रचित्त होकर इस प्रसंगको पढ़ता अथवा सुनता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुका सालोक्य प्राप्त कर लेता है।

भवबन्धनसे मुक्तिके लिये भगवान् विष्णुके भजनका उपदेश

नारदजीने कहा—हे सर्वज्ञ महामुने! सबके स्वामी देवदेव भगवान् जनार्दन जिस प्रकार संतुष्ट होते हैं, वह उपाय मुझे बताइये।

श्रीसनकजी बोले—नारदजी! यदि मुक्ति चाहते हो तो सच्चिदानन्दस्वरूप परमदेव भगवान् नारायणका सम्पूर्ण चित्तसे भजन करो। भगवान् विष्णुकी शरण लेनेवाले मनुष्यको शत्रु मार नहीं सकते, ग्रह पीड़ा नहीं दे सकते तथा राक्षस उसकी ओर आँख उठाकर देख नहीं सकते। भगवान् जनार्दनमें जिसकी दृढ़ भक्ति है, उसके सम्पूर्ण श्रेय सिद्ध हो जाते हैं। अतः भक्त पुरुष सबसे बढ़कर है। मनुष्योंके उन्हीं पैरोंको सफल जानना चाहिये, जो भगवान् विष्णुके मन्दिरमें दर्शनके लिये जाते हैं। उन्हीं हाथोंको सफल समझना चाहिये, जो भगवान् विष्णुकी पूजामें तत्पर होते हैं। पुरुषोंके उन्हीं नेत्रोंको पूर्णतः सफल जानना चाहिये, जो भगवान् जनार्दनका दर्शन करते हैं। साधुपुरुषोंने उसी जिह्वाको सफल बताया है, जो निरन्तर हरिनामके जप और कीर्तनमें लगी रहती है। मैं सत्य कहता हूँ, हितकी बात कहता हूँ और बार-बार सम्पूर्ण

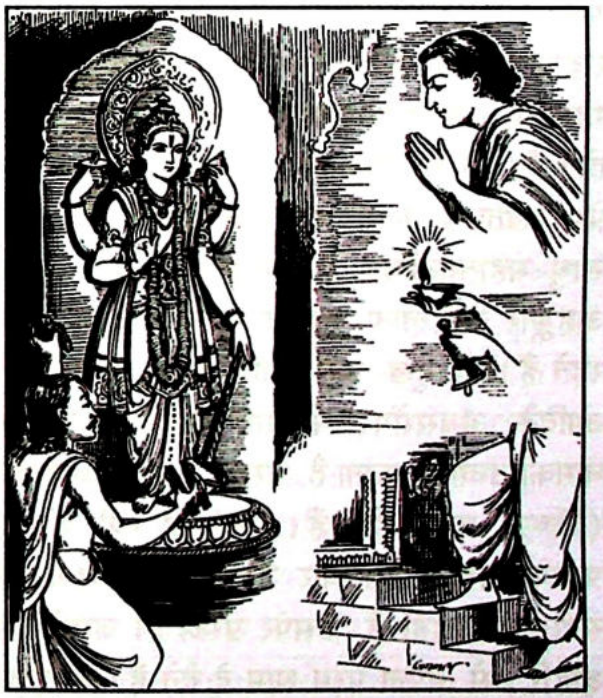

शास्त्रोंका सार बतलाता हूँ—इस असार संसारमें केवल श्रीहरिकी आराधना ही सत्य है। यह संसारबन्धन अत्यन्त दृढ़ है और महान् मोहमें डालनेवाला है। भगवद्भक्तिरूपी कुठारसे इसको काटकर अत्यन्त सुखी हो जाओ। वही मन सार्थक है, जो भगवान् विष्णुके चिन्तनमें लगता है, तथा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वे ही दोनों कान समस्त जगत्के लिये वन्दनीय हैं, जो भगवत्कथाकी सुधाधारासे परिपूर्ण रहते हैं। नारदजी! जो आनन्दस्वरूप, अक्षर एवं जाग्रत् आदि तीनों अवस्थाओंसे रहित तथा हृदयमें विराजमान हैं, उन्हीं भगवान्का तुम निरन्तर भजन करो। मुनिश्रेष्ठ! जिनका अन्तःकरण शुद्ध नहीं है—ऐसे लोग भगवान्के स्थान या स्वरूपका न तो वर्णन कर सकते हैं और न दर्शन ही। विप्रवर! यह स्थावर-जंगमरूप जगत् केवल भावनामय है और बिजलीके समान चञ्चल है। अतः इसकी ओरसे विरक्त होकर भगवान् जनार्दनका भजन करो।

जिनमें अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह विद्यमान हैं, उन्हींपर जगदीश्वर श्रीहरि संतुष्ट होते हैं। जो सम्पूर्ण प्राणियोंके प्रति दयाभाव रखता है और ब्राह्मणोंके आदर-सत्कारमें तत्पर रहता है, उसपर जगदीश्वर भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं। जो भगवान् और उनके भक्तोंकी कथामें प्रेम रखता है, स्वयं भगवान्की कथा कहता है, साधु-महात्माओंका संग करता है और मनमें अहङ्कार नहीं लाता, उसपर भगवान् विष्णु प्रसन्न रहते हैं। जो भूख-प्यास और लड़खड़ाकर गिरने आदिके अवसरोंपर भी सदा भगवान् विष्णुके नामका उच्चारण करता है, उसपर भगवान् अधोक्षज (विष्णु) प्रसन्न होते हैं। मुने! जो स्त्री पतिको प्राणके समान समझकर उनके आदर-सत्कारमें सदा लगी रहती है, उसपर प्रसन्न हो जगदीश्वर श्रीहरि उसे अपना परम धाम दे देते हैं। जो ईर्ष्या तथा दोषदृष्टिसे रहित होकर अहङ्कारसे दूर रहते हैं और सदा देवाराधन किया करते हैं, उनपर भगवान् केशव प्रसन्न होते हैं। अतः देवर्षे! सुनो, तुम सदा श्रीहरिका भजन करो। शरीर मृत्युसे जुड़ा हुआ है। जीवन अत्यन्त चञ्चल है। धनपर राजा आदिके द्वारा बराबर बाधा आती रहती है और सम्पत्तियाँ क्षणभरमें नष्ट हो जानेवाली हैं। देवर्षे! क्या तुम नहीं देखते कि आधी आयु तो नींदसे ही नष्ट हो जाती है और कुछ आयु भोजन आदिमें समाप्त हो जाती है। आयुका कुछ भाग बचपनमें, कुछ विषय-भोगोंमें और कुछ बुढ़ापेमें व्यर्थ बीत जाता है। फिर तुम धर्मका आचरण कब करोगे? बचपन और बुढ़ापेमें भगवान्की आराधना नहीं हो सकती, अतः अहङ्कार छोड़कर युवावस्थामें ही धर्मोंका अनुष्ठान करना चाहिये। मुने! यह शरीर मृत्युका निवासस्थान और आपत्तियोंका सबसे बड़ा अड्डा है। शरीर रोगोंका घर है। यह मल आदिसे सदा दूषित रहता है। फिर मनुष्य इसे सदा रहनेवाला समझकर व्यर्थ पाप क्यों करते हैं। यह संसार असार है। इसमें नाना प्रकारके दुःख भरे हुए हैं। निश्चय ही यह मृत्युसे व्याप्त है, अतः इसपर विश्वास नहीं करना चाहिये। इसलिये विप्रवर! सुनो, मैं यह सत्य कहता हूँ—देह-बन्धनकी निवृत्तिके लिये भगवान् विष्णुकी ही पूजा करनी चाहिये। अभिमान और लोभ त्यागकर काम-क्रोधसे रहित होकर सदा भगवान् विष्णुका भजन करो; क्योंकि मनुष्यजन्म अत्यन्त दुर्लभ है।

सत्तम! (अधिकांश) जीवोंको कोटि सहस्र जन्मोंतक स्थावर आदि योनियोंमें भटकनेके बाद कभी किसी प्रकार मनुष्य-शरीर मिलता है। साधु-शिरोमणे! मनुष्य-जन्ममें भी देवाराधनकी बुद्धि, दानकी बुद्धि और योगसाधनाकी बुद्धिका प्राप्त होना मनुष्योंके पूर्वजन्मकी तपस्याका फल है। जो दुर्लभ मानव-शरीर पाकर एक बार भी श्रीहरिकी पूजा नहीं करता, उससे बढ़कर मूर्ख, जड़बुद्धि कौन है? दुर्लभ मानव-जन्म पाकर जो भगवान् विष्णुकी पूजा नहीं करते, उन महामूर्ख मनुष्योंमें विवेक कहाँ है? ब्रह्मन्! जगदीश्वर भगवान् विष्णु आराधना करनेपर मनोवाञ्छित फल देते हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

फिर संसार-रूप अग्निमें जला हुआ कौन मानव उनकी पूजा नहीं करेगा? मुनिश्रेष्ठ! विष्णुभक्त चाण्डाल भी भक्तिहीन द्विजसे बढ़कर है। अतः काम, क्रोध आदिको त्यागकर अविनाशी भगवान् नारायणका भजन करना चाहिये। उनके प्रसन्न होनेपर सब संतुष्ट होते हैं; क्योंकि वे भगवान् श्रीहरि ही सबके भीतर विद्यमान हैं। जैसे सम्पूर्ण स्थावर-जङ्गम जगत् आकाशसे व्याप्त हैं, उसी प्रकार इस चराचर विश्वको भगवान् विष्णुने व्याप्त कर रखा है। भगवान् विष्णुके भजनसे जन्म और मृत्यु दोनोंका नाश हो जाता है। ध्यान, स्मरण, पूजन अथवा प्रणाममात्र कर लेनेपर भगवान् जनार्दन जीवके संसारबन्धनको काट देते हैं। ब्रह्मर्षे! उनके नामका उच्चारण करनेमात्रसे महापातकोंका नाश हो जाता है और उनकी विधिपूर्वक पूजा करके तो मनुष्य मोक्षका भागी होता है। ब्रह्मन्! यह बड़े आश्चर्यकी बात है, बड़ी अद्भुत बात है और बड़ी विचित्र बात है कि भगवान् विष्णुके नामके रहते हुए भी लोग जन्म-मृत्युरूप संसारमें चक्कर काटते हैं[1]। जबतक इन्द्रियाँ शिथिल नहीं होतीं और जबतक रोग-व्याधि नहीं सताते, तभीतक भगवान् विष्णुकी आराधना कर लेनी चाहिये। जीव जब माताके गर्भसे निकलता है, तभी मृत्यु उसके साथ हो लेती है। अतः सबको धर्मपालनमें लग जाना चाहिये। अहो! बड़े कष्टकी बात है, बड़े कष्टकी बात है, बड़े कष्टकी बात है कि यह जीव इस शरीरको नाशवान् समझकर भी धर्मका आचरण नहीं करता।

नारदजी! बाँह उठाकर यह सत्य-सत्य और पुनः सत्य बात दुहरायी जाती है कि पाखण्डपूर्ण आचरणका त्याग करके मनुष्य भगवान् वासुदेवकी आराधनामें लग जाय। क्रोध मानसिक संतापका कारण है। क्रोध संसारबन्धनमें डालनेवाला है और क्रोध सब धर्मोंका नाश करनेवाला है। अतः क्रोधको छोड़ देना चाहिये। काम इस जन्मका मूल कारण है, काम पाप करानेमें हेतु है और काम यशका नाश करनेवाला है। अतः कामको भी त्याग देना चाहिये। मात्सर्य समस्त दुःख-समुदायका कारण माना गया है, वह नरकोंका भी साधन है, अतः उसे भी त्याग देना चाहिये[2]। मन ही मनुष्योंके बन्धन और मोक्षका कारण है। अतः मनको परमात्मामें लगाकर सुखी हो जाना चाहिये। अहो! मनुष्योंका धैर्य कितना अद्भुत, कितना विचित्र तथा कितना आश्चर्यजनक है कि जगदीश्वर भगवान् विष्णुके होते हुए भी वे मदसे उन्मत्त होकर उनका भजन नहीं करते हैं[3]। सबका धारण-पोषण करनेवाले जगदीश्वर भगवान् अच्युतकी आराधना किये बिना संसार-सागरमें डूबे हुए मनुष्य कैसे पार जा सकेंगे? अच्युत, अनन्त और गोविन्द—इन नामोंके उच्चारणरूप औषधसे सब रोग नष्ट हो जाते हैं। यह मैं सत्य कहता हूँ, सत्य कहता हूँ[4]। जो लोग नारायण! जगन्नाथ! वासुदेव! जनार्दन! आदि नामोंका नित्य उच्चारण किया करते हैं, वे सर्वत्र वन्दनीय हैं। देवर्षे! दुष्ट चित्तवाले

१. अहो चित्रमहो चित्रमहो चित्रमिदं द्विज। हरिनाम्नि स्थिते लोकः संसारे परिवर्तते॥ (ना० पूर्व० ३४।४८)

२. काममूलमिदं जन्म कामः पापस्य कारणम्। यशःक्षयकरः कामस्तस्मात्तं परिवर्जयेत्॥
समस्तदुःखजालानां मात्सर्यं कारणंस्मृतम्। नरकाणां साधनं च तस्मात्तदपि संत्यजेत्॥
(ना० पूर्व० ३४।५६-५७)

३. अहो धैर्यमहो धैर्यमहो धैर्यमहो नृणाम्। विष्णौ स्थिते जगन्नाथे न भजन्ति मदोद्धताः॥
(ना० पूर्व० ३४।५९)

४. अच्युतानन्तगोविन्दनामोच्चारणभेषजात् । नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥
(ना० पू० ३४।६१)

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth